UNIVERSAL
LIBRARY

OU_178912

UNIVERSAL
LIBRARY

सरस्वती-सिरीज़ नं० ५८

घर का भेदिया

रामप्रसाद दुबे

सर्वोदय साहित्य [illegible]
हुसैनी अलम रोड, हैदराबाद (दक्षिण).

प्रकाशक
इंडियन प्रेस लिमिटेड
प्रयाग

सरस्वती-सिरीज़

D

स्थायी परामर्शदाता—डा० भगवानदास, पण्डित अमरनाथ झा, भाई परमानंद, डा० प्राणनाथ विद्यालङ्कार, श्री सत्यदेव विद्यालङ्कार, पं० द्वारिकाप्रसाद मिश्र, संत निहालसिंह, पं० लक्ष्मणनारायण गर्दे, बाबू संपूर्णानन्द, श्री बाबूराव विष्णुपराड़कर, पण्डित केदारनाथ भट्ट, ब्योहार राजेन्द्रसिंह, श्री पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, श्री जैनेन्द्र कुमार, बाबू वृन्दावनलाल वर्मा, सेठ गोविन्ददास, पण्डित क्षेत्रेश चटर्जी, डा० ईश्वरीप्रसाद, डा० रमाशंकर त्रिपाठी, डा० परमात्माशरण, डा० बेनीप्रसाद, डा० रामप्रसाद त्रिपाठी, पण्डित रामनारायण मिश्र, श्री संतराम, पण्डित रामचन्द्र शर्मा, श्री महेशप्रसाद मौलवी फ़ाज़िल, श्री रायकृष्णदास, बाबू गोपालराम गहमरी, श्री उपेन्द्रनाथ "अश्क", डा० ताराचंद, श्री चन्द्रगुप्त विद्यालङ्कार, डा० गोरखप्रसाद, डा० सत्यप्रकाश, श्री अनुकूलचन्द्र मुकर्जी, रायसाहब पण्डित श्रीनारायण चतुर्वेदी, रायबहादुर बाबू श्यामसुन्दरदास, पण्डित सुमित्रानन्दन पंत, पं० सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', पं० नन्ददुलारे वाजपेयी, पं० हजारीप्रसाद द्विवेदी, पण्डित मोहनलाल महतो, श्रीमती महादेवी वर्मा, पण्डित अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', डा० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल, डा० धीरेन्द्र वर्मा, बाबू रामचन्द्र टंडन, पण्डित केशवप्रसाद मिश्र, बाबू कालिदास कपूर, इत्यादि, इत्यादि।

Checked 1969

रहस्य-रोमांच

घर का भेदिया

साङ्गोपाङ्जा की सनसनीदार कार्यवाहियों का भंडाफोड़

रामप्रसाद दुबे

Printed and published by K. Mittra at The Indian Press Ltd., Allahabad.

१

कई वर्ष पहले, 'वर्तमान संसार' के पहली जनवरी के अंक में, नीचे लिखा समाचार छपा था—

कुछ दिन हुए सुप्रसिद्ध चित्रकार मिस्टर राधाकृष्ण वर्मा के चित्रालय में उनकी परम मित्र रानी श्रीमती लीलावती मेहता की लाश मिली थी। रानी साहबा की लाश की बग़ल में ही, बेहोशी की हालत में, राधाकृष्ण भी पड़े हुए थे। यह बेहोशी किसी तीच्ण मादक पदार्थ के इस्तेमाल से हुई थी। डाक्टर का कहना है कि रानी साहबा को या तो किसी ने विष देकर मार डाला है या उन्होंने ख़ुद ही विष खाकर आत्म-हत्या कर ली है।

डाक्टर ने सावधानी से राधाकृष्ण का इलाज किया, जिससे कुछ मिनटों में उनकी बेहोशी जाती रही। फिर पुलिस ने उनका बयान लिया, पर उस पर उसे यक़ीन नहीं हुआ। इससे वे चटपट गिरफ़ार कर लिये गये। इस मामले में पुलिस कुछ बतलाना भी नहीं चाहती। अस्तु।

हमने अपने एक विशेष संवाददाता को इस मामले का पता लगाने को नियुक्त किया था। उन्होंने इसकी जाँच-पड़ताल की है। उसका विवरण यह है—

आज सबेरे कोई छः बजे चित्रकार श्री राधाकृष्ण की नौकरनी रधिया काम करने के लिए उनके घर पर गई। घर के निचले हिस्से में बहुत देर तक उसने सफ़ाई इत्यादि का काम किया। फिर भी मकान के ऊपर-वाले हिस्से की ओर से, जिसमें उसके मालिक रहते थे, किसी क़िस्म की आहट नहीं मिली। इस पर उसे आश्चर्य हुआ; क्योंकि उसके मालिक इतनी देर तक कभी नहीं सोते थे। रधिया ने सोचा, चलकर मालिक को जगा दें। जिस कमरे में राधाकृष्ण सोया करते थे, उसमें जाने के लिए सिर्फ़ एक ही रास्ता था चित्रालय के भीतर से होकर। लाचार, चित्रालय

का परदा ज़रा सा खिसकाकर वह ज्यों ही भीतर घुसी कि डर के मारे उलटे पैरों लौट आई।

चित्रालय के भीतर की दशा बहुत ही अस्त-व्यस्त थी। सब चीज़ें इधर-उधर बिखरी हुई थीं। फ़र्श पर, बीच में, जिस व्यक्ति का शरीर निश्चेष्ट पड़ा हुआ था, वे थीं रानी साहबा श्रीमती लीलावती मेहता। उन्हीं के पास, एक आराम-कुर्सी पर, चित्रकार राधाकृष्ण पड़े थे।

रधिया अब सब कुछ समझ गई। वह चिल्लाती हुई सीढ़ी से नीचे उतर आई। उसकी चिल्लाहट सुनकर फाटक पर रहनेवाला पहरेदार और मुहल्ले के भी बहुत से आदमी वहाँ आ पहुँचे।

इस घटना पर लोग तरह-तरह की राय प्रकट करने लगे। किसी ने कहा—"एकाएक इनकी मृत्यु हुई है।" कोई कहता था—"किसी ने इन्हें मार डाला है।" किसी की सम्मति थी—"इन्होंने अपनी हत्या ख़ुद कर डाली है।" भीड़ में से कुछ आदमी नज़दीक के पुलिस-स्टेशन में इस दुर्घटना की ख़बर देने चले गये।

यह मकान बड़ी सड़क से कुछ दूर, भीतर की ओर, था और ऊँची चहारदीवारी से घिरा था। कोई दो वर्ष हुए, चित्रकार श्री राधाकृष्ण इसे किराये पर लेकर अपनी बहन निर्मलादेवी के साथ इसमें रहने लगे। इधर कोई तीन सप्ताह से उनकी बहन कृष्णनगर चली गई थीं और वे इसमें अकेले ही रहते थे।

श्री राधाकृष्ण बड़े मेहनती और भले आदमी थे। कला-संसार में उनकी अच्छी ख्याति थी। इन दोनों भाई-बहन में सच्चा स्नेह था। रानी साहबा अकसर राधाकृष्ण के घर आया करती थीं। वे तरह-तरह से चित्रकारों की सहायता करती रहती थीं। इसी नाते इन भाई-बहन को भी वे बहुत चाहती थीं।

पुलिस के दारोग़ा ने घटना-स्थल पर पहुँचकर मुहल्ले के मुखिय और नौकरनी के साथ मकान के भीतर जाकर जाँच की। कमरे में घुसते ही दारोग़ा ने फ़र्श पर कुछ ऐसे निशान ढूँढ़ निकाले जिनसे प्रतीत होत

था जैसे कमरे की कुछ बड़ी-बड़ी चीज़ें कोई घसीटकर ले गया हो। वहाँ पर किसी कड़वी तेज़ दवा की बू आ रही थी जिससे दम घुटा जाता था।

दारोग़ा साहब नौकरानी से पूछ-ताछ कर रहे थे कि डाक्टर भी आ पहुँचे। पहले उन्होंने रानी साहबा की नाड़ी इत्यादि की परीक्षा की। सब देख चुकने पर वे बोले—"इनको मरे तो देर हो गई।" इसके बाद वे राधाकृष्ण की निश्चल देह पर हाथ रखकर बोले—"इन्हें उठाकर लिटाइए तो ज़रा। जान पड़ता है, अभी ये बच सकते हैं।"

दारोग़ा की मदद से डाक्टर चौधरी ने राधाकृष्ण को ले जाकर उनके विश्राम-गृह में पलँग पर लिटा दिया। अब उन्होंने कहा—"इन्हें इस वक़्त स्वच्छ हवा की अत्यन्त आवश्यकता है। सब खिड़कियाँ और जँगले खोल दिये जायँ।

थोड़ी देर में राधाकृष्ण की चेतना-शक्ति लौटने लगी। जान पड़ता था, वे अर्धनिद्रित हैं और कोई स्वप्न देख रहे हैं। इसके बाद वे एक बार आँखें मींचकर ताकने लगे और फिर कुछ ही मिनटों में होश में आकर उठ बैठे।

अब दारोग़ा, डाक्टर की राय से, राधाकृष्ण के पलँग के बग़ल में जा बैठे। डाक्टर ने राधाकृष्ण के माथे पर हाथ फेरते हुए मधुर स्वर में कहा—"हाँ, अब सारा मामला हम लोगों को साफ़-साफ़ बतलाइए तो सही।"

राधाकृष्ण कहने लगे—"कल शाम को मैं आराम-कुर्सी पर लेटा हुआ एक किताब पढ़ रहा था। दिन भर पढ़ते-पढ़ते तबियत कुछ थक गई थी। एकाएक देखता हूँ कि काले-काले नक़ाब पहने हुए कुछ आदमियों ने मुझे घेर लिया है। उनसे अपना बचाव करने का मौक़ा भी मुझे नहीं मिला। बात की बात में वे लोग मुझ पर टूट पड़े और उन्होंने मेरे हाथ-पैर रस्सियों से कसकर बाँध दिये। मेरे मुँह में उन्होंने कपड़ा ठूँस दिया। फिर सुई जैसी किसी चीज़ को उन्होंने मेरे हाथ-पाँव में चुभो दिया। मेरी आँखों में नींद की ख़ुमारी सी मालूम पड़ने लगी। फिर मुझे होश नहीं रहा।"

इतने में मुखिया ने दारोग़ा साहब को यह कहकर एक चिट्ठी दी कि वह उन्हें राधाकृष्ण की आराम-कुर्सी के नीचे पड़ी मिली थी। यह चिट्ठी राधाकृष्ण ने लिखी थी और इसमें रानी साहबा को अपने घर बुलाने की प्रार्थना की थी।

अब डाक्टर ने राधाकृष्ण को दारोग़ा का परिचय दिया। राधाकृष्ण उच्च स्वर से बोले—"दारोग़ा साहब! कल की रात मुझ पर जो बीती है, उस रहस्यमय मामले का पता लगाने में आप मेरी कुछ मदद कर सकेंगे?"

लेकिन दारोग़ा अब तक राधाकृष्ण के चेहरे की ओर तेज़ निगाहों से देख रहे थे। उन्होंने राधाकृष्ण से कहा—"कल शाम को क्या आप मकान में अकेले ही थे? ऐसा कोई आदमी कल आपके यहाँ नहीं आया था, जिसे आपने बुला भेजा था?"

आश्चर्य-व्यञ्जक भाव से दारोग़ा की ओर देखकर राधाकृष्ण ने जवाब दिया—"नहीं तो!"

"अच्छा, तो मुझको—" दारोग़ा ने एकाएक ज़रा रुककर डाक्टर के कानों में कुछ कहा और उन्हें अकेले में ले जाकर पूछा—"डाक्टर साहब, अगर एकाएक दिल पर चोट पहुँचानेवाली कोई बात इन्हें सुनाई जाय तो ये सह सकेंगे न?"

डाक्टर ने राधाकृष्ण के मुँह की ओर देखकर कहा—"अब आप जो चाहें पूछें।"

इन लोगों के गुप्त परामर्श से राधाकृष्ण को बेचैनी हो रही थी। उनकी घबराहट यहाँ तक बढ़ गई कि वे अब अपने को रोक नहीं सके और बिना किसी का सहारा लिये ही उठ बैठे।

दारोग़ा ने कहा—"आप धीरे धीरे चित्रालय में चलकर बैठें।"

राधाकृष्ण ने चुपचाप उनकी आज्ञा का पालन किया। लेकिन चित्रालय की देहली पर पैर रखते ही वे आश्चर्य से स्तब्ध रह गये। उलटे पैरों वे अपनी पहले की जगह लौट आये। उनका सारा शरीर

थर-थर काँपने लगा। एक आतङ्कमय आवेग से मानों उनकी आँखें बाहर निकली पड़ती थीं।

कई मिनटों के बाद राधाकृष्ण ने टूटी हुई आवाज़ से कहा—"हाय! रानी—रानी लीलावती—कैसी आश्चर्यजनक दुर्घटना!"

दारोग़ा ने कड़े स्वर में कहा—"रानी साहबा की हत्या के बारे में आपका क्या वक्तव्य है?"

राधाकृष्ण ने भर्राई हुई आवाज़ से कहा—"न, मुझे तो कुछ भी ज्ञात नहीं है।"

"क्या आपने उन्हें पत्र भेजकर अपने यहाँ नहीं बुलाया था?"

राधाकृष्ण ने कहा—"दारोग़ा साहब! मैं आपकी बात माने लेता हूँ। लेकिन मेरा यह ख़याल नहीं था।—मुझे पता नहीं था—"

राधाकृष्ण बेहोश होते जा रहे थे। डाक्टर ने उन्हें पकड़कर एक कुर्सी पर बिठा दिया।

अब दारोग़ा ने इस कमरे की तलाशी लेनी शुरू कर दी। दीवाल से सटी हुई लकड़ी की एक आलमारी थी। उसमें कुछ शीशियों में कई तरह के विषों का चूर्ण मिला। हर एक शीशी पर काग़ज़ की चिट लगी थी, जिस पर विष का नाम लिखा था। दारोग़ा ने धीमे स्वर में—इतने धीमे स्वर में कि राधाकृष्ण न सुन सकें—डाक्टर से कहा—"आपका क्या ख़याल है? क्या रानी लीलावती की मृत्यु विष-प्रयोग से हुई है?"

"मुझे तो कुछ ऐसा ही जान पड़ता है। फिर भी इसका पूरा ब्योरा शव-व्यवच्छेद से मालूम होगा।"

दारोग़ा ने राधाकृष्ण को गिरफ़्तार कर लिया।

हम लोगों की जाँच-पड़ताल—पुलिस की चुप्पी—हत्या जिस उद्देश्य से हुई उसका अन्दाज़ा

राधाकृष्ण की पहली बात कि कुछ बदमाश लोगों ने एकाएक उनके ऊपर हमला कर उन्हें बेहोश कर डाला, यों तो सच मालूम होती है

लेकिन तनिक ध्यान से देखने पर बिलकुल ग़लत है। आक्रमणकारी हत्यारे किसी के घर धावा करने पर मालिक को सिर्फ़ बेहोश करके नहीं छोड़ देते। काम पड़ने पर वे उसकी हत्या तक करने में नहीं हिचकते। इसके सिवा राधाकृष्ण के घर की कोई भी चीज़ चोरी नहीं गई। इससे यह नहीं जान पड़ता कि चोरी या डकैती की नीयत से यह हत्या हुई है। प्रमाणों से पता चलता है कि उस समय रानी लीलावती भी उनके घर पर मौजूद थीं।

यहाँ पर हम अपने पाठकों को और एक हत्या के षड्यन्त्र की याद दिला देना चाहते हैं। उसमें भी रानी लीलावती और राधाकृष्ण के नामों का सम्बन्ध है।

कुछ दिनों पहले प्रसिद्ध तअल्लुक़ेदार श्री रामकुमार सिंह की हत्या हुई थी। उसका भेद अब तक नहीं खुला। हमारे समाज के कुछ ऊँचे दर्जे के लोगों के नाम भी उसमें सुने गये थे। इन सन्दिग्ध व्यक्तियों में श्रीमती कमला और कृष्णकान्त चतुर्वेदी के नाम मुख्य रूप से उल्लेख-योग्य हैं।

रानी लीलावती तअल्लुक़ेदार श्री रामकुमार सिंह की मित्र थीं और राधाकृष्ण थे तअल्लुक़ेदार महोदय की पत्नी श्रीमती लावण्यलता की एक दूर की रिश्तेवाली स्त्री के बेटे।

शिवनारायण को फाँसी दे दी जाने के साथ ही उस हत्या के षड्यन्त्र को लोग समाप्त हो गया समझते हैं। वर्तमान हत्याकाण्ड के साथ उसका कुछ सम्बन्ध खोजकर अवश्य ही हम भटकना नहीं चाहते, लेकिन फिर भी पिछले हत्याकाण्ड के बहुत से नामों को इस बार भी देखकर हम उसका ज़िक्र किये देते हैं।

पुलिस के पूछने पर श्री राधाकृष्ण ने बताया कि विषों के चूर्णों का उपयोग वे बहुत दिनों में शायद ही एक-आध बार करते हैं। लेकिन जाँच करने से मालूम हुआ कि अभी-अभी विष की एक शीशी खोली गई थी। चूर्ण के कुछ कण भी कमरे के फ़र्श पर गिरे मिले थे। लाश और विष के चूर्ण दोनों की अभी तक भली भाँति परीक्षा नहीं हो पाई

है—वे परीक्षण-गृह में ही हैं। इससे अभी निश्चित रूप से इस विषय में कुछ कहना कठिन है। फिर भी हमारा तो ख़याल है कि राधाकृष्ण ने किसी अज्ञात उद्देश्य से विष देकर रानी लीलावती को मार डाला हो और पुलिस को धोखा देने के लिए उन्होंने अपने शरीर पर सुई से घाव बना लिया हो और बदमाशों के गरोह की कहानी गढ़ ली हो।

बाद की ख़बर

पुलिस ने इस दुर्घटना की ख़बर राधाकृष्ण की बहन निर्मलादेवी को दी है और उन्होंने तार द्वारा सूचना भेजी है कि 'मैं आज रात में ही घर आ जाऊँगी।'

हमें आशा है, कल पाठकों को हम बहुत कुछ नये समाचार बता सकेंगे।

'वर्तमान संसार' के पहले पृष्ठ पर जो विवरण छपा था, उसके नीचे इस प्रकार हस्ताक्षर था—

हरिनारायण त्रिपाठी

२

हरिनारायण त्रिपाठी के हस्ताक्षर से, 'वर्तमान संसार' की पहली जनवरी की संख्या में, जिस हत्यावाले षड्यन्त्र का विवरण छपा था, उससे दो दिन पहले रानी लीलावती मेहता का नवाबगंजवाला महल ख़ूब सजा हुआ था।

शाम के वक़्त रानी लीलावती महल के ऊपर से नीचे बरामदे में उतरीं। उन्होंने कमरे में लगी बिजली की घंटी दबाई। चट नौकर उनके पास आ पहुँचा। रानी ने उससे पूछा—"क्यों रामधन, कोई आदमी शाम को मुझे खोजता हुआ यहाँ आया था?"

"नहीं सरकार!"

"शर्मा-वर्मा बैंक से किसी ने मुझे टेलीफोन तो नहीं किया था ?"

"नहीं हुज़ूर।"

रानी लीलावती के चेहरे पर गहरी उदासी के चिह्न दिखाई देने लगे। उन्होंने नौकर को लक्ष्य कर कहा—"अपनी तैयारी ठीक रक्खो। क़रीब ६ बजे सभी लोग आ जायँगे।"

रामधन ने दुबारा सलाम कर अपना रास्ता लिया। वहाँ से उठकर रानी लीलावती अपने भोजनागार में आ पहुँचीं। कमरे के बीच एक बढ़िया छोटा सा टेबल था, जिस पर साफ़-सुथरी चादर पड़ी हुई थी। टेबल पर तीन आदमियों के बैठने भर को जगह थी। चादर का एक कोना कुछ सिकुड़ गया था। उसी को खींचकर सीधा करने की कोशिश वे कर रही थीं।

इतने में रामधन ने कमरे में आकर नम्रता से कहा—"मिस्टर गुप्त आये हैं। मैंने उन्हें बाहर की बैठक में बिठाया है।"

रानी लीलावती ने कहा—"उनसे कहो मैं अभी आती हूँ।"

रानी साहबा फ़ौरन् बैठक में पहुँचीं। उनके ओठों पर मुसकराहट खेल रही थी। उन्हें देखते ही मिस्टर केदारनाथ गुप्त कुर्सी से उठ खड़े हुए। उन्होंने रानी लीलावती से हाथ मिलाते हुए कहा—"आज तुम्हारी सजावट अजीब है। मानों संसार भर को मोह लेना चाहती हो।"

रानी लीलावती ने लजीली मुसकान के साथ पूछा—"केदारनाथ, तुम्हारी तबियत का क्या हाल है ? तुम्हारा दर्द आजकल कैसा है ?"

दोनों एक कोच पर बैठकर आपस में बातचीत करने लगे। रानी लीलावती के साथ मिस्टर गुप्त की गहरी मित्रता उस समय से है, जब दोनों स्कूल में पढ़ते थे। एकाएक रानी लीलावती से मिस्टर गुप्त ने पूछा—"आज तुम उदास क्यों हो ?"

रानी लीलावती ने लापरवाही के साथ कहा—"मुझे जो चिन्ता इस वक्त है उसका कारण है रुपयों की हानि। लेकिन डरने की कोई बात नहीं है। बहुत जल्द यह बला दूर हो जायगी।"

मिस्टर गुप्त ने सिर हिलाते हुए कहा—"मेरा भी यही अनुमान था।"

रानी लीलावती ने गर्व और स्वाभिमान-सूचक ढँग से कहा—"कल मैंने अपने बैंकर शर्मा-वर्मा से कोई पचास हज़ार रुपये माँगे थे; लेकिन आज तक उन्होंने कुछ भी ख़बर नहीं दी।"

मिस्टर गुप्त ने ज़रा झिड़की-भरे स्वर में कहा—"इतना रुपया तुमने एकमुश्त क्यों माँगा है? क्या फिर सट्टे के कार-बार में उलझ गई हो? मैं तो निश्चित रूप से कह सकता हूँ कि तुम उसी कोयले की खान के शेयर..."

रानी लीलावती ने अस्फुट स्वर से कहा—"मेरा ख़याल था कि शेयरों का भाव धीरे-धीरे बढ़ जायगा।"

मिस्टर केदारनाथ उठ खड़े हुए और कमरे में टहलने लगे। वे एकाएक रानी लीलावती के सामने खड़े होकर बोले—"तुमसे मेरा अनुरोध है कि रुपयों से खिलवाड़ करने से पहले उन लोगों की सलाह ले लिया करो जो ऐसे रोज़गारों के जानकार हैं। शर्मा-वर्मा भी तुम्हें इस मामले में ठीक सलाह दे सकते हैं। ख़ुद मैं भी..."

मिस्टर गुप्त को और कुछ कहने का मौक़ा दिये बिना ही रानी फिर कहने लगीं—"तुम्हें जाने के लिए देर तो नहीं हो रही है? अच्छा, कुछ चिन्ता न करो। मैंने आज कुमारी कनकलता को आमन्त्रित कर रक्खा है।"

केदारनाथ चौंक उठे। बोले—"तुमने उसे निमन्त्रण दिया है! मैं तो समझता था कि उससे तुम्हारी घनिष्ठता नहीं है।"

रानी लीलावती की आँखें चमक उठीं। उन्होंने उदास स्वर से कहा—"कुमारी कनकलता सचमुच ख़ूबसूरत और बुद्धिमती है। लोगों का कहना है कि मिस्टर केदारनाथ गुप्त उसके सौन्दर्य-पाश से छुटकारा नहीं पा सकते।"

इतने में कुमारी कनकलता दरवाज़ा खोलकर भीतर आईं। रानी लीलावती को नमस्कार कर वे बोलीं—"बहन, देर के लिए क्षमा कीजिएगा।" फिर उन्होंने एकाएक मिस्टर केदारनाथ को देख अस्पष्ट स्वर से कहा—"मिस्टर गुप्त, नमस्ते।"

मिस्टर केदारनाथ ने भी जैसे-तैसे नमस्कार किया। इतने में रामधन ने आकर ख़बर दी—"भोजन तैयार है।"

भोजन करते समय रानी लीलावती ने दोनों की ओर देखकर मन ही मन कहा—"क्या ही अच्छा होगा इन दोनों का विवाह !"

कोई दस बजे वे लोग खा-पीकर फिर बैठक में आ गये। प्राय: एक घण्टे बाद कनकलता चलने को उठ खड़ी हुईं। रानी लीलावती ने मिस्टर गुप्त से कहा—"रात ज़्यादा हो गई है। तुम घर तक इन्हें पहुँचा आओ।"

कुमारी कनकलता के साथ मिस्टर केदारनाथ बाहर निकले और मोटरकार पर सवार हो चल दिये। रानी लीलावती को पता तक नहीं चला, उनके गालों को सिक्त करते हुए कई बूँद आँसू नीचे टपक पड़े। इतने में दरवाज़ा खोलने के लिए किसी ने किवाड़ों पर हाथ रक्खा। उन्होंने चटपट आँखों के आँसू पोंछ लिये और गम्भीरता-व्यंजक स्वर में कहा—"भीतर आओ।"

दो पत्र लिये रामधन भीतर आया। रानी लीलावती ने उससे कहा—"अब मुझे नौकरनी की ज़रूरत न पड़ेगी। कोई मुझे दिक़ न करे।"

सुस्त होकर वे पलँग पर बैठ गईं। उन्होंने एक पत्र उठाकर मन ही मन कहा—"जान पड़ता है, यह राधाकृष्ण का है।" पत्र को पूरा पढ़ चुकने पर उन्होंने अस्पष्ट स्वर में कहा—"जान पड़ता है, दो-एक दिन में ही उसके पास एक बार जाना होगा।" दूसरा पत्र बैङ्कर शर्मा-वर्मा का था जो लम्बा था। उसे पढ़ चुकने पर वे मर्माहत सी होकर बोलीं—"ईश्वर ! तूने मुझे एकबारगी डुबो दिया !" आँसुओं का वेग रोके न रुकता था। सारे महल में सन्नाटा छाया हुआ था।

× × × ×

रात समाप्त होने में कोई दो घण्टे और हैं। इस समय भी रानी लीलावती, प्रकाश से जगमगाते हुए अपने महल में बैठी, शर्मा-वर्मा के पत्र का उत्तर लिख रही थीं।

३

दिन के दस बजे हैं। 'वर्तमान संसार' के दफ़्तर में लेखक लोग जल्दी-जल्दी लिख रहे थे, मानों परीक्षार्थी छात्र परीक्षा देने बैठे हों।

हरिनारायण त्रिपाठी के भीतर प्रवेश करते ही चारों ओर से मज़ेदार आवभगत होने लगी। कोई प्रेम के साथ पूछता तो कोई मज़ाक़ लिये हुए। सबका यथोचित रूप से समाधान करने में त्रिपाठीजी पूर्णतया समर्थ थे। वे अपनी कुर्सी पर बैठे थे कि पर्दे की दूसरी ओर से सम्पादकजी की आवाज़ आई—"त्रिपाठीजी, अब ख़बरें कम्पोज़ करने के लिए दे दी हैं। बताइए, कौन सा नया समाचार लाये हैं।"

"कुछ नहीं। मैं तो......"

"'वर्तमान संसार' का नया अङ्क आपने देखा है न? कलवाला आपका, रानी लीलावती की हत्या का, विवरण लोगों को ज़्यादा पसन्द आया था। उस विषय में और कुछ पता नहीं लगा?"

"आप अपना अभिप्राय बताइए।"

"मैं—रानी लीलावती की अन्दरूनी बातें—यानी उनके बारे में तनिक—समझे? राधाकृष्ण के बारे में भी कुछ ख़बर होने से काम चल जायगा। आजकल यह सब समाचार देने में......"

तनिक आनाकानी कर हरिनारायण ने कहा—"आप क्या फिर से मुझे पुराना क़िस्सा—पहले की घटना—याद करने के लिए कह रहे हैं"

"पहले कौन सी घटना हुई थी? पुराना क़िस्सा क्या है?"

"मैं जो कहना चाहता हूँ उसे क्या आप समझ नहीं पा रहे हैं या समझना ही नहीं चाहते?"

"यक़ीन मानिए, मैं बिलकुल नहीं समझ रहा हूँ।"

"मैं उसी पुराने हत्याकाण्ड की याद दिला रहा हूँ, जिसमें शिवनारायण को फाँसी हुई थी। उसके सिलसिले में कमला नाम की एक सुन्दरी स्त्री का नाम प्रसिद्ध है। तनिक ध्यान देकर सोचने से ही......"

"हाँ भई, याद आता है। उसमें भी तो कोई 'कृष्ण' था न? कृष्णकान्त या ऐसा ही कोई नाम था—इस राधाकृष्ण का चचा! रेलगाड़ी में अजीब तरह से वह हत्या हुई थी।"

"राधाकृष्ण के चचा कृष्णकान्त थे तअल्लुक़ेदार रामकुमार सिंह के मुख़्तारआम। उनके मरने पर कृष्णकान्त महाशय रानी लीलावती का कामकाज करने लगे।"

सम्पादक मारे प्रसन्नता के उछल पड़े। बोले—"शाबाश! अच्छा, हरिनारायणजी! आपका यही ख़याल है न कि यदि राधाकृष्ण ने रानी लीलावती की हत्या की होगी तो तअल्लुक़ेदार रामकुमार सिंह को मार डालनेवाला कृष्णकान्त ही होगा?"

हरिनारायण ने गरदन हिलाकर कहा—"नहीं, कल जो हत्याकाण्ड हुआ है वह कुछ वैसा ही ख़ून है जैसा अक्सर होता रहता है। लेकिन पहलेवाली घटना तो ऐसी है कि पुलिस अब तक कुछ ठीक पता नहीं लगा सकी। उसमें पुलिस की बदनामी भी बेहद हुई थी।"

"पुलिस कुछ नहीं कर सकी?"

"नहीं, किया तो बहुत कुछ था, उसकी जाँच में रमाकान्त के साथ-साथ बहुत कुछ मेरा भी हाथ था। मुझे हर एक बात बहुत साफ़ याद है। उसके बाद ही मैं आपके पत्र के सम्पर्क में आ गया।" आख़िरी वाक्य कहते वक़्त हरिनारायण की आवाज़ गम्भीर हो गई थी।

"उसमें आपके अभिमान करने योग्य बहुत कुछ था। रमाकान्त के बारे में आपका क्या ख़याल है? और उस ख़ूँख़ार डाकू—जिसकी असाधारण कीर्ति-कथा आपके मुँह से सुनते-सुनते तबीअत ऊब उठी है, जो सब कुछ जाननेवाला और सबसे ज़्यादा शक्तिमान् है और जिसका एक विचित्र सा नाम है साङ्कोपाञ्ज़ा—उसके सम्बन्ध में—"

हरिनारायण का चेहरा फीका पड़ गया। बोले—"देखिए साहब! मुझे एक बात कहनी है। साङ्कोपाञ्ज़ा के बारे में आप किसी दिन कोई राय ज़ाहिर न करें। लोग भले ही कहें कि साङ्कोपाञ्ज़ा रमाकान्त और मेरे दिमाग़ की

उपज है। उसकी दरअसल किसी दिन न तो हस्ती थी और न है; क्योंकि आज तक किसी ने उसकी असली सूरत नहीं देखी। आप तो जानते ही हैं, उसका पीछा करने जाकर ही रमाकान्त की असामयिक मृत्यु हुई थी।..."

सम्पादक ने बीच में ही टोककर कहा—"माफ़ कीजिएगा, मैं यह मानने को तैयार नहीं कि आपके मित्र रमाकान्त ने बुद्धिमान् मनुष्य की तरह मौत को अपनाया।"

हरिनारायण ने तनिक कठोर स्वर से कहा—"आपका यह कहना ठीक नहीं है। रमाकान्त एक बहादुर की तरह मरा है। बहुत दिनों तक अथक परिश्रम करने के बाद उसे साङ्कोपाङ्गा का पता चला तो वह बेख़ौफ़ शत्रु के घर में घुस गया। लेकिन साङ्कोपाङ्गा ने अपनी जान बचाने के लिए मकान को ही उड़ा दिया। इससे रमाकान्त को वहीं, टूटी-फूटी ईंटों के बीच, समाधि लेनी पड़ी। घटनाओं से तो सिद्ध हुआ कि बाज़ी साङ्कोपाङ्गा के ही हाथ रही; लेकिन रमाकान्त की मृत्यु में धब्बा लगानेवाली कौन सी बात है मृत्यु? इससे अच्छी मृत्यु तो वह चाह ही नहीं सकता था।"

"अच्छी? यह बात किस लिए कह रहे हैं?"

"इसलिए कहता हूँ कि अपनी मृत्यु से रमाकान्त ने आप जैसे दस आदमियों की आँखें खोल दी हैं कि साङ्कोपाञ्ज़ा का असल में अस्तित्व है। इसके सिवा उस दुर्घटना के बाद साङ्कोपाञ्ज़ा को विवश होकर अपना उद्देश्य त्याग देना पड़ा। इसी के फल-स्वरूप समाज में फिर से अमन-चैन दिखाई देने लगा है। रमाकान्त ने जान की बाज़ी लगाकर विजय प्राप्त की है। साङ्कोपाञ्ज़ा का ज़हरीला दाँत टूट चुका है।"

सम्पादक ने व्यंग्य के ढङ्ग पर कहा—"अब भी आपको साङ्कोपाञ्ज़ा के अस्तित्व पर विश्वास करते देख रहा हूँ। शायद किसी दिन आप उसकी नई करामात के बारे में कोई मज़ेदार कहानी लिख लायें।"

हरिनारायण ने कहा—"जिन लोगों को अनेक छोटी-मोटी क़ानूनी बातों की ही ख़बर नहीं रहती, उन्हें समझाना असम्भव है। उन लोगों के ख़याल में साङ्कोपाञ्ज़ा का अस्तित्व ही नहीं है! लेकिन

मैं तो जानता हूँ कि है। अफ़सोस! आज रमाकान्त नहीं है।" साङ्गोपाङ्गा के बारे में सच्ची जानकारी उसके सिवा और है ही किसे?

सम्पादक ने फिर कहा—"अच्छा, साङ्गोपाङ्गा की तारीफ़ रहने दीजिए। आप रानी लीलावती के सम्बन्ध में कुछ लिख सकते हैं या नहीं?"

"क्या लिखूँ! मामूली ख़ून की घटना है। एक मालदार औरत—उनका चाहे जो सम्बन्ध हो—एक नौजवान चित्रकार की सहायता करती थी। इसके बाद औरत के वसीयतनामे में अपना भी नाम जानकर नौजवान ने उसे मार डाला—यही न?"

इतने में नौकर ने आकर कहा—"हरिनारायणजी को कोई फोन पर बुला रहा है।"

हरिनारायण उठ खड़े हुए। दो मिनट बाद सम्पादक के पास लौट आये और बोले—"एक अजीब घटना हो गई है। ज़रा 'कोर्ट बिल्डिंग्स' की ओर जा रहा हूँ।"

सम्पादक ने आश्चर्य के साथ पूछा—"फिर क्या हुआ भाई?"

"रानी लीलावती के हत्यारे राधाकृष्ण को तो जानते ही होंगे। वह हवालात में बन्द था। गले में फाँसी लगाकर उसने आत्महत्या कर ली।"

× × × ×

दफ़्तर से बाहर निकलकर हरिनारायण ने किराये की एक मोटर पकड़ी। थोड़ी देर में वे प्रमोदशङ्कर से जाकर मिले जिन्होंने उन्हें फोन से राधाकृष्ण की आत्महत्या की ख़बर दी थी।

प्रमोदशाकर ने मित्र का हाथ पकड़कर कहा—"फोन करते वक़्त मुझे तुम्हारा चित्त कुछ उत्तेजित सा जान पड़ा। क्यों? क्या मैंने तुम्हें बुरी ख़बर सुनाई?"

"नहीं-नहीं; ऐसी कोई बात नहीं।" कण्ठ-स्वर ज़रा ऊँचा था। प्रमोद ने आँख से इशारा किया और मुलायम स्वर में कहा—"धीरे-धीरे बात करो। आओ, गैलरी के पीछे चलें। तुमसे बहुत कुछ कहना है।"

दोनों मित्र बातचीत करते हुए एक सुनसान बरामदे में आ खड़े हुए।

हरिनारायण ने कहा--"अब बताओ, मामला क्या है। बात यही है न, हत्यारे ने गले में फाँसी लगाकर अपनी जान गँवाई है या और कुछ?"

ऐडवोकेट प्रमोदशंकर ने कहा--"हत्यारा? जान पड़ता है, तुम्हें पता नहीं कि राधाकृष्ण निरपराध है।"

"निरपराध!" हरिनारायण ने ऐडवोकेट की बातों पर अविश्वास प्रकट करते हुए कहा--"भाई, गिरफ़्तार ख़ूनी या चोर-डकैत को निरपराध बताना आजकल तुम लोगों का फ़ैशन सा हो गया है। आख़िर तुम्हारे पास उसके निरपराध होने का कोई प्रमाण भी है?"

"यही है प्रमाण! तुम्हारे ही लिए मैंने इसकी नक़ल कर ली है। पढ़ो भी तो।" मित्र को एक काग़ज़ देते हुए प्रमोदशंकर ने कहा।

प्रमोदशंकर के हाथ से वह काग़ज़ लेकर हरिनारायण ने जल्दी-जल्दी उसे देखना आरम्भ किया। उसमें जो कुछ लिखा था वह इस प्रकार है—

"मेरी अचला, तुम्हें जो कष्ट देने जा रही हूँ उसके लिए, आशा है, मुझे क्षमा करोगी। एक तुम्हारे सिवा दुनिया में मेरा ऐसा कोई नहीं जिस पर विश्वास किया जा सके। तनिक पहले मुझे अपने बैङ्कर शर्मा-वर्मा का एक पत्र मिला है। तुमसे कई बार कह चुकी हूँ कि मेरा सब कुछ उन्हीं के पास है। उनके पत्र से मुझे पता चला है कि मेरा सर्वस्व लुट गया। यह महल, जिसमें कभी राजसी ठाठ से ज़िन्दगी बिताई है, मोटरकार और सब सामान, यहाँ तक कि गहने भी उन्हें सौंप देने पड़ेंगे। बहन, बताओ तो सही, इतनी बड़ी चोट कौन स्त्री बर्दाश्त कर सकती है? सच तो यह है कि उन्होंने मुझ पर सांघातिक प्रहार करने में कुछ उठा नहीं रक्खा। अभी-अभी इसे जान पाई हूँ. इसी से चोट की तकलीफ़ से मैं अब तक बेचैन हूँ। लोगों का कहना है कि समय सब कुछ भूल जाने के लिए मनुष्य को समर्थ कर देता है; लेकिन ज़्यादा इन्तज़ार करना मैं नहीं चाहती। दुनिया में अब मेरा हुई कौन! उम्र भी काफ़ी हो चुकी है। इसी से तुम्हें सूचित करती हूँ कि जिस वक़्त यह पत्र तुम्हें मिलेगा उस वक़्त शायद मैं इस दुनिया में

न रहूँ। जहाँ बैठकर तुम्हें यह पत्र लिख रही हूँ, उसके सामने ही तीक्ष्ण विष की एक शीशी रक्खी है। ख़ुशी के साथ, निर्भीकता-पूर्वक, उसको पी लूँगी। इसमें मुझे न तो तनिक भी हिचकिचाहट होगी और न मेरा हाथ ही कँपेगा। केवल इस पत्र को डाक में छोड़ने भर की देर है।

"फिर भी एक बात का अन्देशा है बहन! मेरे मरने पर मेरी लाश की दुर्गति न हो। तुम इसका कुछ उपाय कर देना।

"अपनी हत्या करनेवाली स्वयं मैं ही हूँ। अब मेरी स्मृति को भुला दो।

अभागिन

(ह०) रानी लीलावती मेहता"

हरिनारायण ने व्यंग्य-पूर्ण स्वर में कहा—"आश्चर्य है! राधाकृष्ण का कुछ भी अपराध नहीं। तुम लोगों ने हत्यारा समझ कर उसे गिरफ़्तार किया तो बेचारे ने डर के मारे गले में फाँसी लगाकर अपनी लाज रख ली।"

प्रमोद ने कहा—"इसमें और किसी का क्या क़सूर?"

"मैं तो कहता हूँ, इसमें सबका क़सूर है। अगर तुम लोग निरपराध आदमियों को पकड़कर क़ैदख़ाने में न भरो—जिससे कि उन बेचारों को आत्महत्या के दुःख से छुटकारा पाने का मौक़ा मिले—तो वास्तविक अपराधियों की हिम्मत क्योंकर बढ़े?"

प्रमोद ने कहा—"अब तक यहाँ किसी ने पत्र नहीं देखा था। अभी-अभी अचलादेवी के पति ने लाकर उसे मुझे दफ़्तर में दिया है। तुम्हारे आने से तनिक पहले मैंने उसे शव-परीक्षक मिस्टर खन्ना के यहाँ भिजवा दिया है।"

"वे अपने घर पर ही हैं?"

"हाँ! आज वे राधाकृष्ण की लाश की जाँच करनेवाले हैं।"

"ठीक है। तो मैं चला उनसे मिलने को। मिस्टर खन्ना के पास से हमें बहुत कुछ खोज निकालना है। अच्छा, कल फिर आपसे भेंट होगी।" हरिनारायण तेज़ी से मिस्टर खन्ना के दफ़्तर को चल पड़े।

मिस्टर खन्ना से हरिनारायण की पुरानी जान-पहचान थी। साङ्गो-पाङ्गा के सम्बन्ध में रमाकान्त के कामों को वे काफ़ी श्रद्धा से देखते थे। वे बड़ी ख़ातिर के साथ हरिनारायण से मिले।

हरिनारायण ने उनसे घुमाव-फिराव के साथ न कहकर सीधे पूछा—"शायद आप मेरे आने का उद्देश्य जान गये होंगे।"

मिस्टर खन्ना ने, बुज़ुर्गों की तरह, मुसकराकर कहा—"रानी लीलावती की हत्या का मामला न ?"

"जी नहीं। आप लोगों का, हवालातवाला मामला, जो उससे भी ज्यादा रहस्यमय है।"

"ओहो ! आप भी इसे जानते हैं !" खन्ना ने मुसकराते हुए कहा।

"राधाकृष्ण ने आत्महत्या की है—यही न ? आप तो जानते ही हैं कि इन सब कामों की ख़बर पहले-पहल 'वर्तमान-संसार' को ही मिलती है।"

"जब सबको मालूम है तब झूठमूठ पूछ-ताछकर मुझे क्यों हैरान करते हो भाई ?"

"मैं यही जानना चाहता हूँ कि पहरेदार हवालात पर नज़र रखते हैं या ख़र्राटे लेते रहते हैं ? हवालात में अभियुक्त क्या कर रहा है, यह नहीं देखते ?"

"देखते क्यों नहीं ? यह सवाल करना ही अनावश्यक है। अभियुक्त राधाकृष्ण को यहाँ ले आने के बाद सीधे मिस्टर कृष्णगोपाल माथुर के पास ले गये थे। वहाँ उसकी जाँच कर चुकने के बाद उसके अँगूठे का निशान लिया गया और फिर वह हवालात में रक्खा गया।"

"यह तो मुझे भी मालूम है। आपके पास आने से पहले मैंने मिस्टर कृष्णगोपाल से मुलाक़ात की थी। उन्होंने बताया कि राधाकृष्ण बहुत शिथिल मालूम होते थे। कई प्रकार की जाँच में उन्होंने बिना बहस किये ही अनेक बातें बतला दीं। उन्हें देखकर ऐसा कोई भी अनुमान नहीं किया जा सकता था कि वे आत्महत्या कर बैठेंगे।"

"कहिए, फिर क्या हुआ ?"

"फिर क्या होगा ? पुलिस ने उन्हें ले जाकर हवालात में बन्द कर दिया। आधी रात को भी पहरेदार उनकी कोठरी के सामने से होकर पहरा दे गया है। उसे कुछ भी सन्देह नहीं हुआ। फिर सवेरे देखा गया कि उनकी लाश लटक रही है।"

"कैसे लटक रही थी ?"

"उन्हीं की धोती की किनारी गले में बँधी थी। हरिनारायणजी, शायद आपका ख़याल हो कि पहरेवाले काफ़ी ख़बरदार नहीं रहे। लेकिन, असल में यह बात नहीं है। काफ़ी सावधानी रक्खी गई थी।"

"सम्भव है। लेकिन यह आत्महत्या भी रहस्य से भरी हुई ही रही। कुछ असम्भव सा—"

बात विचित्र है भाई, कपड़े की धज्जी को रस्सी की तरह ऐंठकर, गले में फन्दा लगा, चारपाई के पाये के सहारे झूल पड़ा।

हरिनारायण ने पूछा—"मैं उसे एक बार देख नहीं सकता ?"

मिस्टर खन्ना ने व्यंग्य-पूर्ण स्वर में कहा—"अजी देखने में क्या रक्खा है ? उसका फोटोग्राफ ही क्यों नहीं ले लेते ?"

"ऐसा हो तो क्या कहना है !......" हरिनारायण का कहना ख़तम नहीं हुआ था कि नौकर ने मिस्टर खन्ना से कहा—"हुज़ूर, एक योरपियन पोशाकवाली स्त्री आपसे मिलना चाहती है।"

लापरवाही के साथ मिस्टर खन्ना ने कार्ड ले लिया। उसे देखते ही वे चौंक उठे। सोचा—"निर्मलादेवी। बड़े आश्चर्य की बात है ! ये कहाँ से आ रही हैं ? इनसे इस वक़्त कैसे क्या कहूँगा ?"

इसी समय दरवाज़ा खुला। निर्मला का मुँह आँसुओं से भीगा हुआ था। वे जल्दी भीतर आ पहुँचीं और भर्राई हुई आवाज़ से बोलीं—"भैया, कहाँ हैं मिस्टर खन्ना ?"

"आप—निर्मलादेवी—मैं कहता हूँ—।" साफ़ जान पड़ता था कि वे बहुत परेशान हो गये थे। निर्मला के सवाल को टालते हुए, उनसे बैठने की सिफ़ारिश करने में उन्होंने जितनी देर लगाई, उस बीच

हरिनारायण घर के कोने में जाकर खड़े रहे। खन्ना कह रहे थे—"निर्मलादेवी! आप तनिक आराम करें। मैं सब साफ़-साफ़ बताता हूँ। आपके भैया—शायद—भूल से पकड़े गये हैं। वे फिर छूट—"

अपनी लाल-लाल आँखों से मिस्टर खन्ना को देखती हुई निर्मला बोलीं—"उनका क़सूर क्या है? उन्होंने क्या किया है?"

कुछ जवाब न सोच पाने के कारण मिस्टर खन्ना चुप रहे। उन्हें चुप देख निर्मला ने उतावलेपन के साथ कहा—"आप बताते क्यों नहीं? तो फिर आप जो कुछ जानते हों, साफ़ साफ़ मुझे बतला दें।"

मिस्टर खन्ना ने फिर भी कुछ उत्तर नहीं दिया।

निर्मला को तनिक भी विलम्ब असह्य था। उन्होंने व्यग्रतापूर्वक पूछा—"भैया कैसे हैं? सुनती हूँ, उनकी चोट ख़तरनाक नहीं। क्या उन्हें एक बार देख नहीं सकती?"

लाचार होकर मिस्टर खन्ना रुक-रुककर बोले—"आपके भाई की चोट, मुझे जान पड़ता है—उनसे मुलाक़ात न करना ही—अर्थात् तनिक..."

निर्मलादेवी ने चिल्लाकर कहा—"आप कहते क्या हैं मिस्टर खन्ना? क्या, आपके विचार से, मैं भैया का कुछ नुक़सान करूँगी? अवश्य आप कुछ छिपा रहे हैं! वे हैं कहाँ? मुझे बताइए। मैं उनसे भेंट करना चाहती हूँ।"

मिस्टर खन्ना ने आँखें नीची कर लीं।

निर्मलादेवी कुछ देर तक उनके मुँह की ओर एक टक देखती रहीं। एकाएक उनके मन में एक बात, बिजली की लकीर की तरह, स्पष्ट हो उठी। उन्होंने रुँधे हुए स्वर से पूछा—"वे ज़िन्दा तो हैं न?"

मिस्टर खन्ना को कुछ जवाब नहीं देना पड़ा। सारा मामला उस समय निर्मलादेवी की समझ में साफ़-साफ़ आ गया। वे फूट-फूटकर रोती हुई वहीं, कटे हुए पेड़ की तरह, गिर पड़ीं।

मिस्टर खन्ना उठकर उनके पास आ खड़े हुए। बोले—"निर्मलादेवी, धैर्य रखिए। तनिक ध्यान देकर देखिए। आपके भाई निरपराध..."

उन्होंने मदद के लिए, हरिनारायण की ओर, पीछे मुड़कर देखा; लेकिन इस शोक-जनक दृश्य के अभिनय के समय वे न जाने कब खिसक गये थे।

× × × ×

हवालात में खलबली मची हुई थी। पहरेदारों के जमादार ने कहा—"अरे रामसेवक, ऐसी गड़बड़ी मचाने से क्या फ़ायदा?"

इसी वक़्त आकर एक कर्मचारी ने पूछा—"जमादार, बात क्या है?"

"जनाब, ऐडवोकेट साहब यह बखेड़ा करा रहे हैं। उसे आने दिया जाय?"

"किसे? ऐडवोकेट साहब को?"

"जी नहीं; उनके साथ एक आदमी है जिसके पास प्रवेशपत्र है।"

कर्मचारी ने उदासीनता को छिपाते हुए कहा—"यदि उसके पास प्रवेशपत्र है तो उसे आने देना ही पड़ेगा।"

उनके वहाँ से चल देने पर, जल्द ही, जेल के एक पहरेदार के साथ हरिनारायण आ पहुँचे। उनके चेहरे पर चिन्ता का चिह्न था। तअल्लुक़ेदार रामकुमारसिंह की हत्या के सिलसिले में जाँच करने जाकर उन्होंने राधाकृष्ण और उनकी बहन निर्मलादेवी को पहले देखा है। निर्मलादेवी ने उनकी ओर ध्यान नहीं दिया; वे भी उन्हें इसका मौक़ा दिये बिना, सबकी आँख बचाकर, दबे पाँव घर से खिसक गये थे।

हरिनारायण धीरे-धीरे टहलने लगे। इसी समय मिस्टर खन्ना के साथ निर्मलादेवी को आती देख वे चटपट एक खम्भे की ओट में जाकर खड़े हो गये। उन्होंने सोचा, इस वक़्त फिर मिस्टर खन्ना की नज़रों में न पड़ना चाहिए। हवालात का दरवाज़ा तो खुले; फिर देखा जायगा। मिस्टर खन्ना यदि निर्मला के साथ भीतर न घुसें तो भी इस बीच राधाकृष्ण पर एक नज़र डाल ली जायगी।

हरिनारायण दूर ही दूर से उनका पीछा करने लगे। हवालात के उस कमरे के सामने आकर मिस्टर खन्ना निर्मलादेवी से बोले—"आप सोच

लें, यदि उन्हें देखने से आपके दिल को चोट पहुँचे तो अपने को सँभाल सकेंगी न? भैया को ज़रूर ही देखेंगी?"

निर्मलादेवी ने चुपचाप गर्दन हिलाई। मिस्टर खन्ना ने जमादार की ओर घूमकर कहा—"दरवाज़ा खोलो।"

दरवाजे का ताला खोला जाने लगा।

मिस्टर खन्ना ने कहा—"आपके भाई को ऊँचे पदाधिकारियों के आज्ञानुसार फिर बिस्तर पर ही सुला रक्खा गया है। शायद वे इस समय सो रहे हैं। अच्छा, आइए।"

दरवाज़ा खुलने पर भीतर पैर रखते ही पलँग ख़ाली देख मिस्टर खन्ना के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। बिस्तर को ओर उँगली दिखाकर वे अस्पष्ट स्वर में बोल उठे—"कैसे अचम्भे की बात है! लाश क्या हुई?"

छोटा सा कमरा है। उसी के बीच लोहे की एक चारपाई है। ज़्यादा सामान वग़ैरह भी नहीं है। तनिक देखते ही पता लग जाता है कि कमरे में लाश का नामो-निशान तक नहीं।

मिस्टर खन्ना, जल्दी से, पहरेदार की ओर घूमकर बोले—"तुमने कमरा दिखलाने में भूल की है।"

पहरेदार ठिठक गया। बोला—"नहीं सरकार।"

"तो क्या राधाकृष्ण की लाश पर लगाकर उड़ गई?"

"अभी-अभी थी सरकार।"

"तो फिर शायद कोई दूसरा उसे कहीं ले गया?"

"नहीं सरकार! कमरे की चाभी तो हमेशा मेरे पास ही रहती है। थोड़ी देर पहले लाश थी—अब नहीं दीख पड़ती।" एकाएक बाहर की ओर देख उसने ऊँचे स्वर से पुकारा—"ओ रामसेवक! जानते हो १० नम्बरवाले कमरे की लाश कहाँ गई? अभी-अभी जिसको हम लोग सुला गये थे......"

झुण्ड के झुण्ड पहरेदार जमा हो गये। सबने एक स्वर से क़बूल किया कि जमादार का कहना ही सच है। तनिक पहले राधाकृष्ण की

लाश को इसी कमरे में, चारपाई पर, वे लोग लिटा गये थे। उसके बाद न तो और कोई भीतर आया और न लाश को छुआ ही।"

मिस्टर खन्ना टहलते-टहलते बोले—"तुम लोग कहते हो कि इसी कमरे में रख गये हैं। फिर जब लाश यहाँ नहीं है तो यह निश्चित है कि वह मरा नहीं है। चाहे जैसे हो, भाग गया है। और जब भाग गया है तब वह ज़रूर अपराधी है।"—दोनों हाथों से जमादार के हाथों को मज़बूती से पकड़कर खन्ना, हिंस्र पशु की तरह गरजकर, उससे बोले—"ठीक बताओ, राधाकृष्ण सचमुच मर गये हैं या नहीं—"

जमादार ने बेबसी के साथ कहा—"ईश्वर साक्षी है सरकार, अभियुक्त मर गया था—बिलकुल पत्थर की तरह निर्जीव था। डाक्टर साहब से पूछ लें, या रामसेवक से दर्याफ़्त कर लें—वह भी मेरे साथ ही था।"

"यदि मर गया था तो यहाँ से कैसे ग़ायब हो गया? आख़िर उसकी लाश क्या उड़ गई?"

"किसी मन्त्र की करामात है सरकार।"

मिस्टर खन्ना चिल्ला उठे—"तुम सब शैतान के बच्चे हो। मन्त्र-तन्त्र कैसा? तुम और तुम्हारे ये सब साथी मिलकर ग़प-शप किया करते हो। चौकी-पहरे की ओर कोई ध्यान नहीं देता। अच्छा, अभी पता चल जाता है कि किसकी लापरवाही से यह घटना हुई है।" ग़ुस्से में भरे हुए ज्योंही वे कमरे से बाहर निकले, एकाएक हरिनारायण से उनका सामना हो गया। वे क्रोध के स्वर में बोले—"आप फिर यहाँ क्यों आये? किसने आपको यहाँ आने दिया?"

हरिनारायण ने गम्भीरता के साथ कहा—"प्रवेश-पत्र की बदौलत मैं यहाँ आया हूँ।"

"ठीक है। आपने सब कुछ जान लिया होगा। अब धीरे-धीरे निकल चलिए। बहुत से झमेले पैदा हो गये हैं। उलझन ज़्यादा बढ़ाने की ज़रूरत नहीं; चटपट चले जाइए।"—क्रोध के मारे आगबबूला होते हुए वे पबलिक प्रासिक्यूटर के दफ़्तर को रवाना हुए।

इसके बाद और रुकना ठीक नहीं। ख़ासकर पहरेवालों की नज़र उस वक्त उनकी तरफ़ और निर्मला की ओर आकृष्ट हो रही थी। जमादार बोला—"बाहर जाने का रास्ता यह है साहब! मेम साहब, ज़रा जल्दी-जल्दी पैर बढ़ाइए।"

× × × ×

निर्मला के साथ हरिनारायण सीढ़ियों से होते हुए नीचे उतर रहे थे। निर्मला ने बड़े विनम्र स्वर से कहा—"मुझे—हम लोगों को—आप ही कृपा कर मदद दें। मैं ज़ोर देकर कहती हूँ कि भैया का कुछ भी अपराध नहीं है। उन्हें खोज निकालना चाहिए।"

"यह तो मैं जानता हूँ; लेकिन बताइए खोजने से वे कहाँ मिलेंगे।"

"यह नहीं जानती; लेकिन उनका पता लगाना ही होगा। उनके लिए सारा संसार छान डालने को तैयार हूँ; आप कृपा कर मेरी मदद करें।"

वे लोग सड़क पर आ गये थे। एक किराये की मोटर पर निर्मला को सवार कराकर हरिनारायण ने गन्तव्य स्थान का पता बता दिया। गाड़ी चलने को हुई तो निर्मला ने एकाएक उनके दोनों हाथ पकड़कर कहा—"कहिए; आप मेरी मदद करेंगे?"

हरिनारायण ने अपनी शक्ति भर सहायता करने का वचन दिया। गाड़ी आँखों से ओझल हो गई; फिर भी हरिनारायण उसी जगह, उसी ढङ्ग से, खड़े रहे। उन्होंने मन ही मन कहा—"अगर रानी लीलावती का पत्र सच्चा है तो राधाकृष्ण बेक़सूर है। उसने आत्महत्या ही की है। लेकिन कौन जाने चिट्ठी सच है या नहीं। चिट्ठी जैसी भी हो, इस वक्त पहेली यह है कि राधाकृष्ण सचमुच मर गये हैं। पर उनकी लाश कहाँ और कैसे ग़ायब हो गई?"

यही बात सोचते हुए, अनमने से हो, वे 'वर्तमान संसार' के दफ़्तर की ओर चले। रास्ते में कितने ही लोगों से उनका संघर्ष हुआ। किसी ने उन्हें गाली दी। कोई जलती हुई निगाहों से उन्हें जला देना चाहता था। पर किसी भी तरफ़ उनका ध्यान न था।

एकाएक, बिजली की तरह, एक बात हरिनारायण के मन में आई जिससे सुनसान रास्ते में वे काँप उठे। यदि वह ठीक हो तो इस मामले का बहुत कुछ स्पष्टीकरण हो सकता है।

संसार भर में सिर्फ़ एक ही व्यक्ति ऐसा अजीब और अस्वाभाविक काम कर सकता है। मुर्दे को ज़िन्दा कर देनेवाला आदमी संसार में एक ही है—वह और कोई नहीं, सांकोपांज़ा है।

यह नाम याद पड़ते ही हरिनारायण ठिठककर खड़े हो गये। रमाकान्त की मृत्यु के बाद अख़बार की ओर से उन्होंने जिन छोटी-मोटी घटनाओं की जाँच की है उनमें सांकोपांज़ा का अस्तित्व है—ऐसा उन्होंने किसी भी दिन नहीं सोचा।

सांकोपांज़ा बड़ा चालबाज़ और शक्तिमान् है। उसकी होशियारी और हिम्मत का क्या कहना! दुनिया में ऐसा कौन सा काम है, जो वह न कर सके! रानी लीलावती की मृत्यु में यदि उसका हाथ हो तो राधाकृष्ण के इस आश्चर्यजनक रीति से ग़ायब हो जाने में तनिक भी विचित्रता नहीं है।

× × × ×

'वर्तमान संसार' के लेख में हरिनारायण ने सांकोपांज़ा के अस्तित्व के बारे में कुछ भी आभास नहीं दिया। दफ़्तर का काम करके वे अपने घर लौट आये। दरवाज़े में पैर रखते ही उनकी नज़र पड़ी एक चिट्ठी पर जो चौखट के पास ही पड़ी हुई थी। उठाकर देखा, उस पर पता या नाम कुछ भी नहीं था।

बैठक में आकर उन्होंने लिफ़ाफ़े को फाड़ डाला। पत्र को बाहर निकाल कर देखा कि उसे लिखनेवाले ने अपने हस्ताक्षर को छिपाने के विचार से अख़बार से एक-एक अक्षर काटकर, आवश्यकतानुसार, उन्हें काग़ज़ पर चिपका दिया है। हरिनारायण ने उत्सुकतापूर्ण दृष्टि से पढ़ा—

"हरिनारायण त्रिपाठी! ख़बरदार। जिस काम में हाथ डाल रहे हो वह मामूली नहीं है। ज़रा अपनी ताक़त को समझ-बूझकर काम करो। इसका नतीजा तुम्हारे लिए अच्छा नहीं होगा।"

पत्र पर किसी के दस्तख़त नहीं थे। हरिनारायण ने समझ लिया कि राधाकृष्णवाले मामले में न पड़ने के लिए ही कोई उन्हें सावधान कर रहा है। पर यह है कौन? अवश्य यह स्वयं अभियुक्त ही है।

लेकिन राधाकृष्ण को मेरा पता कैसे मालूम हुआ? उसे हवालात से भागने पर, इसी बीच इतना वक्त कहाँ मिला कि छपे अक्षरों को जोड़कर चिट्ठी भेज सके। सम्भव है, उसके कुकर्म का सङ्गी-साथी कोई और भी हो।

कमरे में क्रमशः अँधेरा बढ़ता जा रहा था। हरिनारायण कमरे में टहलते-टहलते ज़ोर से बोल उठे—"इसमें निस्सन्देह सांकोपाञ्ज़ा का हाथ है।"

४

सारी रात जागते रहकर हरिनारायण सबेरे तनिक सो गये थे। जब नींद खुली तब बहुत दिन चढ़ आया था। वे धीरे धीरे उठ बैठे।

उस समय उनका चित्त बिलकुल शान्त था। राधाकृष्ण के मामले की जाँच अन्त तक वे करेंगे। सफल होने की बहुत कम आशा रहने पर भी वे पूरा प्रयत्न करने से बाज़ नहीं आयेंगे।

उन्हें पहले पता लगाना है कि मरे हुए राधाकृष्ण जेलखाने की कोठरी से कैसे ग़ायब हो गये। यही तो उन्हें सबसे पहले जानना चाहिए, लेकिन कैसे काम शुरू किया जाय?

एकाएक उनके मन में एक बात आई। वे ख़ुशी के मारे उछल पड़े। नीचे उतरते समय नौकर से कह गये—"सम्भव है दो-एक दिन न आ सकूँ। मेरी चिट्ठी-पत्री की ओर ज़रा ध्यान रखना। हाँ, कल सन्ध्या-समय कोई मुझसे मिलने आया था?"

"नहीं।"—नौकर ने उत्तर दिया।

"अच्छा, अगर कोई आदमी मेरे नाम की चिट्ठी लेकर आवे तो उसे ख़ूब अच्छी तरह से देख-भाल लेना। हमारे दो-एक मित्र

मेरे साथ कुछ जालसाज़ी कर रहे हैं। इसका ख़याल रखना, उनका कुचक्र सफल न हो।"

उन्होंने बाहर आकर किराये की मोटर की ओर ड्राइवर से कहा—"इम्पीरियल लाइब्रेरी ले चलो—जल्दी करो।"

× × × ×

"देखता हूँ, देर हो गई। अब पल भर भी देर करना ठीक नहीं।" इम्पीरियल लाइब्रेरी से बाहर निकलकर हरिनारायण एक लोहे की दूकान की तलाश में क़ादिरगञ्ज की ओर लपके।

सामने की दूकान में जाकर बोले—"कोई सौ गज़ ख़ूब पतला मज़बूत तार चाहिए।"

दूकानदार एकटक उनकी ओर देखकर बोला—"किस काम के लिए चाहिए? मेरे यहाँ कई तरह के तार हैं।"

चेहरे पर हँसी का चिह्न तक न लाते हुए हरिनारायण ने गम्भीरता से कहा—"हमारे एक दोस्त के लिए चाहिए। वह गले में इसे बाँधकर लटकना चाहता है।"

दूकानदार भी खिलखिलाकर हँस उठा। उसने कई तरह के तार दिखाये। उनमें से एक लेकर हरिनारायण, दाम चुकाकर, दूकान से बाहर निकले। अब वे सड़क के दूसरी ओर एक घड़ी की दूकान में गये। बोले—"एक एलार्म घड़ी चाहिए, जो बहुत छोटी हो, साथ ही सस्ती भी।" घड़ी लेकर बाहर निकले तो पता चला कि आध घण्टा बीत चुका है। अब किराये की लारी से कोर्ट-बिल्डिङ्ग की ओर चले।

बन्द गाड़ी के भीतर बैठकर हरिनारायण ने चारों ओर के पर्दे खींच दिये। फिर उन्होंने अपना कोट उतार डाला। एक एक कर कमीज़ के बटन खोलने लगे।

× × × ×

कुछ दूर पर घण्टाघर की घड़ी में जब टन-टन करके कई बज गये तब हरिनारायण कोर्ट-बिल्डिङ्ग के भीतर पहुँचे। दाहनी ओर का बरामदा

लाँघने के बाद ही बैरिस्टरों के विश्राम करने का कमरा था। लोग आ-जा रहे थे। कितने ही टेबल के सामने कुर्सी पर बैठे बातें कर रहे थे।

हरिनारायण भीतर जाकर मानों किसी को खोजने लगे। अन्त में जिस कमरे में पोशाकें रक्खी रहती थीं, उसमें जाकर बेयरा से पूछा—"जान पड़ता है, उमाकान्त जी यहाँ नहीं है?"

"जी हाँ सरकार, वे नीचे हैं।"

उमाकान्त से हरिनारायण की जान-पहचान पुरानी थी। वे बैरिस्टर लोगों की पोशाक के मालिक थे। उन्हीं की मिहरबानी से हरिनारायण को आवश्यकतानुसार बहुतेरे बड़े लोगों से मिलने जुलने का मौक़ा मिला था। नीचे से वे ज्योंही लौटे, हरिनारायण बोले—"नमस्कार! हैं तो अच्छी तरह? आपसे एक बात पूछना चाहता हूँ।"

उमाकान्त ने मुसकराकर कहा—"समझ गया। किसी से मिलना होगा और मुझे भी वहाँ तक घसीटोगे। यही न?"

"नहीं, यह बात नहीं है। मैं सिर्फ़ यह जानना चाहता हूँ कि जज लोग अपनी पोशाक कहाँ बदलते हैं?"

उमाकान्त ने आश्चर्य के साथ कहा—"अगर किसी जज से मिलना चाहते हो तो पोशाकवाले कमरे में भेट करना तो बेकार ही है। यहाँ आपके प्रश्न का शायद वे कोई उत्तर न भी दें।"

"इस बात को लेकर आप माथापच्ची न करें। कृपया मुझे बता भर दें कि न्यायमूर्ति लोग अपना कलेवर कहाँ बदलते हैं।"

उमाकान्त ने कहा—"इस बरामदे से ज़रा आगे जाने पर बाईं ओर एक सँकरा रास्ता मिलेगा। उसी पर तनिक आगे बढ़ने पर दाहिनी ओर एक कमरा है जिस पर पर्दा टँगा है।"

"उस कमरे में लोग होंगे ज़रूर ही?"

"इसमें क्या सन्देह?"

"अच्छा, धन्यवाद। यही मैं जानना चाहता था।" हरिनारायण जल्दी-जल्दी पैर रखते हुए जजों की पोशाकवाले कमरे की तलाश में बढ़े।

उसके सामने पहुँचने पर देखा, एक लड़का स्टूल पर बैठा हुआ ऊँघ रहा है। उससे उन्होंने पूछा—"मिस्टर दर से यहाँ भेट हो सकेगी ?"

"जी नहीं ! मिस्टर दर चले गये।"

हरिनारायण कुछ सोचने लगे। एक बार कमरे में चारों ओर उन्होंने अपनी तीक्ष्ण दृष्टि दौड़ाई। उसमें पोशाक उतारकर रखने के लिए अनगिनत ब्रैकेट टगे थे। उन्हें निश्चय हो गया कि जजों का पोशाक-घर यही है। उन्होंने गहरी साँस लेकर कहा—"तो मिस्टर दर चले गये हैं !" अब उन्हें कोई दूसरा नाम बोलने की ज़रूरत मालूम पड़ी। दरवाज़े पर बाहर जजों के नामों की तख्ती टँगी थी। उनमें से एक और नाम देखकर उन्होंने लड़के से कहा—"अच्छा भाई, तो जाकर तनिक मिस्टर हरिश्चन्द्र गुप्त को ही ख़बर दो। उनसे मैं एक आवश्यक कार्य-वश मिलना चाहता हूँ।"

"आपका नाम उन्हें क्या बताऊँगा ?"

"नाम बताने की आवश्यकता नहीं। उनसे कहना, मैं एक मुक़दमे के सिलसिले में आया हूँ।"

"अच्छा आप ठहरें; मैं उन्हें ख़बर दिये आता हूँ।"

लड़का जब तक आँखों से ओझल नहीं हो गया, तब तक हरिनारायण टहलते हुए मन ही मन कहने लगे—"मुक़दमा जैसा है वह मैं ही जानता हूँ ! जाओ भाई, जज साहब से अच्छी तरह बातचीत होगी।"

कुछ मिनटों में लड़का अपनी जगह यह बताने के लिए लौट आया कि जज साहब इस वक़्त किसी आदमी से भेट नहीं कर सकेंगे। लेकिन दरवाज़े के पास आने पर वह ठिठककर खड़ा हो गया। उसने अस्पष्ट स्वर में कहा—"वह आदमी गया कहाँ ! उधर ही तो नहीं गया ? चलो अच्छा हुआ, जज साहब ने यह नहीं कहा कि उसे यहीं लेते आओ। फिर तो मैं कहीं का न रहता।" अपने स्टूल पर बैठकर वह कहानी की एक पुरानी किताब देखने लगा।

× × × ×

कोर्ट की इमारत के भीतर बन्द जँगलों और खिड़कियों से होकर रोशनी की एक छोटी सी लकीर भी नहीं आ रही है। चारों ओर गहरा सन्नाटा भीषणता का मूर्त आकार धारण किये हुए था। इस बीच सुन पड़ती है रात को चलनेवाले किसी व्यक्ति के पैरों की धीमी आहट—हत्या की विभीषिका से भरी हुई।

जो महल दिन को सैकड़ों आदमियों की बातचीत से गूँजता रहता था, वह इस वक़्त सुनसान है और उसमें सन्नाटा छाया हुआ है। पहरे-वाला अपनी ड्यूटी पूरी कर गया है। कल दस बजे से पहले यह सन्नाटा टूटने का नहीं।

कमरे की घड़ी एकाएक तेज़ आवाज़ से बज उठते ही वह व्यक्ति, बिजली का स्पर्श किये हुए की तरह, उठ बैठा जो आलमारी की आड़ में गहरी नींद ले रहा था।

"देखता हूँ, ग्यारह बज गये हैं।" कहकर हरिनारायण आलस्य छोड़कर उठ बैठे। मन ही मन कहा—"नींद कम नहीं आई; लेकिन सोने से आराम नहीं मिला। पीठ में दर्द होने लगा। ओहो! जज के यहाँ से लौटकर मुझे न देखने पर बेचारे लड़के के चेहरे की कैसी हालत थी! लेकिन मेरी तक़दीर, कि जाते वक़्त उसने आलमारी के पीछे नहीं देखा। ऐसा होता तो मेरी न जाने क्या हालत होती।"

हरिनारायण ने जेब से बत्ती का एक टुकड़ा निकालकर जलाया। ग्यारह बजकर दस मिनट हो गये थे। लेकिन घड़ी का क्या किया जाय? यहाँ छोड़ देने पर भविष्य में पकड़े जाने की आशङ्का भी कम नहीं है। कुछ परवा नहीं; मेरी जासूसगिरी में विघ्न पड़ने पर भी उस हालत में एक मज़ेदार कहानी लिखकर 'वर्तमान संसार' के पन्ने भरने में तो रुकावट नहीं पड़ेगी। अच्छा, इसे जज साहब की ही भेंट करना चाहिए।

कई मोटे-मोटे रजिस्टरों में से एक के ऊपर दूसरे को रखकर हरिनारायण ने उन्हीं के ऊपर घड़ी को रख दिया। फिर दरवाज़े के पास जाकर लोहे

की बड़ी सी कील को खोल दिया। इससे ताला पहले जैसा बन्द रहने पर भी इस घर से बाहर निकलने में कुछ असुविधा नहीं हुई।

ऊपर जाने की सीढ़ी खोजते हुए वे कमरे में चारों ओर घूमने लगे। इस वक्त किसी के द्वारा देखे जाने की कुछ भी आशङ्का न थी। पुलिस का पहरा था सही; लेकिन मकान के बाहर ऊपर पहुँचकर हरिनारायण ने बरामदे के कोने में एक बड़ी सी सीढ़ी देखी। उसे खींचने की कोशिश करते हुए वे अस्पष्ट स्वर से बोल उठे—"नहीं, यह तो बहुत भारी दीख पड़ती है, इसे हिलाना-डुलाना आसान नहीं।"

हवा आने-जाने के लिए छत में शीशा लगी एक खिड़की थी। हरिनारायण ने बड़ी मिहनत से सीढ़ी को वहीं पर लगाया और उस पर चढ़कर वे छत पर पहुँच गये। कितना गहरा अँधेरा छाया हुआ था। पल भर के लिए वे अपना काम-काज भूलकर खड़े रहे। पीछे रोशनी से जगमगाता हुआ विशाल नगर था और सामने थी तरङ्गों से भरी हुई नदी। बीच-बीच में जल के भीतर प्रकाश की किरणें पड़कर विचित्र दृश्य की सृष्टि कर रही थीं।

हरिनारायण ने अपने को सँभालकर जेब से टार्च और काग़ज़ का एक टुकड़ा निकाला। टार्च की रोशनी में उन्होंने बड़े ध्यान से नक़शे को जाँचना शुरू किया। कुछ मिनट के बाद काग़ज़ को मोड़कर फिर जेब में रक्खा और मन ही मन कहा—"देखता हूँ, हवालातवाले कमरे के ठीक ऊपर आ पहुँचा हूँ। अब यह पता लगाना है कि किस रास्ते से राधाकृष्ण की लाश ग़ायब हुई। हवालात में कोई जँगला है नहीं और दूसरे उपाय से भी किसी को कानों-कान ख़बर हुए बिना कमरे से बाहर जीते या मरे हुए आदमी को ले जाना असम्भव है। इसलिए यह सोचना अनुचित नहीं कि इस समय भी राधाकृष्ण का शरीर मकान से बाहर कहीं नहीं गया। इस विशाल भवन की ही किसी अज्ञात गुफा में वह छिपा दिया गया है; अथवा यह भी सम्भव है—" जेब से एक सिगरेट निकालकर हरिनारायण ने अनमने चित्त से मुँह में लगाया। धीरे-धीरे एक बात

उनके दिमाग़ में उथल-पुथल मचा रही थी। "ऐसा भी तो हो सकता है कि किसी नल या ऊपर की चिमनी के द्वारा लाश हटा दी गई हो। लेकिन नल के रास्ते कैसे हटाई जायगी? नदी में जो नाला जाकर गिरता है, उसके साथ ऐसे किसी लम्बे चौड़े नल या पाइप का मेल तो है नहीं जिसमें होकर मनुष्य आ-जा सके। सिर्फ़ यह चिमनी ही एक वैसा रास्ता हो सकती है। अच्छा, देखता हूँ, क्या बात है।"

जेब से उन्होंने फिर एक बार नक़शा निकाला और उसे देखा-भाला। उस जगह से थोड़ी ही दूर जो बड़ी सी चिमनी थी, उसके पास आकर वे खड़े हो गये। वे चिमनी के भीतर झाँककर देखने लगे। उस अँधेरे में रोशनी डालते ही देखा कि दीवाल पर लोहे के कुछ हुक लगे हैं और उन पर के मोरचा लगे हुए स्थान को देखते ही साफ़ पता चल गया कि उस पर अभी हाल में आदमी का आना-जाना हुआ है। चिमनी के रास्ते हवालात में घुसने का उद्देश्य राधाकृष्ण की लाश को हटाने के सिवा और क्या हो सकता है?

हरिनारायण ने जेब से नक़शा निकाला। वे फिर एक बार उसे जाँचने लगे। एकाएक उनकी आँखें चमक उठीं। बोले—"ठीक यही सन्देह मुझे हुआ था। इसमें एक चिमनी का नक़शा नहीं है। देखना होगा, कि वह कहाँ गई है।"

अब वे चटपट नई चिमनी के पास आ खड़े हुए। वहाँ भी वही भीतरी दीवाल की सफ़ेदी पर रस्सी लटकाने का निशान! लेकिन—हरिनारायण सोच में पड़ गये। क्या यह सच है? यदि चिमनी ही होती तो क्या जाले तक का चिह्न वहाँ न रहता? तो फिर?

चिमनी का मुँह इतना चौड़ा था कि आदमी उससे आ-जा सकता था। उस अँधेरे गड्ढे के भीतर झाँकते हुए हरिनारायण ने कान लगाकर सुनने की कोशिश की तो मालूम हुआ कि कोई पतला नाला नीचे बह रहा है। नदी यहाँ से काफ़ी दूर है। तो फिर, यह कोई नल या ड्रेन होगा जो शायद नदी से मिला होगा।

लेकिन नीचे उतरे बिना सन्देह मिटाने का कुछ भी उपाय नहीं था। हरिनारायण ने नीचे जाने का निश्चय कर कुरते के भीतर से लोहे का पतला तार निकाला। उसे खोलकर, एक सिरे से ईंट बाँधकर. अँधेरे रास्ते में लटकाना शुरू किया, जिससे गहराई का पता चले। नीचे उतरने में ख़तरा है। शायद बदमाशों के किसी गरोह का सामना हो जाय। लेकिन इसी से डरकर पीछे लौटने को वे तैयार नहीं थे।

तार के दूसरे सिरे को पास की एक चिमनी में मज़बूती के साथ बाँधकर वे तार के सहारे धीरे-धीरे नीचे उतरने लगे। वे हाथ में टार्च लिये हुए थे तथा उससे दीवार पर रोशनी करते जाते थे। दीवार पर पहचानी हुई लकीरें देखकर उन्होंने समझा कि उनका अन्दाज़ ग़लत नहीं था। तनिक पहले इस रास्ते से आदमी उतरा है—इसी का निशान था। एक जगह उन्हें ख़ून का धब्बा दीख पड़ा तो घुटनों और कन्धों की मदद से दोनों ओर की दीवाल से टिककर उसकी जाँच करने के लिए वे रुक गये।

ख़ून का धब्बा देखने से राधाकृष्ण की मृत्यु के विषय में कुछ सन्देह नहीं रह गया। जीवित मनुष्य के शरीर का रक्त होता तो धब्बे और बड़े-बड़े, साथ ही ज़्यादा तादाद में होते। इससे जान पड़ता है कि ये मरे हुए आदमी के शरीर से पत्थर की रगड़ खाकर छिल जाने से निकले हैं।

कुछ दूर और नीचे जाने पर उन्हें पत्थर में फँसे हुए कुछ बाल मिले। फिर वे घुटनों और कन्धों के सहारे रुके और उन बालों को उठाकर उन्होंने नोट-बुक के भीतर रख लिया। कम से कम इनसे पुलिस को यह मदद तो मिलेगी कि वह इनकी जाँच कराकर निश्चय कर सके कि ये राधाकृष्ण के तो नहीं हैं।

हरिनारायण फिर नीचे उतरने लगे। थोड़ी देर में उनका पैर किसी कड़ी चीज़ पर पड़ा। उन्होंने सोचा अब कहीं ज़मीन तक पहुँचा हूँ। पहले तो उन्होंने तार को छोड़ देने का निश्चय किया, फिर दूरदर्शिता ने उन्हें ऐसा करने से रोका। कौन जाने, पैरों के नीचे ही पाताल तक खींच ले जाने के लिए विशाल खड्ड मौजूद हो!

यह कड़ी चीज़ ज़मीन नहीं थी। लोहे के कुछ झुकाये हुए पत्तर थे। इसके सहारे हरिनारायण ने कुछ मिनट तक आराम किया। हाथ हटाकर हिसाब लगाया तो पता चला कि कुछ ही गज़ और बाक़ी हैं। नीचे की ओर रोशनी करते ही उनके चित्त को कुछ तसल्ली हुई। जिस जगह वे खड़े थे, वहाँ से वे लोहे के टेढ़े पत्तर सीढ़ी की तरह लगातार अँधेरे की ओर चले गये थे। अब काम होने में ज़्यादा कठिनाई नहीं है।

इसी रास्ते हरिनारायण नीचे उतर आये। पहले-पहल उन्हें पता नहीं लगा कि वे कहाँ आ पहुँचे। चारों ओर—सिर के ऊपर—सिर्फ़ पत्थर में गाड़ी गई कीलें ही थीं। रोशनी बुझाकर धीरे धीरे सावधानी से पैर रखते हुए वे आगे बढ़े।

कुछ दूर चलकर एक बार टार्च जलाया तो देखा कि रास्ता सामने के एक ऐसे नाले तक आया है जिसका व्यवहार इधर बहुत दिनों से बन्द सा है। ऊपर से ही उन्हें जो पानी बहने की धीमी आवाज़ सुन पड़ी थी, वह इसी नाले के गँदले पानी के सोते की थी। नाले के किनारे ही कीचड़-लिपटे पैरों के कुछ निशान देख हरिनारायण झुककर बैठ गये। उन्हें पता लगा कि कुछ आदमी—कुछ ही देर पहले—इसी रास्ते से गुज़रे हैं।

पैरों के निशान देखने से जान पड़ता है कि वे कोई भारी चीज़ ढोकर ले गये हैं; क्योंकि कुछ निशान दूसरों की बनिस्बत ज़्यादा गहरे बने हुए हैं।

अपनी सफलता पर ख़ुश होकर हरिनारायण उठ खड़े हुए और कोई दूसरी बात खोज निकालने की आशा से आगे बढ़े। एकाएक उन्हें जो दृश्य सामने दीख पड़ा उससे वे ठिठककर खड़े हो रहे। कैसा बीभत्स दृश्य था! कई बड़े-बड़े चूहे शिकार के लिए आपस में लड़-भिड़ रहे थे। उनकी छीना-झपटी और विचित्र आवाज़ से हरिनारायण का हृदय ज़ोर से धड़कने लगा।

पत्थर का एक ढेला उठाकर हरिनारायण ने उस ओर चलाया। चूहे डरकर भाग खड़े हुए। आगे बढ़ने पर उन्हें ख़ून से लथपथ कटा-फटा एक मांस-पिण्ड भर दीख पड़ा। यद्यपि यह जानने का कोई उपाय नहीं था कि किसकी लाश है, फिर भी हरि-नारायण ने सब कुछ समझ लिया। वे फिर आगे बढ़े—यह जानने के लिए कि नाला कहाँ ख़तम हुआ है। कुछ ही मिनट चलने पर पता लगा कि वह नज़दीक ही नदी के साथ मिल गया है। यह देखकर उन्हें बेहद ख़ुशी हुई; क्योंकि अब वे ऊपर की चिमनी के रास्ते गये बिना भी, इस रास्ते से, बाहर निकल सकते हैं।

नदी के किनारे आकर सामने की ओर झुककर हरिनारायण देख ही रहे थे कि कुछ निश्चय करें कि पीछे से एकाएक गहरी चोट खाकर वे नदी की धारा में जा पड़ने के लिए बाध्य हुए।

५

"कल्लू, अरे कल्लू! इधर तो आना बेटा!"

कल्लू प्रसन्नता से फूला न समाता हुआ आ पहुँचा।

बुआ ने कहा—"इस कुर्ते को ले जाकर बाहर टाँग तो आ। इससे वे लोग समझ जायँगे कि यहाँ आने में खटका नहीं है।"

थोड़ी देर में, कल्लू को उस जगह कुर्ता हाथ में लेकर खड़ा रहते देख, बुआ क्रुद्ध होकर बोलीं—"तुझे क्या कहा था?"

कल्लू सिर खुजलाते हुए याद करने की कोशिश करने लगा। बुआ डाँटती हुई बोलीं—"रास्ते के किनारे टाँगने को कहा था न? भूल गया?"

"नहीं-नहीं" कहता हुआ कल्लू आज्ञा का पालन करने दौड़ा। बुआ बैठी हुई कुछ सोचने लगीं।

सचमुच कल्लू अजीब आदमी है। इस बुढ़िया से उसकी भेंट जिस तरह हुई, वह कहानी भी रहस्यपूर्ण है। वह एक दिन गरोह के

लोगों के बीच दिखाई पड़ा; लेकिन लोगों के कई बार पूछने पर भी उसका नाम, पता वग़ैरह कुछ भी नहीं जाना जा सका।

किसी ने कभी ख़याल भी नहीं किया कि उसके मस्तिष्क में रत्ती भर बुद्धि या स्मरण-शक्ति है। वह किसी का नुक़सान भी नहीं करता था। शायद उसमें यह शक्ति ही नहीं थी।

नदी के किनारे बुआ की एक छोटी दूकान थी। बाहर बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा था—"बिसातखाने की दूकान"।

दूकानवाली कोठरी के पीछे एक और तनिक बड़ा कमरा था। यह गोदाम की कोठरी थी। यहाँ इकट्ठा किया हुआ माल रक्खा रहता था। इस घर का एक दरवाज़ा खोलने पर एक सँकरी गली मिलती थी, जो नदी तक जाकर समाप्त होती थी। वास्तव में बुआ के अड्डे के दो रास्ते थे और दोनों का इस्तेमाल होता था। क्योंकि बीच-बीच में पुलिस की चौकन्नी नज़रों से अपने को बचाने या सन्देहजनक चरित्र के किसी आदमी को छिपाने के लिए इसके सिवा दूसरा उपाय नहीं था। इसके सिवा बुआ की और एक बड़ी कोठरी थी। उसके भीतर लकड़ी के सन्दूक़ों, पीपों, वग़ैरह से लेकर ऐसी कोई चीज़ न थी जो न हो। यहाँ भी ज़रूरत पड़ने पर वे सामान वग़ैरह छिपा सकती थीं।

पहले तो अपने झुण्ड के लोगों के साथ बुआ बेखटके ज़िन्दगी बिता रही थीं। लेकिन एकाएक एक दिन उनके भाग्याकाश में, ख़ुफ़िया पुलिस के रूप में, काला बादल दीख पड़ा। उसी दिन से कितने ही आदमी आये और गये। गरोह टूटा और फिर जमा। फिर भी जेलख़ाने के पहरेदार रामसेवक पर उनका विश्वास आज तक बना हुआ है। अनेक क्षेत्रों में उसने गरोह को आये हुए संकटों से बचाया है।

× × × ×

बुआ पीछे की कोठरी से देख रही थीं कि कल्लू कुर्ते को ठीक तरह से टाँगता है या नहीं। इतने में पीछे की ओर से घर में आकर एक व्यक्ति ने पूछा—"बुआ, क्या ख़बर है?"

आनेवाली का नाम था हमीदा। उसका शरीर ख़ूब लम्बा-चौड़ा था। वह बोली—"घंटे भर से आस-पास घूम रही थी; लेकिन आने की हिम्मत न पड़ती थी। तुम्हें कुर्ता टँगवाते देखा तब......"

जो लोग यहाँ आते, सबको मालूम रहता था कि पुलिस का खटका रहने पर बुआ दूकान के सामने एक पुराना लाल कपड़ा लटका देतीं और जब रास्ता साफ़ रहता तो यह कुर्ता रक्खा जाता था। बुआ की ओर देखकर हमीदा ने कहा—"कुछ नई ख़बर सुनी है बुआ? बहुत बुरी ख़बर है।"

"किसकी? कौन सी ख़बर?"—बुआ ने बेचैनी की आवाज़ में पूछा।

"भोला की हड्डी-पसली टूट गई।"

"मरा नहीं? पाजी कहीं का!"

हमीदा ने सिर झुकाते हुए कहा—"कह नहीं सकती। जो मैं जानती थी, कह दिया।"

दोनों स्त्रियों के चेहरे पर दुःख की छाया दीख पड़ी। भोला उनका बहुत प्यारा आदमी था। उसे अपने को बचाने के सैकड़ों उपाय मालूम रहते थे, फिर भी गरोह के किसी भी आदमी को ख़तरे में छोड़कर वह कभी अपने को बचाना नहीं चाहता था। उसकी जैसी शक्ति ही किसमें थी? भारी तालों को वह पलक मारते तोड़ फेकता था। सब सवारियों को चलाना उसे मालूम था। बुआ के अड्डे से माल ले जाने और ले आने के लिए वह एक ही वाहन था।

बुआ ने पूछा—"किन्तु वास्तव में भोला का क्या हुआ?" उन्होंने कल्लू को बुलाया और दो पैसे उसको देकर कहा—"जल्दी से जाकर एक अख़बार तो ले आ।"

ज्यों ही कल्लू बाहर गया, एक लम्बा-चौड़ा आदमी पीछे के दरवाज़े से घर के भीतर आया। उसे देख बुआ की आँखें चमक उठीं; बोलीं—"क्यों रामसेवक! कोई नई ख़बर है?"

मुँह बनाकर रामसेवक एक स्टूल पर जा बैठा। बोला—"बहुत बुरी ख़बर है। बड़ी चखचख मची हुई है।"

हमीदा ने पूछा—"क्यों ? किसी के पङ्ख कतरे हैं क्या ?"

रामसेवक ने गहरी अप्रसन्नता के साथ जवाब दिया—"हमीदा ! तुम्हारा दिमाग़ भी दिनोंदिन मोटा होता जा रहा है। तुम समझीं नहीं, राधाकृष्ण के मामले की बात कह रहा था मैं।" रामसेवक ने शुरू से अन्त तक मामले को साफ़-साफ़ बता दिया। और भी वह बहुत कुछ जानता था; लेकिन दोनों स्त्रियों में से किसी ने उससे कुछ नहीं पूछा। रामसेवक ने कहा—"अच्छा ही हुआ। आज रात को ही कपड़े का गट्ठर आने की बात है।"

× × × ×

कल्लू कोई घण्टे भर बाद हाँफता हुआ दौड़ा आकर पीछेवाली गली से बुआ के घर में घुसा। लेकिन जिस कोठरी में सब लोग बैठे थे उसमें न जाकर सीढ़ी के द्वारा वह सीधे तीसरी मंज़िल पर पहुँचा और अपनी छोटी सी कोठरी में चला गया। वह अब भी हाँफ रहा था। कुरते के बटन खोलकर माथे का पसीना पोंछते-पोंछते वह एक लोटा पानी पी गया। फिर खिड़की के पास आ खड़ा हुआ।

सामने कोर्ट-बिल्डिंग की लम्बी-चौड़ी छत है। उसके ऊपर के आकाश में कुछ चमकीले तारे दीख पड़ रहे थे। कल्लू सूनी आँखों से छत की ओर देख रहा था। एकाएक उसकी नज़र एक जगह जाकर रुक गई। छत के ऊपर, भूत की तरह इधर-उधर घूमती-फिरती, एक छाया-मूर्ति दीख पड़ी। कभी इस ओर, कभी उस ओर, घूमती हुई वह एक चिमनी के पीछे छिपी और फिर दूसरे ही क्षण बाहर निकल आई।

कल्लू अस्पष्ट स्वर में बोला—"बात क्या है ?"—इस समय दूसरा कोई कल्लू को देखता तो चकित हुए बिना न रहता। उसका चेहरा बिलकुल बदल गया था। आँखें तेज़ और बुद्धि प्रकाशमय हो उठी थी।

कुछ देर तक कल्लू छत पर चुपचाप टहल रहे व्यक्ति की ओर एक-टक देखता रहा। नहीं कह सकते वह कब तक देखता रहता; लेकिन उस आदमी को एक चिमनी के भीतर ग़ायब हो जाते देख उसे अचंभा

हुआ। कुछ समय तक उसने उस आदमी के लौट आने की व्यर्थ ही प्रतीक्षा की। निर्जन छत पर सिर्फ़ गहरे सन्नाटे का राज्य था।

× × × ×

नीचे की कोठरी में कल्लू के पहुँचते ही बुआ गरजती हुई बोलीं—"क्यों रे अभागे छोकरे, तेरा 'अभी' क्या यही है? अख़बार लाया? नहीं......"

नासमझ की तरह एक बार सबकी ओर देखकर कल्लू ने नीची आँखें किये हुए मीठे स्वर में जवाब दिया—"ख़रीदने का ख़याल नहीं रहा बुआ।"

रामसेवक ने कहा—"प्रायः २½ बज चुके हैं। अभी-अभी नाले के मुँह पर खलासी आ जायगा।"

बुआ बोलीं—"रामसेवक, तुम अकेले क्या कर सकते हो?"

रामसेवक ने कल्लू की ओर देखकर कहा—"और कोई नहीं है तो कल्लू को ही लिये जाता हूँ। कुछ मदद तो मिलेगी।"

पहले ही आपत्ति की गई। फिर काना-फूसी होने लगी, जिसमें कल्लू सुन न सके। अब तक इन कामों से उसे दूर ही रक्खा जाता था। इसके सिवा वह नासमझ लड़का ठहरा। न जाने किस वक़्त क्या कर बैठे।

रामसेवक ने कहा—"नासमझ होना तो हमारे लिए और भी अच्छा है। इसके सिवा बच्चा की स्मरण शक्ति भी तो मारके की है।"

"अच्छा, तो ठीक है।" कहकर बुआ ने कल्लू को बुलाया और रामसेवक के साथ कर दिया।

बुआ की, गोदामवाली कोठरी के नीचे जो कोठरियाँ थीं, उनमें घना अँधेरा और बदबू भी थी। उन्हीं के भीतर से गुज़रता हुआ रामसेवक कल्लू के साथ चलने लगा। आख़िरी कोठरी कुछ छोटी थी। लकड़ी के सन्दूक़ों और लोहे के पीपों इत्यादि से भरी होने के कारण उसमें कहीं पैर रखने को जगह नहीं थी।

कल्लू दिया लिये आगे-आगे चल रहा था। इतने सन्दूकों को देख उसे शायद कुतूहल हो रहा था। एक सन्दूक का ढक्कन उठाकर देखा तो वह दङ्ग रह गया। सन्दूक में ढेरों रुपये थे जो दिये के उजेले में चमक रहे थे। पीछे से रामसेवक उसकी पीठ पर सन्दूक रखता हुआ बोला—"आश्चर्य करने की कुछ बात नहीं। तुम्हें जितना मूर्ख समझा जाता है, उतने तुम वास्तव में हो नहीं। देखता हूँ कि इन सफ़ेद टुकड़ों का दाम तुम्हें भी मालूम है। अच्छा, भली भाँति काम करोगे तो इनमें से दो-चार तुम्हें भी इनाम में मिल सकेंगे। लेकिन इनको भुनाने में तनिक होशियारी से काम लेना पड़ेगा। ये सब जगह चल नहीं सकते।"

कल्लू ने अस्पष्ट स्वर में कहा—"नक़ली रुपये...ये सब नक़ली रुपये"

सामने ही एक बहुत बड़े दरवाज़े में लोहे की कील लगी हुई थी। कल्लू की मदद से रामसेवक ने जैसे-तैसे उसे खोला। बाहर एक पतली अँधेरी गली थी। फ़र्श पत्थर से बना था। बग़ल से एक पतला नाला धीरे-धीरे बह रहा था। रामसेवक ने सामने की ओर उँगली से इशारा कर कहा—"यह नाला जहाँ नदी से मिला है, वहीं खलासी आवेगा।" एकाएक वह रुक गया और कल्लू का कुर्ता खींचकर उसे पीछे को खींच लाया। उसे एक नये ढङ्ग की आवाज़ सुन पड़ी थी।

रामसेवक ने कल्लू को कोठरी के भीतर खींचकर चुपचाप दरवाज़ा बन्द कर दिया। दरवाज़े के छेद में से सामने देखते हुए वे आनेवाले आदमी की बाट बेचैनी से जोहने लगे। दीवार पर रोशनी की झलक पड़ी और उसी में एक आदमी की शक्ल दीख पड़ी। उसे पहचानकर रामसेवक की आँखों से चिनगारियाँ निकलने लगीं। कल्लू का एक हाथ ज़ोर से पकड़े हुए वह दाँत पीसता हुआ बोला—"फिर वही आदमी जो राधाकृष्ण के मामले में और हवालात में गया था! लेकिन इस बार हरिनारायण का आख़िरी समय नज़दीक आ गया है।"

कुर्ते की जेब से रामसेवक ने एक तेज़ छुरा निकाला। उस ओर देखते ही कल्लू का सारा शरीर काँप उठा।

धीरे-धीरे दरवाज़ा खोलकर, कल्लू को खींचता-खाँचता, रामसेवक हरिनारायण का पीछा करने लगा। दबे हुए स्वर में, क्रोधपूर्वक, बोला—"हर वक्त हम लोगों के पीछे-पीछे घूमते हुए मैं उसे और नहीं देखना चाहता।"

वे लोग हरिनारायण के बहुत पास आ गये थे। लेकिन हरिनारायण बेखटके धीरे-धीरे चुपचाप नदी की ओर चले जा रहे थे। इसी वक्त उनके पीछे आकर रामसेवक ने उन पर वार करने के लिए छुरा ऊपर की ओर तान लिया। इस वक्त हरिनारायण नदी के किनारे पहुँचकर न जाने क्या देखने को तनिक झुककर खड़े थे।

इसी समय न जाने क्या समझकर कल्लू ने एकाएक हरिनारायण की पीठ में ज़ोर से पैरों की ठोकर मारी, जिससे वह उलटकर नदी की धारा में जा पड़ा।

एक आवाज़ हुई और पानी पर तनिक हलचल देख पड़ी।

कल्लू की करतूत से रामसेवक पहले तो कुछ क्षण तक उसकी ओर हक्का-बक्का सा देखता रहा, फिर उसे कोसता हुआ चिल्ला उठा—"गधा, सुअर !......"

कल्लू सिर्फ़ अनजान की तरह ज़रा मुसकराया; कुछ भी नहीं बोला।

६

पीछे से एकाएक और तेज़ी से धक्का खाने पर भी हरिनारायण बिलकुल नहीं घबराये। तैरना उन्हें भली भाँति मालूम था। बहाव के साथ कुछ दूर आकर वे सूखी ज़मीन पर आये। सारा शरीर थक गया था। कुछ देर तक तो वे एक नाव के पीछे सुस्त पड़े रहे; बाद को उठ बैठे। उन्होंने अपने गीले कपड़ों को निचोड़ा। बाद को धीरे-धीरे बड़ी सड़क तक आये और एक ख़ाली, किराये की, मोटरगाड़ी पर सवार हो घर की राह पकड़ी।

× × × ×

दूसरे दिन हरिनारायण 'वर्तमान संसार' के दफ़्तर में बैठे ही थे कि चपरासी ने बताया कि एक भले घर की स्त्री उनसे मिलना चाहती है। हरिनारायण ने उठकर उससे भेंट की। ये निर्मलादेवी थीं। बड़ी उतावली से इन्होंने कहा—"हरिनारायण बाबू, आपकी कल की रिपोर्ट मैंने पढ़ी है। मेरे लिए आप जो परिश्रम कर रहे हैं, उसके लिए आपको धन्यवाद! लेकिन इतनी दया और करें। भैया जब जीवित हैं तब उनका पता-ठिकाना तो बता दीजिए।"

हरिनारायण बड़े असमंजस में पड़े। कल के अख़बार में उन्होंने सिर्फ़ रहस्य को और जटिल करने के उद्देश्य से राधाकृष्ण के जीवित होने की बात लिखी थी। कुछ देर सोचते रहकर वे बोले—"वे अब इस लोक में नहीं हैं। आप अब दिल को कड़ा कर लें।" निर्मला देर तक रोती रहीं। कुछ देर तक किसी के मुँह से एक भी बात नहीं निकली।

निर्मला जाने को तैयार हुई थीं कि इसी समय नौकर ने एक और आदमी के आने की सूचना दी। जो राधाकृष्ण के ख़ून के बारे में कुछ कहना चाहता था।

"अच्छा, उसे ले आओ।"

निर्मला की आँखें भर आईं। हरिनारायण ने उनकी ओर देखकर कहा—"आपको वे सब बातें न सुननी चाहिएँ। अगर आपको तकलीफ़ न हो तो तनिक देर के लिए उस कमरे में बैठें।" लेकिन निर्मला इस पर राज़ी नहीं हुईं।

आगन्तुक ने कमरे के भीतर आकर दोनों को नमस्कार किया। फिर कहा—"पण्डितजी, आपने कल लिखा है न कि सरकारी मकान की छत से राधाकृष्ण की लाश ग़ायब की गई है। मन ही मन मुझे इस पर हँसी आई; क्योंकि वहीं के घाट पर तो मैं रहता हूँ। आपने यह भी लिखा है कि वह किसी खड्ड में डाल दी गई होगी और उसे गीदड़-कुत्ते खा गये होंगे। लेकिन, बाबू साहब, यह सब कुछ नहीं हुआ है। मैंने अपनी आँखों राधाकृष्ण को भागते देखा है बाबूजी। वे कदापि मरे नहीं हैं।"

निर्मला तेज़ी से उस आदमी के पास पहुँचकर बोली—"तुमने क्या देखा है ?"

"कल ज़रा सबेरे ही मैंने देखा कि कपड़ें की गठरी की तरह कोई पदार्थ नदी के पानी में वेग से गिरा। लेकिन, आपको यक़ीन न होगा, वह लहरों के साथ वह नहीं गया; बल्कि तैरता हुआ सूखी ज़मीन पर पहुँच गया। फिर वहाँ से कहीं को चला गया। यह बिलकुल सच है।"

निर्मला की आँखें चमक उठीं। वे हरिनारायण से बोलीं—"भैया जीते हैं!"

उस आदमी को बिदा कर हरिनारायण ने उन्हें समझाया—"आप धीरज रक्खें। उस आदमी का कहना सच तो है, लेकिन वह आपके भैया नहीं हैं। वह कोई दूसरा आदमी था। आपके भैया इस दुनिया में नहीं हैं।" हरिनारायण के कथन में सचाई थी। यह निर्मला भली भाँति समझ गईं। आँखों में आँसू भरे हुए वे कहने लगीं—"तअल्लुक़े-दार रामकुमारसिंह के मारे जाने के बाद मेरे पिताजी रानी लीलावती के मैनेजर नियुक्त हुए। एक दिन वे भी बेरहमी के साथ मार डाले गये। फिर हम दोनों भाई-बहन इस शहर में आकर रहने लगे। राधाकृष्ण भैया ने चित्र-कला को आजीविका का साधन बनाया और कोशिश करके एक नौकरी ढूँढ़ ली। शहर में हम लोगों के मित्र नहीं के बराबर थे। सिर्फ़ रानी लीलावती बीच-बीच में हमारे यहाँ आतीं, हर तरह की मदद दिया करती थीं।"

हरिनारायण ने उन्हें रोककर कहा—"रानी साहबा की हत्या कैसे हुई ?"

निर्मला—मेरी समझ में उन्होंने आत्महत्या की है।

हरिनारायण—इसका क्या प्रमाण है ?

निर्मला—चिट्ठी पढ़ने से तो यही अन्दाज़ लगता है। लेकिन आत्महत्या करने जैसा कोई कारण मुझे नहीं दीखता। अपने बैंकर शर्मा-वर्मा की मारफ़त वे अकसर शेयर ख़रीदा करती थीं। उनके स्वभाव की यही एक कमज़ोरी मुझे मालूम है।

हरिनारायण—शर्मा-वर्मा से आपकी जान-पहचान है ?

निर्मला—बहुत मामूली।

हरिनारायण—आपका कोई और परिचित व्यक्ति यहाँ है ?

निर्मला—एक विधवा मौसी हैं। वहीं मैं इन दिनों रहती हूँ।

हरिनारायण—एक बात और बता दीजिए। जहाँ तक पता चला है, रानी लीलावती की हत्यावाले दिन कोई आदमी आपके भैया के पास मिलने नहीं आया था। फिर रानी साहबा कैसे उनके घर गईं ? इसमें कोई गहरा रहस्य है। लौट आने पर घर में आपको कुछ सन्देहजनक चीज़ मिली ?

एकाएक एक बात निर्मला को याद हो आई। उन्होंने उत्तेजित होकर कहा—"हाँ-हाँ; एक चीज़ ज़रूर मुझे मिली है। टेबल के चारों तरफ़ कुछ काग़ज़ बिखरे हुए थे। उनमें से एक पर कुछ नाम और पते लिखे थे। हम लोग जैसी नीली स्याही से लिखते थे, ठीक वैसी ही स्याही से उस पर लिखा गया है।"

"तो वह चिट्ठी आपके घर पर ही लिखी गई है ?"

"जी हाँ, लेकिन भैया की लिखावट नहीं है।

"रानी लीलावती के हाथ की भी नहीं ?"

"नहीं।"

"उसमें क्या लिखा है ?"

"हमारे परिचित कुछ लोगों का नाम-पता और दो-एक तारीखें।"

"अच्छा, वह काग़ज़ किसी दिन मुझे दिखाइएगा।"

बेहरा ने आकर हरिनारायण को जताया कि उन्हें पबलिक प्रासिक्यूटर के दफ़्तर से कोई बुला रहा है।

७

"वारुणी ! ओ वारुणी ! !"

"राजकुमारीजी, क्या आज्ञा है ?"

"जा देख तो, कै बजे हैं ?"

वारुणी घड़ी देखने के लिए जा रही थी कि कुमारी कनकलता ने उसे रोककर कहा—"चली मत जाना वारुणी, मेरे साथ ही साथ रहना।"

नौकरनी वारुणी ने वापस आकर कहा—"राजकुमारीजी, मुझे जाने से आपने क्यों रोका ?"

कनक०—आज वर्ष पूरा होने का दिन है वारुणी। न जाने क्यों कलेजा काँप रहा है।

कुछ रात गये कुमारी कनकलता स्नान करने की तैयारी कर रही थीं। होटल का शोर-ग़ुल धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा था।

कई वर्ष पहले कुमारी कनकलता कश्मीर से इस शहर में आकर रहने लगी थीं। लेकिन अभी तक स्वतन्त्र रूप से कोई मकान लेकर रहने की हिम्मत उन्हें नहीं हुई। इसी से इस बड़े होटल के कुछ कमरे किराये पर लेकर वे उनमें रहती थीं। कुछ दिनों से वे अकेली किसी तरह स्नानागार में न जाती थीं। उस समय स्नान-गृह में या उसके पासवाले कमरे में वारुणी को रहना पड़ता था। आज रात भी वे किसी अनिश्चित भय से उद्विग्न हो रही थीं। वारुणी को पल भर के लिए भी छोड़ने की हिम्मत नहीं होती थी। आज मिस्टर गुप्त ने उन्हीं के लिए आनन्दोत्सव का आयोजन किया है। ठीक समय पर वहाँ पहुँचना आवश्यक है।

कनकलता की आशङ्का का कारण वारुणी से छिपा नहीं था। प्रायः दो वर्ष पहले, ठीक आज की ही तारीख़ को, इसी वक़्त, कनकलता स्नानागार में नहा रही थी कि न जाने कहाँ से एक अजीब आदमी वहाँ आ पहुँचा। उसने मार डालने की धमकी देकर कनकलता से बहुत सा रुपया ऐंठ लिया। यह कोई वैसे तो सनसनीदार घटना नहीं थी; लेकिन उस काली पोशाकवाले डकैत को सांकोपांज़ा समझकर कनकलता पर असाधारण आतङ्क छा गया था।

वारुणी ने कनकलता को ढाढ़स देने के लिए कहा—"राजकुमारी, वे बातें भूल जाने की कोशिश कीजिए। आज आपकी ख़ुशी का दिन है।"

कुमारी कनकलता ने उत्तेजित होकर कहा—"सब कुछ जानती हुई भी मैं किसी तरह भय दूर नहीं कर सकती। वहाँ जाने की आज मेरी तनिक भी इच्छा नहीं है। पन्द्रह दिन भी नहीं हुए, रानी लीलावती मार डाली गई हैं।"

इस समय कनकलता शृङ्गार कर रही थीं। वे एक-एक कर लाखों रुपये के जवाहरात के गहने पहन रही थीं। वारुणी ने कनकलता का ऐसा अनुपम शृङ्गार कभी नहीं देखा था।

आइने में अपनी सुन्दरता और एक बार देख कुमारी कनकलता नीचे उतर आईं और मोटर पर जा बैठीं।

× × × ×

बुआ अपने घर के भीतर बैठी हुई थीं। इसी समय ज़ोर से दरवाज़ा खोलकर कोई कमरे में घुसा। आगन्तुक हाँफ रहा था। उसकी ओर देख बुआ ने तनिक रूखी आवाज़ से पूछा—"क्यों रे फ़क़ीर! इतनी देर क्यों हुई? न जाने कब से तेरी राह देख रही हूँ। अभी-अभी हमीदा आ जायगी।"

फ़क़ीर चुप रहा।

बुआ—आख़िर इतनी देर क्यों हुई? क्या ख़बर है?

फ़क़ीर ने तनिक सोचकर कहा—"अभी तक तो सब अच्छा ही है बुआ। जल्द न आने का कारण क्या आपको मालूम नहीं? वारुणी से मुलाक़ात करने में ही तो इतनी देर हुई है।"

"वारुणी ने कहा क्या?" बुआ ने उत्सुकता के साथ पूछा।

"कहेगी क्या वह? आज उसकी मालकिन ने लाखों रुपये के गहने पहन रक्खे हैं। गहने बिलकुल जवाहरात के बने हुए हैं। कहूँ क्या बुआ, मेरे तो सुनकर ही होश उड़ गये हैं।"

तनिक चिन्ता का भाव प्रकट करती हुई बुआ बोलीं—"हाँ, अगर असली जवाहरात होंगे तो एक लाख का माल हो सकता है।"

बाहर किसी के पैरों की आवाज़ सुनाई पड़ी। फ़क़ीर का तो कलेजा दहल गया। दबी ज़बान से बोला—"कौन आया है? किसी के आने की बात थी क्या?"

आँखें नचाकर बुआ फ़क़ीर की ओर देखती हुई बोलीं—"वाह, तू भी कैसा मर्द है! तनिक खटका हुआ और गीदड़ की तरह माँद में घुसने को तैयार हुआ। अरे भाई, कहती तो हूँ कि डरने की कुछ बात नहीं। चुपचाप बैठे तो रहो।"

फ़क़ीर डरता हुआ बोला—"बुआ, आपसे सारी बातें मैंने कह दीं। अब हमें छोड़ दो न?"

बुआ—तेरा अब यहाँ काम ही क्या है? लेकिन यदि तू हमीदा से भेंट करना चाहे तो थोड़ा और ठहर जा।

लेकिन बुआ की बातों की कुछ भी परवा किये बिना फ़क़ीर ने दरवाज़ा खोला और वह चटपट चल खड़ा हुआ।

कोई पाँच मिनट बाद हमीदा ने घर में पैर रक्खा। बुआ कुछ सोच सी रही थीं। एक बेंच पर बैठते हुए हमीदा ने पूछा—"क्या समाचार है बुआ?"

बुआ—उधर उन लोगों ने अपना इन्तज़ाम ठीक कर रक्खा है। अभी-अभी फ़क़ीर आकर बड़ी अच्छी ख़बर दे गया है। उसे वारुणी से पता चला है कि राजकुमारी ने लाखों रुपयों के गहने पहन रक्खे हैं।

कुन्दन के चेहरे पर प्रसन्नता की मुसकुराहट देख पड़ी। बोली—"बुआ, मुझे चटपट एक भिखमङ्गे की पोशाक दे दीजिए। इतना ध्यान तुम और रक्खो कि मैं उसे ठीक-ठीक पहन लूँ।"

× × × ×

भिखमंगिन का भेस बनाये हुए हमीदा को पहचान लेना कोई हँसी-खेल नहीं है। बुआ के साथ-साथ वह पीछेवाली कोठरी में आई। एक अलमारी के भीतर से उसने कुछ शीशियाँ और बोतलें, जिन पर लेवल लगा था, निकालीं। फिर उनमें से एक शीशी, जिसके लेवेल पर क्लोरो-

फ़ार्म लिखा था, उसने चुनकर अलग रख ली। रुई के एक पैड पर इसकी कुछ बूँदें छिड़ककर उसको कपड़ों के भीतर रख लिया। अब रुई का एक चेहरा बनाती हुई वह बुआ से बोली—"मोटर रुकने पर मैं भीख माँगती हुई दाहनी ओर की खिड़की के पास जा खड़ी होऊँगी। ज्योंही राजकुमारी मेरी ओर ध्यान देंगी, दूसरी ओर से पहुँचकर भोला उनकी नाक के ऊपर यह चेहरा दृढ़ता से लगा देगा। इससे वे चिल्ला न सकेंगी। भोला उन्हें कसकर क़ाबू में किये रहेगा और मैं उनके सारे गहने एक-एक कर उनके शरीर से उतारकर अपनी झोली में भर लूँगी।"

बुआ ने कहा—"इन्तज़ाम अच्छा ही है। लेकिन मोटर रोकी क्योंकर जायगी?"

हमीदा—इसकी चिन्ता मत कीजिए बुआ। यह काम उन लोगों के ज़िम्मे है।

बुआ—भोला को कहाँ पाओगी? सुना है, उस बेचारे के तो हाथ-पैर टूट गये हैं।

हमीदा—नहीं तो, हाथ-पैर तो कुछ भी नहीं टूटा है। वह तो ज्यों का त्यों है।

बुआ—अच्छा, भोला के सिवा और कौन-कौन हैं? मैं उनके नाम जानना चाहती हूँ।

हमीदा ने गहरे आश्चर्य के साथ कहा—दीनानाथ और रघुनाथ भी हैं।

बुआ—अच्छा, रघुनाथ है तो कुछ हर्ज नहीं। हाँ, इसमें रामसेवक नहीं दिखाई पड़ रहा है। इसकी क्या वजह है? वह इसमें शामिल नहीं है क्या?

हमीदा—है क्यों नहीं। लेकिन वह तो रास्ता दिखलाकर ही दूर हट जाया करता है। अच्छा, अब मैं चलती हूँ बुआ।

पीछेवाले रास्ते से हमीदा कमरे से बाहर चली गई।

× × × ×

मिस्टर केदारनाथ गुप्त का विशाल भवन बग़ीचे के किनारे है। महल में जाने का रास्ता दोनों ओर तरह-तरह के रङ्ग-बिरङ्गे फूलों से सजाया गया है। बिजली के प्रकाश में महल मानों ख़ूबसूरत युवती की तरह हँस रहा है। चारों तरफ़ जलसे की धूम सी मच गई है। फाटक के सामने सड़क पर सवारियों का ताँता सा लगा हुआ है। लोगों की बेहद भीड़ है। शहर का कोई भी प्रतिष्ठित आदमी ऐसा नहीं जो न आया हो। फाटक पर पुलिस के कई जवान निगरानी करने के लिए तैनात हैं। भिखमंगों के झुण्ड के झुण्ड महल के फाटक पर आकर जमा हो जाते हैं और पुलिसवाले उन्हें डाँट-डपटकर खदेड़ देते हैं। इससे वे एक दूसरे पर गिरते-पड़ते हुए पीछे हट जाते हैं।

मोटर-ड्राइवरों की मजलिस भी बाक़ायदा लगी हुई है। उनको बहुत से मालिक लोगों के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हुआ है आज। सब आपस में उन्हीं की आलोचना-प्रत्यालोचना कर रहे हैं।

इसी भीड़ में मिलकर हमीदा और भोला मिस्टर केदारनाथ गुप्त के महल के सामने, पास ही, आ खड़े हुए।

दीनानाथ मामूली नौकर का भेस बनाये हुए था और रघुनाथ मोटर-ड्राइवर का। घूमता-फिरता वह एक मोटर के पास आ खड़ा हुआ और उसके ड्राइवर से बोला—"लतीफ़, अच्छे तो हो?"

लतीफ़ को बिलकुल ख़याल नहीं आ रहा था कि इन महाशय को कभी कहीं देखा हो। कुछ देर तक आँखें फाड़कर प्रश्नकर्ता का मुँह ताकते रहकर बोला—"तुम्हें मैं पहचानता नहीं।"

"पहचानते नहीं हो?" रघुनाथ मानो आसमान से गिरता हुआ बोला—"तुम मुझे भूल गये क्या? पारसाल मैं नई बस्ती के ठाकुर साहब के यहाँ नौकर था।"

लतीफ़ को फिर भी उसकी याद नहीं आई। कुमारी कनकलता के यहाँ नौकर होने पर अब तक इतने ज़्यादा आदमियों से उसकी जान-पहचान हो गई है कि उनमें से हर एक को पहचान लेना बहुत ही मुशकिल है।

लतीफ़ से दीनानाथ का परिचय कराता हुआ रघुनाथ बोला—"ये हमारे पालीवाल साहब हैं। इन्होंने अपना एक मोटर का कारख़ाना खोल रक्खा है। इनके यहाँ मोटर का सब सामान मिलता है। तुम्हें जो सामान लेना हो, इनके यहाँ से ले लिया करो।"

इसी वक़् एक कम उम्र का भिखमंगा पास आ खड़ा हुआ। यह भोला था, जो सब बात-चीत सुनकर पास आ खड़ा हुआ था। लतीफ़ ने उसके हाथ पर कुछ पैसे रखकर कहा—"अरे भाई, गाड़ी की ख़बरदारी करते रहना ज़रा; मैं अभी आता हूँ।"

भोला को मुँहमाँगी मुराद मिली। बोला—"आप जाइए, किसी की मजाल नहीं कि यहाँ आ जाय।"

दोनों साथियों और भोला में आँखों के इशारे से बात हुई। वे लतीफ़ के साथ दूकान की ओर चले।

कुछ देर के बाद भोला खड़ा-खड़ा उकता उठा। दीनानाथ और रघुनाथ को अब तक लौट आना चाहिए था। हमीदा एक बार आकर उससे, धीमी आवाज़ में, कुछ कह गई।

आख़िर रास्ते के मोड़ पर रघुनाथ के दर्शन मिले। तेज़ी से वह भोला के पास आकर बोला—"रास्ते के दूसरे मोड़ पर गाड़ी को रुक जाना चाहिए। इससे तुम इस मोटर में से बहुत सा तेल निकाल फेंको और थोड़ा सा रहने दो; क्योंकि जब वह थोड़ा सा तेल चुक जायगा तब ड्राइवर को तेल की तलाश में मोटर से उतरना ही पड़ेगा और हम लोग अपना मतलब साध लेंगे। लो, यह बोतल। लतीफ़ के आते ही नौ-दो ग्यारह हो जाना और रास्ते पर जहाँ घुमाव है, वहाँ छिपकर खड़े रहना।"

आदेशानुसार भोला टैङ्क में से तेज़ी से तेल निकालकर फेंकने लगा।

मिस्टर गुप्त के महल के सामने खड़ी सवारियों में कुछ चञ्चलता दीख पड़ी। जलसा ख़तम होने को था। लतीफ़ लौट आकर मोटर पर बैठ गया।

रास्ते के मोड़ पर पहुँचकर भोला ने देखा कि हमीदा खड़ी है।

ज़्यादा देर तक उन्हें प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। हमीदा ने भोला को सावधान करते हुए कहा—"चुपचाप सुनो।" अब बड़ी उत्सुकता के साथ वे रास्ते की ओर देखने लगे।

कुमारी कनकलता की मोटर के रवाना होने की प्रतीक्षा दीनानाथ और रघुनाथ अधीर होकर कर रहे थे। ऐसा क़ीमती शिकार मिलने का मौक़ा उन्हें बहुत दिनों से नहीं मिला था। उन्होंने अतिथियों को एक एक कर मिस्टर गुप्त के महल से निकलते देखा। लेकिन ऐसे शान-दार जलसे में शरीक होकर लौटनेवालों के उतरे हुए चेहरे देख दीनानाथ ने रघुनाथ से कहा—"भाई, मामला क्या है? सभी लोग जैसे श्मशान से लौटे आ रहे हैं।"

लोगों को जिसकी कल्पना भी नहीं थी, वही सच हो गया। लोग आपस में बातचीत कर रहे थे कि मिस्टर गुप्त के यहाँ का उत्सव एक लोम-हर्षण दुर्घटना में परिणत हो गया। पुलिस ने सारा मकान घेर लिया है।

इस घटना की ठीक-ठीक ख़बर तो वे लोग नहीं पा सके लेकिन कई आदमियों से जो अधूरी ख़बरें मिलीं उन्हें जोड़-जाड़कर घटना का जो स्वरूप खड़ा हुआ उससे रघुनाथ का चित्त बहुत खीझ उठा। उसने गरजकर कहा—"दीनानाथ, हमसे पहले ही किसी आदमी ने सफ़ाई से काम कर डाला। लेकिन जिसने चोरी की और सैकड़ों आदमियों के बीच बेखटके अपना काम पूरा कर चला गया वह है कौन? इसमें सन्देह नहीं कि उसकी बुद्धिमानी, हिम्मत और उस्तादी ग़ज़ब की है! यह काम साङ्गोपाङ्ग के सिवा दूसरे का नहीं।"

८

मिस्टर गुप्त के सजे हुए महल में कुमारी कनकलता के आते ही जान सी आ गई। उसके सौन्दर्य, क़ीमती पोशाक और जवाहरात जड़े हुए गहनों ने सभी का चित्त आकृष्ट कर लिया। एक सुन्दरी बैठी हुई कुछ

गा रही थी। हरिनारायण और मिस्टर गुप्त के सिवा और भी अनेक निमन्त्रित सज्जन बैठे हुए सङ्गीत सुन रहे थे।

बेहद भीड़ थी। मारे गर्मी के कुमारी कनकलता का बुरा हाल हो रहा था। तनिक आराम करने के लिए वे कमरे के कोने की ओर चली गईं। एकाएक उन्हें जान पड़ा जैसे किसी ने उनका कपड़ा खींच लिया हो! इससे उन्होंने पीछे मुड़कर देखा।

बैङ्कर रामचरण शर्मा ने नम्रता के साथ कहा—"कुमारी कनकलता, खेद है कि भीड़ के धक्के के कारण मैं आपसे टकरा गया। आपकी साड़ी शायद फट गई है। लेकिन लाचारी से आपका जो नुक़सान कर बैठा हूँ उसके लिए, आशा है, आप मुझे क्षमा कर देंगी।"

सचमुच इतनी बेशक़ीमत साड़ी का कुछ हिस्सा फट गया था। कनकलता ने कहने को तो कह दिया—'कुछ हर्ज नहीं', लेकिन इससे चित्त उनका खिन्न हो गया। खेद की बात यह थी कि हज़ारों आदमियों के बीच फटी साड़ी पहने वे कैसे रह सकेंगी।

कुमारी कनकलता ने उस कमरे में जाकर साड़ी के फटे हुए हिस्से को बदलकर पहनने का निश्चय किया जो उनके विश्राम के लिए मिस्टर गुप्त ने सजा रक्खा था। कमरे के दरवाज़े पर एक नौकरनी खड़ी थी। कनकलता ने उससे कहा कि तुम्हारी मुझे कुछ ज़रूरत नहीं। अब वे ज्योंही कमरे में घुसीं, सुगन्ध से उनकी तबीयत ख़ुश हो गई। उसमें तरह-तरह की शृङ्गार की और जल-पान की वस्तुएँ रक्खी हुई थीं।

कनकलता ने पाउडर का एक डब्बा खोला; फिर शीशी से एसेंस लेकर बालों में और चेहरे पर उसकी कुछ बूँदें छिड़कीं। भोजन के अनन्तर यह मीठी ख़ुशबू उन्हें बहुत भली प्रतीत हुई।

कनकलता को एक प्रकार का आलस्य सा मालूम होने लगा। वे एक पलँग पर बैठ गईं। आँखें बन्द करने की तबीयत हुई। एक अजीब क़िस्म की महक नाक में आई जिससे वे बार-बार साँस लेने लगीं। बेहोशी आने लगी। पल भर के लिए उनकी आँखें झँप गईं। फिर जब

आँखें खुलीं तो घर में घना अँधेरा था। पलँग से उठने के लिए लाख कोशिश करने पर भी वे नहीं उठ सकीं। शरीर में तनिक भी शक्ति नहीं रही।

मिस्टर गुप्त जब अपनी भावी-पत्नी को खोजते हुए आये तो दरवाज़ा बन्द मिला। उन्होंने पहले तो दरवाज़े पर हलके धक्के दिये लेकिन जब कुछ जवाब नहीं मिला, तब दरवाज़ा ठेलकर भीतर घुसे। जल्दी से बिजली का स्विच दबाकर उन्होंने कमरे में उजेला किया। लेकिन वहाँ का दृश्य देखकर उनकी आँखों के आगे अँधेरा छा गया।

मिस्टर गुप्त सीधे मोटरख़ाने की ओर लपके। वे पागल से हो गये थे। इसके बाद ही शोर-ग़ुल होने लगा। जलसा उखड़ गया। सबके मुँह से यही सुन पड़ता था—"कुमारी कनकलता का ख़ून होने में ज़्यादा कसर नहीं रह गई थी। उनका सब कुछ लुट गया...इत्यादि।"

ख़बर पाते ही पुलिस आ गई। उसने केदारनाथ गुप्त के महल का फाटक बन्द करा दिया और लोगों से रुके रहने को कहा।

बात की बात में मिस्टर गुप्त एक अँगरेज़ को साथ लिये आ पहुँचे। ये ख़ुफ़िया पुलिस के इंस्पेक्टर मिस्टर रीड थे। मिस्टर गुप्त ने फोन से उन्हें दुर्घटना की ख़बर देकर तहक़ीक़ात करने के लिए बुलाया था। दोनों आदमी बातें करते हुए उस कमरे के सामने आये, जहाँ दुर्घटना हुई थी।

डाक्टर ने बताया कि कोई वैसे ख़तरे की बात नहीं है। गहरी नशीली चीज़ से ये बेहोश कर दी गई हैं। घंटे भर में इन्हें होश आ जायगा। कुमारी कनकलता के शरीर पर की चोट से मालूम होता है कि जल्दी में गहने छीनने की कोशिश की जाने से जहाँ-तहाँ खरोंच आ गई है।

दरवाज़े के सिवा घर में आने के दो रास्ते और हैं—बड़ी खिड़कियाँ। लेकिन उनमें लोहे के छड़ लगे हैं। मालूम होता है, लुटेरा कनकलता के पीछे-पीछे दरवाज़े के रास्ते घर में घुसा। रीड साहब ने तनिक झुककर कनकलता के शरीर को देखा तो उन्हें साड़ी का फटा हुआ हिस्सा दीख

पड़ा। अब उन्होंने समझ लिया, वे साड़ी बदलने अकेली कमरे में आई होंगी और पीछे से लुटेरे ने उन पर आक्रमण किया होगा।

वे उठ खड़े हुए और मिस्टर गुप्त से बोले—"मैं एक-एक कर सबकी तलाशी लेना चाहता हूँ। और इसका आरम्भ करना चाहता हूँ आपसे ही।"

देर तक तलाशी होती रही; लेकिन कुछ भी नतीजा नहीं निकला। हरिनारायण जब घर लौटने की तैयारी में थे, तब पीछे से न जाने किसने अस्पष्ट स्वर में उनके कानों में कहा—"हरिनारायणजी! सावधान। यह ख़तरे की जगह है।"

६

कल रात जो लोग मिस्टर गुप्त के यहाँ मिहमान थे, उनमें से हर एक से बहुत से प्रश्न पूछकर अन्त में हरिनारायण कोर्ट-बिल्डिंग के सामने आकर मोटर से उतर पड़े। उन्होंने यह मान लिया कि इस मामले की कुछ भी बात उनकी समझ में नहीं आई। मिस्टर रीड की राय है कि मिहमानों में से ही किसी आदमी का यह काम था। फिर भी हर एक की तलाशी लेने पर उन्हें कुछ नहीं मिला। इसके बाद ही हस्तरेखा की जाँच करने-वाले कर्मचारी श्रीयुत कृष्णगोपाल माथुर घटनास्थल पर पहुँचे। उन्होंने कुमारी कनकलता के शरीर के ऊपर उँगलियों के चिह्न खोज निकाले। इससे पुलिस को तहक़ीक़ात में मदद मिल सकती है। लेकिन यह तो असम्भव है कि मिस्टर गुप्त के निमन्त्रित अतिथिगण माथुर साहब के द.फ़्तर में परीक्षा देने को हाज़िर हो जायँगे। वस्तुतः जो अपराधी होगा वह तो ख़बर पाते ही नौ दो ग्यारह हो जायगा।

कोर्ट-बिल्डिंग में पैर रखते ही हरिनारायण ने सोचा—"माथुर साहब से मुलाक़ात कर समझने की कोशिश करनी चाहिए।......"

वे माथुर साहब के द.फ़्तर में पहुँचे। माथुर साहब उनकी ओर देखकर बोले—"कहिए, आप क्या जानना चाहते हैं?"

"कल रात जो दुर्घटना हो गई है, उसका पूरा ब्योरा। क्या यह सही है कि आपने उन सब निमंत्रित लोगों को बुला भेजा है जो कल मिस्टर गुप्त की दावत में शरीक हुए थे? इससे क्या नतीजा निकलेगा?"

माथुर ने ज़ोर से हँसकर कहा—"आपका भी इस बात पर यक़ीन नहीं है कि उँगलियों के निशान से अपराधी का पता लग सकता है? अच्छा, आप फ़िक्र न करें। उँगलियों का जो निशान मुझे मिला है, उससे अभी-अभी किसी को गिरफ़्तार किया जायगा।"

"कृपा कर मुझे बताइए कि उस दिन मेरे आने के बाद क्या हुआ।"

माथुर ने तनिक आनाकानी कर कहा—"सब लोगों के चले जाने पर मिस्टर रीड ने घर का कोना-कोना ढूँढ़ा; लेकिन एक भी चीज़ उन्हें नहीं मिली। कुमारी कनकलता जिस वक़्त अपने घर जाने को तैयार थीं, मैं पहुँचा। उनका कहना था कि 'एक एसेन्स लगाने के बाद ही मुझे बेहोशी आने लगी।' शीशी के भीतर किसने क्लोरोफ़ार्म भर रक्खा था, इसका भी कुछ पता नहीं लगा। डाक्टर ने जाँच करने के बाद कहा कि हार छीनने में तनिक देर और हुई होती तो कुमारी कनकलता की मौत होने में देर नहीं थी। गले में ख़ून की कुछ बूँदें भी मैंने देखीं। अतः मैंने आसानी से उँगलियों के निशान ले लिये।"

हरिनारायण—तो क्या निशान ही अपराधी को गिरफ़्तार करने के लिए काफ़ी हैं?

माथुर—बेशक। मैंने सिर्फ़ निशान ही नहीं लिया है, बल्कि अपराधी को भी मुट्ठी में ले लिया है। वह हाथ मैं भली भाँति पहचानता हूँ। मैंने मिला लिया है, वह हू-ब-हू वही निशान है जो कुछ दिनों पहले, इसी जगह, मैंने एक आदमी का लिया था। वह राधाकृष्ण के सिवा और कोई नहीं।

हरिनारायण के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। वे चटपट बोल उठे—"राधाकृष्ण तो मर चुके हैं।"

"लेकिन हमारा विज्ञान तो यही कहता है कि यह राधाकृष्ण के हाथों की करामात है।"

"जो आदमी मर गया है, वह कैसे यह कर सकता है?"

"एक-एक रेखा तक मिलती है दोनों निशानों की। मुझे तो राधाकृष्ण के अपराधी होने में रत्ती भर भी सन्देह नहीं है।"

हरिनारायण उठ खड़े हुए। बोले—"लेकिन कैसे विश्वास करूँ! ख़ुद मैं ही जिसे मरा हुआ समझता हूँ, उसी की अँगुलियों के चिह्न कल कुमारी कनकलता के शरीर पर पाये गये!"

हरिनारायण सोचते हुए कमरे से बाहर निकल आये। उँगलियों के निशान सचमुच यदि राधाकृष्ण के हों तो मानना होगा कि न सिर्फ़ कल की घटना वरन् गत कुछ दिनों की घटनाएँ एक पेचीदा रहस्य के धागे में पिरोई हुई हैं।

लेकिन उनके चित्त के भीतर तो सांकोपाङ्गा घर किये हुए है। उनका ख़याल है कि इन सब में उसी का हाथ है।

१०

शर्मा-वर्मा बैंक के शानदार महल के भीतर पैर रखते ही हरिनारायण के पास आकर एक नौकर ने पूछा—"किसे खोजते हैं?"

"रामचरण शर्मा से भेंट करना चाहता हूँ। मेरा यह कार्ड ले जाकर उन्हें दे दो और कहो कि कुछ ज़रूरी काम है। ज़्यादा देर नहीं लगेगी।"

नौकर चुपचाप चला गया। थोड़ी देर में लौटकर बोला—"छोटे बाबू इस वक्त एक मीटिंग कर रहे हैं। उनसे मुलाक़ात नहीं हो सकती। यदि आपको ज़्यादा ज़रूरत हो तो बड़े बाबू से भेंट कर सकते हैं।"

"अच्छा यही सही!" बड़े बाबू यानी शिवचरण वर्मा से मिलने के लिए हरिनारायण नौकर के साथ-साथ चले।

वर्माजी ने हरिनारायण से भेंट करने में कुछ प्रसन्नता का भाव नहीं व्यक्त किया। हरिनारायण इसे ताड़कर बोले—"मैं आपका अत्यन्त मूल्यवान् समय बरबाद नहीं करना चाहता। रानी लीलावती और कुमारी

कनकलता के सम्बन्ध की दुर्घटनाओं के बारे में आपको अवश्य जानकारी होगी। यही जानने के लिए आप लोगों को कष्ट देने आया हूँ।"

शिवचरण वर्मा ने गम्भीरता के साथ उत्तर दिया—"अख़बारों से बेशक सब जानता हूँ। लेकिन यह समझ में नहीं आता कि उससे हमारा क्या सम्बन्ध है।"

"आपके यहाँ रानी लीलावती के रुपये-पैसे जमा थे। और उस दिन मिस्टर गुप्त के यहाँ दावत में भी आप दोनों आदमी मौजूद थे।"

"ठीक है; लेकिन इससे आप यह उम्मीद न रक्खें कि मैं आपको उससे कुछ ज़्यादा बता सकूँगा जो अख़बारों में निकला है।"

"नहीं, यह उम्मीद रखकर मैं यहाँ नहीं आया हूँ। कृपा कर आप मुझे बता सकेंगे कि रानी लीलावती क्या सचमुच अपना सब कुछ खो बैठी थीं?"

"कुछ दिन पहले ज़रूर उन्हें कुछ घाटा हुआ था।"

"और कुमारी कनकलता?"

"उनका कार-बार हम लोगों के साथ नहीं था।"

"लेकिन मेरा ख़याल कुछ और था।"

"हमारे जैसे बड़े कार-बारवाले के लिए क्या यह सम्भव है कि हम हर एक का नाम याद रख सकें?"

"आप राधाकृष्ण को तो जानते होंगे?"

"रानी लीलावती ने हमसे उसकी जान-पहचान करा दी थी। उनके कहने से एक बार हमने उसकी मदद भी की थी। लेकिन वैसा करने में हमने ग़लती ही की है।"

"तो क्या आप लोग राधाकृष्ण को सचमुच अपराधी समझते हैं?"

"जी हाँ, आपके पत्र के पाठकों का इस मामले में क्या ख़याल है?"

हरिनारायण जवाब सोच ही रहे थे कि कमरे का दरवाज़ा खुलने की आवाज़ हुई। मिस्टर शर्मा और उनके पीछे-पीछे कुछ भले आदमी हाँफते हुए भीतर आये। उनके चेहरों पर उत्तेजना और घबराहट का चिह्न था।

मिस्टर रामचरण शर्मा ने कहा—"एक संगीन डकैती हो गई है।"

"डकैती ! कहाँ हुई है ?"—मिस्टर वर्मा ने घबराहट के साथ पूछा।

शर्मा वैसे ही हाँफते हुए बोले—"स्ट्रेटफ़ील्ड लाइन में।"

हरिनारायण बाहर निकल आये और जल्दी से किराये की एक मोटर कर उक्त मुहल्ले की ओर चले।

जहाँ यह घटना हुई थी, बहुत से लोग जमा हो गये थे। लेकिन इस बीच पुलिस ने घटना-स्थल को घेर लिया था और सवारियों तथा पैदल आदमियों का आना-जाना रोक दिया था।

बड़ी मुश्किल से हरिनारायण भीड़ को चीरकर दर्शकों की पहली क़तार में आ खड़े हुए। पुलिस के द्वारा बनाया गया लकड़ी का घेरा पार किये बिना ठीक-ठीक कुछ जानना मुशकिल है।

पत्र के संवाददाता का प्रवेश-पत्र ढूँढ़ने के लिए हरिनारायण ने जेब में हाथ डाला। इसी समय टूटे हुए ढूह में निकलकर एक आदमी बाहर आ रहा था। हरिनारायण उसके शरीर से टकरा गये। आदमी मज़दूर सा जँच रहा था। उसके सारे शरीर में कीचड़, सुर्ख़ी और चूना लगा हुआ था। उँगलियों के बीच जमे हुए ख़ून की कुछ बूँदें दीख पड़ती थीं।

उस आदमी से चार आँखें होते ही हरिनारायण को ख़याल आया जैसे किसी ने उनके कलेजे में तेज़ छुरी चुभो दी। कैसी अजीब थी उस आदमी की चितवन। इस अपरिचित व्यक्ति की निगाहों में निषेध और आमन्त्रण की तसवीर सी खिंच उठी थी।

हरिनारायण निश्चय नहीं कर पाये कि क्या करें। वह आदमी उस समय भीड़ को ठेलकर बाहर चला जा रहा था। उन्होंने इसी समय अपने एक साथी को उधर ही आते देख उसे तो ख़बर लेने का काम सौंपा और ख़ुद मज़दूर के पीछे-पीछे चलने लगे।

हरिनारायण ने अब तक बहुत सी बातों का पता लगा लिया था। एक ठेलागाड़ी पर, आवश्यक चौकी-पहरे में, शर्मा-वर्मा बैङ्क का बहुत सा

सोना स्ट्रेटफ़ील्ड लाइन के रास्ते जा रहा था। गाड़ी ज्योंही पुल के नीचे पहुँची, पुल का और किनारे की ज़मीन का बहुत सा हिस्सा टूटकर गिर पड़ा। बड़ी मुश्किल से गाड़ी बाहर निकाली गई है और उसे फिर उक्त बैङ्क भिजवाने का इन्तज़ाम हो रहा है।

उस आदमी की हरकतों पर ध्यान देने से मालूम होता था, मानों वह भागना चाहता है। उस पर तेज़ नज़र रखते हुए हरिनारायण उसके पीछे-पीछे चलने लगे। उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा, जब उन्होंने देखा कि वह आदमी तनिक इधर-उधर देखकर एक ख़ाली किराये की मोटर पर सवार हो गया। हरिनारायण को भी संयोग से सामने ही एक दूसरी मोटर मिल गई। उस पर सवार हो वे पूर्वोक्त मोटर के पीछे-पीछे चले।

धीरे-धीरे गाड़ी कुछ दूरी तय करके उस घर के सामने रुकी जहाँ रमाकान्त रहता था। हरिनारायण का हृदय धड़कने लगा।

आदमी गाड़ी से उतरा और ड्राइवर को किराया देकर सीधे घर में घुस गया।

हरिनारायण भी गाड़ी से कूद पड़े और पूर्व-परिचित मकान में गये।

दूसरी मंज़िल पर पहुँचकर वह आदमी उस कमरे में स्वतन्त्रता से घुस पड़ा, जिसमें पहले रमाकान्त रहा करता था। इसके बाद वह दरवाज़ा बन्द करने जा रहा था कि हरिनारायण ने उसका इरादा समझकर दरवाज़े को ज़ोर से ठेलकर भीतर पैर रक्खे। उन्होंने उसका हाथ अपनी मुट्ठी में कसकर पकड़ लिया।

दोनों एकटक एक दूसरे का मुँह देखने लगे। हरिनारायण ने ज़ोर से उसे खींचकर अपनी छाती से लगा लिया।

हरिनारायण की आँखों में आँसू आ गये। तबीयत ठिकाने आने पर उन्होंने अपने को रमाकान्त के उसी परिचित घर में एक आराम-कुर्सी पर पड़ा हुआ देखा। पहले तो उनकी समझ में कुछ न आया, लेकिन बाद को सब याद आया और गहरी प्रसन्नता के कारण उनके चेहरे पर मुस्कराहट देख पड़ी। रमाकान्त उनकी ओर बड़े प्रेम से देख रहा था।

"लेकिन......" आत्माभिमान के कारण हरिनारायण का गला भर आया।

रमाकान्त इसे भाँपकर नरमी से बोला—"भाई, सब बातें साफ़-साफ़ बताता हूँ। अच्छा, यह तो बताओ, थोड़ा पहले जब तुमने मुझे देखा तब पहचाना या नहीं?"

हरिनारायण ने कहा—"रमाकान्त, सच कहता हूँ मैंने तुम्हें बिलकुल नहीं पहचाना, लेकिन रास्ते में तुम्हें देखते ही न जाने क्यों मुझे तुम्हारे पीछे-पीछे चलने की इच्छा हुई।"

रमाकान्त ने कहा—"इससे मुझे ख़ुशी है। तुम्हारे जैसा आदमी भी मुझे नक़ली भेस में नहीं पहचान सका।"

हरिनारायण ने उत्सुकता से पूछा—"तुमने अपना भेस क्यों बदला था, शर्मा-वर्मा बैङ्क के सोने के ऊपर जो पुल ढह पड़ा, उसके भीतर से तुम कैसे बाहर निकल पड़े?"

रमाकान्त ने रोककर कहा—"भाई! धीरे-धीरे बोलो। इन कई दिनों में जितनी दुर्घटनाएँ हो गई हैं उन्हें तो तुम जानते ही होगे। मेरा विचार है कि हम दोनों आदमी दो ओर से उनका पता लगाना शुरू करें तो किसी दिन रहस्योद्घाटन कर लेंगे।"

हरिनारायण बीच में ही बोल उठे—"लेकिन मैं तो अब तक कुछ अधिक नहीं जान पाया। क्या तुम भी राधाकृष्ण के मामले में माथापच्ची कर रहे हो?"

रमाकान्त ने गम्भीरता से कहा—"मौक़ा आने पर वह बात मैं तुमसे कहूँगा। पहले मेरी मौत की कहानी तो सुन लो।"

कहानी अतीत घटनाओं के उल्लेख से शुरू हुई। सांकोपाञ्ज़ा का पीछा करते हुए एक दिन दोनों एक स्त्री के घर जा पहुँचे। वहीं सांकोपाञ्ज़ा का ख़ास अड्डा था। फिर उसी समय, जब दोनों आदमी उस भयङ्कर डाकू को गिरफ़्तार हुआ समझकर ख़ुश हो रहे थे, न जाने किस अजीब हिकमत से उसने सारे मकान को धराशायी कर दिया। हरिनारायण

तो मामूली सी चोट खाकर किसी तरह बच गये; लेकिन रमाकान्त का कुछ पता तक न चला। अन्त में दूसरे मरे हुओं में से एक आदमी की एक बेतरह बिगड़ी हुई लाश को लोगों ने रमाकान्त समझ लिया।

लेकिन असल में उन मरे हुए लोगों में रमाकान्त नहीं था। संयोग से उसे हरिनारायण से भी हलकी चोट आई थी। वह मकान के टूटे हुए अंश के ढेर में से जीता-जागता ग़ायब हो गया। इसके बाद हरिनारायण और सांकोपाञ्ज़ा की तलाश में जब वह फिर उस जगह आया तो पता लगा कि हरिनारायण को मामूली चोट लगी है। वे बचा लिये गये हैं। लेकिन रमाकान्त के मरने की अफ़वाह फैल गई है।

ख़ैर, इस झूठी अफ़वाह को रमाकान्त ने व्यर्थ नहीं जाने दिया। लोग उसे मरा हुआ माने बैठे रहेंगे तो साङ्कोपाञ्ज़ा को नीचा दिखाने में उसे और आसानी होगी। उसके कहने से मिस्टर रीड ने लोगों में उसके मर जाने की ख़बर फैलवा दी।

रमाकान्त ने कहा—"अब तक साङ्कोपाञ्ज़ा के दल के कुछ लोगों को मैंने जेल भिजवाया है। लेकिन जब वे लोग जेल से छूट गये तब लाचार हो मुझे उनके जत्थे में शामिल होना पड़ा। तुम्हें मालूम होगा कि इस जत्थे के कई आदमियों के नाम हैं—बुआ, दीनानाथ, भोलानाथ। मैं भी पागल बनकर कल्लू बन गया हूँ। ये लोग अब धीरे-धीरे मुझे भी अपने ही जत्थे का समझ गये हैं और अब मेरे सामने गुप्त बातें भी कहने लगे हैं।

"लेकिन हरिनारायण भैया, मुझे खेद है कि उन लोगों से मिलकर भी कुछ अधिक नहीं जान पाया। मुझे तो वे मामूली चोर-डाकू जान पड़ते हैं। एक बात अब तक मेरी समझ में नहीं आई कि वे जाली रुपये कहाँ से ले आते हैं और कैसे चलाते हैं। मैं एक नये ढङ्ग से पता लगाना चाहता हूँ जिसमें साङ्कोपाञ्ज़ा के दर्शन फिर मिलें।"

"राधाकृष्ण के मामले के साथ तुम्हारे उस दल का कोई सम्बन्ध है?"

"इसका जवाब तुम स्वयं पा जाओगे, जब तुम्हें यह मालूम हो जायगा कि रामसेवक उस दल का मुखिया और बुआ का दाहना हाथ है।"

हरिनारायण ने जोश में आकर ऊँची आवाज़ से कहा—"बड़े ताज्जुब की बात है। मुझे मालूम होता है कि तुम्हें फिर, जल्द ही, साङ्गोपाङ्गा का सामना करना पड़ेगा।"

रमाकान्त ने गर्दन हिलाकर अपनी सम्मति जताते हुए कहा—"यह तो मैं भी जानता हूँ। लेकिन पहले मुझे तुमसे माफ़ी माँगनी है। क्योंकि मैंने ही उस दिन तुम्हारी पीठ में ज़ोर से लात मारकर तुम्हें नदी में गिरा दिया था। सिवा इसके उस समय रामसेवक की छुरी के वार से तुम्हें बचाने का दूसरा उपाय ही नहीं था।"

हरिनारायण ने कहा—"भाई, तुमने यह सब किया और मैं पागलों की तरह इधर-उधर घूमता रहा!"

रमाकान्त ने मुसकराकर कहा—"इस समय भी ऐसी बहुत सी बातें हैं, जिनकी परवा तुम यहाँ बैठे हुए भी इस वक़्त नहीं कर रहे हो। हरिनारायण, ख़बरदार तुमने जिस काम में हाथ लगाया है वह ख़तरनाक है। पता है तुम्हें, राधाकृष्ण के मामले में पड़ने पर तुम्हें मैंने दो-तीन बार सावधान करने की कोशिश की है। तुम्हें चिट्ठी लिखकर और कुमारी कनकलता की दुर्घटनावाले दिन मिस्टर गुप्त के घर पर तुम्हारे कानों में कहकर मैंने तुम्हें सतर्क किया है। अच्छा, अब मैं फिर मरने जा रहा हूँ। इन दिनों मैं कल्लू बन बैठा हूँ; रहूँगा भी यहीं पर। तुम अब जाओ।"

हरिनारायण जाना नहीं चाहते थे, फिर भी चलने के लिए उठकर पैर बढ़ाते ही रमाकान्त ने उन्हें फिर हाथ पकड़कर बिठा लिया और पूछा—"यह तो बताओ, 'वर्तमान संसार' में लिखोगे क्या। भीतरी ख़बर तो तुम्हें कुछ मालूम नहीं। मुझे मालूम है। एक-आध सङ्केत भी मैं दूँगा। बैठ जाओ और मैं जो बोलता हूँ उसे लिखते जाओ।"

हरिनारायण लिखने लगे।

११

रमाकान्त के कथनानुसार हरिनारायण ने जो लेख लिखा था, वह इस प्रकार है—

"किसी काम से हमारे ख़ास रिपोर्टर शर्मा-वर्मा बैङ्क गये थे। वे मि० शिवचरण वर्मा से बातचीत कर रहे थे। इसी समय एक दूसरे मालिक मि० रामचरण शर्मा घबराये हुए आये और बोले कि एक आश्चर्यजनक चोरी हो गई है।

"आज तीसरे पहर कई लाख रुपयों की क़ीमत का सोना एक ठेलागाड़ी पर स्ट्रेटफ़ील्ड लाइन की ओर जा रहा था। साथ में थे मिस्टर शर्मा, बैङ्क के दो कर्मचारी और छः हथियारबन्द पहरेदार। जब गाड़ी समेत ये लोग स्ट्रेटफ़ील्ड लाइन के रेलवे के पुल के ठीक नीचे पहुँचे तो एकाएक भयंकर धड़ाके के साथ पुल का कुछ हिस्सा टूटकर नीचे गिर पड़ा। इससे ज़मीन में गहरा गड्ढा हो गया। उसमें गाड़ी और सब आदमी धँसकर ग़ायब हो गये। साथ ही पानी का एक नल भी टूट-फूट गया जिससे वहाँ पानी भर गया।

"पुलिस भी वहाँ जल्द ही आ पहुँची। पहले मिस्टर शर्मा, जो अधमरे से हो रहे थे, ज़मीन के भीतर से निकाले गये। उनके दो आदमी बुरी तरह घायल हुए थे। पहले उन्होंने पुलिस से गाड़ी को निकालने की सिफ़ारिश की। कुछ लोग अपनी जान हथेली पर लेकर भीतर उतरे। पहले तो गाड़ी का कुछ पता नहीं लगा, लेकिन एक सिपाही ने आगे बढ़कर देखा तो रेलवे-लाइन की ओर गाड़ी एक जगह उलटी हुई पड़ी थी। दो-एक जगह मामूली तौर से टूटी-फूटी थी।

"गाड़ी सड़क पर लाई गई। मिस्टर शर्मा ने जाँचकर देखा तो सन्दूक़ की मुहर वग़ैरह ज्यों की त्यों थी। उन्होंने फ़ौरन उसे बैङ्क लौटा ले जाने का हुक्म दिया।

"बैङ्क वापस आकर मिस्टर शर्मा ने जब मुहर वग़ैरह तोड़कर सन्दूक़ के भीतर देखा तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा; क्योंकि उसमें सोने की जगह सीसे के टुकड़े रक्खे हुए थे।

"पुलिस-दफ़्तर में फ़ौरन इसकी रिपोर्ट की गई और थोड़ी ही देर में मिस्टर रीड मोटर से बैङ्क पहुँचे। उन्होंने 'वर्तमान संसार' के रिपोर्टर को भी कृपा कर अपने साथ घटना-स्थल पर चलने को कहा। मिस्टर रीड के साथ हमारे संवाददाता ने बैङ्क की गाड़ी से बिलकुल मिलती-जुलती एक गाड़ी टूटी फूटी हालत में पड़ी देखी। मिस्टर रीड का ख़याल है कि अभी-अभी जो गाड़ी मिली है वही असली है और जो बैङ्क वापस भेजी गई है वह इसकी नक़ल है। इस टूटी-टाटी गाड़ी में सोने का कहीं पता नहीं था।

"हमारे प्रतिनिधि ने पैरों के निशान खोज निकालने की बहुत कोशिश की; लेकिन घटनास्थल की हालत देखते हुए यह कार्य संभव नहीं था।

"मिस्टर शर्मा ने, हमारे प्रतिनिधि के पूछने पर बताया कि बैङ्क के ही दो चार विश्वासपात्र आदमियों के सिवा सोने के चालान की ख़बर और किसी को नहीं दी जाती।"

'वर्तमान संसार' के दफ़्तर में बैठकर हरिनारायण इसका प्रूफ़ देख रहे थे। वे उसे देखकर छपने को भेजनेवाले ही थे कि 'न्यूज़ एजेंसी' से कुछ ख़बरें आईं। उन पर उन्होंने सरसरी निगाह दौड़ाई कि कोई नई ख़बर हो तो पूर्वोक्त निबन्ध में जोड़ दें। एक समाचार पढ़कर उनका चेहरा उतर गया। उन्होंने टेबल पर घूँसा मारते हुए अस्पष्ट स्वर में कुछ कहा; क्योंकि नये समाचार में लिखा था—"अन्त में पता लगा है कि गाड़ी नं० २ पर राधाकृष्ण की अँगुलियों के निशान मिले हैं। ये वही राधाकृष्ण हैं जो इससे पहले रानी लीलावती का ख़ून करने और कुमारी कनकलता के जवाहरात के गहने चुराने के जुर्म में अभियुक्त हैं।"

हरिनारायण की समझ में नहीं आया कि असल में उनका दिमाग़ ठीक है या नहीं। वे, और दूसरे लोग भी, राधाकृष्ण को मरा हुआ समझते हैं। तो फिर हस्तरेखा-परीक्षक महोदय बार-बार ऐसी भूल क्यों कर रहे हैं!

थोड़ी देर बाद उन्होंने क़लम उठाई और लेख के अन्त में इतना और जोड़ दिया—"पुलिस की राय में मरे हुए राधाकृष्ण ही लाखों रुपये का सोना उड़ा ले गये, लेकिन ख़ुद हमारा इस पर रत्ती भर भी विश्वास नहीं है।"

१२

रात के दस बजे हैं। यूरोपीय पोशाक पहने एक आदमी एक मकान के पीछे, चहारदीवारी की रेलिङ्ग की ओर दृष्टि जमाये हुए, खड़ा है। सिर्फ़ मकान की दूसरी मंज़िल पर रोशनी दीख पड़ती है। यह देख उसने मन ही मन कहा—"मालूम होता है, अभी खाना-पीना नहीं हुआ। मुझे डेढ़-दो घंटे रुकना पड़ेगा।"

वह अब वहाँ से हटकर एक दीवार की आड़ में जा खड़ा हुआ। उसने एक काले रङ्ग के लम्बे कोट से अपना सारा शरीर ढक लिया। अँधेरे से उसकी पोशाक का रङ्ग इतना मिलता-जुलता था कि नज़दीक से उसे देखनेवाला व्यक्ति भी यह अन्दाज़ नहीं कर सकता था कि कोई खड़ा है।

इतने में मकान का सदर दरवाज़ा खुला और दो स्त्रियाँ दीख पड़ीं। उनमें से एक ने, जिसकी उम्र ज्यादा थी, दूसरी से कहा—"क्या इस वक़्त बाहर जाओगी?"

"हाँ, यहीं नज़दीक ही लेटर-बक्स तक जाना है; तुम्हें मेरे लिए बैठे रहने की ज़रूरत नहीं।"

"नौकर से चिट्ठी क्यों नहीं भेजवा देतीं?"

"नहीं, मैं ख़ुद डाले आती हूँ। डरने की बात नहीं है मौसी!"

मौसी बोलीं—"तुम अजीब लड़की हो। रास्ता इस वक्त बन्द सा हो गया है। रात का सन्नाटा अलग है। इस पर अकेली ही जा रही हो!"

"कुछ परवा नहीं; मैं अभी लौट आती हूँ।" कहकर निर्मलादेवी ने अपनी राह ली। दरवाज़ा फिर बन्द हो गया।

पूर्वोक्त आदमी ने छिपकर सब बातें सुन ली थीं। उसने कुछ दूर तक दबे पाँव उसका पीछा किया फिर वह चहारदीवारी के पास लौट आकर स्त्री के लौटने की बाट जोहने लगा।

कुछ ही देर में निर्मलादेवी लौटकर मकान के सामने आ खड़ी हुईं। प्रौढ़ा स्त्री ने दरवाज़ा खोला और आराम की साँस ली। बोली—"आ गईं बेटी, रास्ते में कुछ अड़चन तो नहीं हुई?"

"नहीं मौसी। मुझे दुःख है कि तुम नाहक़ मेरे लिए जागती बैठी रहीं।"

प्रौढ़ा ने स्नेह-व्यञ्जक स्वर में कहा—"बेटी, नौकर कहता था कि कल तुम बाहर नहीं निकलोगी। क्या यह सच है?"

"हाँ। कल मैं सारा दिन घर में ही रहूँगी। एक आदमी के आने की बात है। अगर मैं तनिक देर के लिए कहीं जाऊँगी भी तो नौकर से कह जाऊँगी। वह उन्हें बिठावेगा।"—निर्मला ने कहा।

प्रौढ़ा—अच्छा, देखा जायगा। तुम अब जाकर सो रहो।

निर्मला ऊपर अपने कमरे में चली गईं। कमरे का दरवाज़ा बन्द कर भीतर दृष्टि दौड़ाई तो मारे आतङ्क के उनकी न जाने कैसी हालत हो गई।

डरने का कारण यह था कि कमरे की चीज़ें इधर-उधर बिखरी पड़ी थीं। टेबल के ड्राअर वग़ैरह नीचे फेंक दिये गये थे। फ़र्श पर बहुत से काग़ज़-पत्रों का ढेर लगा हुआ था। एक बड़ा सा सन्दूक़ ज़मीन पर उलट दिया गया था। उसका ढक्कन खुला था।

निर्मला का चेहरा पीला पड़ गया। उनके मुँह से एक अस्पष्ट चीख़ निकली। शरीर में न जाने कैसी सुस्ती और नींद की ख़ुमारी भी मालूम

हो रही थी। उन्होंने यही तय किया कि इस समय चुपचाप सो रहना ही ठीक है।

× × × ×

कुछ देर बाद मकान का सदर दरवाज़ा फिर खुला और बहुत सँभालकर क़दम रखता हुआ एक आदमी बाहर आया। बाग़ के पिछवाड़े आकर, चारों ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखकर, उसने हलकी आवाज़ से कई बार सीटी बजाई।

बात की बात में किसी ने वैसे ही सीटी बजाकर पूछा—"कौन है? लेखराज?"

"जी हाँ सरकार।"

"कोई नई ख़बर है?"

"एक चिट्ठी लिखी है किसी को।"

"किसे?"

"नहीं कह सकता, पता देखने का मौक़ा नहीं मिला।"

वक्ता ने गरजकर कहा—"गधा कहीं का? तू बड़ा निकम्मा है।"

लेखराज काँपती हुई आवाज़ से बोला—"हुज़ूर, चिट्ठी उन्होंने ख़ुद अपने कमरे में बैठकर लिखी है। मैं उसे देख तक नहीं पाया।"

"अच्छा, कुछ हर्ज नहीं; अब मेरे पास प्रतीक्षा करने को ज़्यादा समय नहीं है। अभी-अभी काम शुरू करना होगा।"

"क्या करना होगा हुज़ूर?"

"तुम्हारा सिर! एक कमरे में इस वक़्त भी उजेला दीख पड़ता है। जान पड़ता है, इस वक़्त भी कोई जाग रहा है।"

"जी नहीं हुज़ूर, मैंने तो भली भाँति देख लिया है, सब लोग सो गये हैं। आपके बताये मुताबिक़ ही मैंने नींद लानेवली दवा दे दी है।"

अब वह आदमी लेखराज के पास आ खड़ा हुआ। उसकी अजीब पोशाक देखकर लेखराज को डर सा लगा। गहरे काले रङ्ग की चुस्त पोशाक ख़ासकर इसी उद्देश्य से तैयार की गई थी कि अँधेरे में जहाँ जी

चाहे चलने-फिरने में सुभीता हो। मुँह पर काले रङ्ग का नक़ाब लगा था, जिसमें आँखों की जगह दो छेद भर थे।

लेखराज ने दबी आवाज़ से कहा—"आप इस वक़्त क्या करना चाहते हैं हुज़ूर?"

उस आदमी ने जवाब दिया—"बकवाद मत करो। चुपचाप दबे पाँव मेरे पीछे-पीछे चले आओ। ख़बरदार! अगर तनिक भी आवाज़ हुई तो खाल खींच लूँगा।"

दोनों चुपचाप आगे बढ़े। दरवाज़े के सामने आने पर आदमी ने कहा—"दरवाज़ा खोलो। हाँ, कान खोलकर सुन लो। अगर ख़तरे की कहीं कुछ आहट मिले तो तुम 'पकड़ो-पकड़ो' चिल्लाते हुए इसी दरवाज़े की ओर भागना। इससे लोग तुम्हारी आवाज़ पर ही दौड़ेंगे और मैं बेखटके मकान के बाहर निकल जाऊँगा।"

लेखराज को ऊपर जानेवाली सीढ़ियों के बीच एक जगह खड़ा कराकर वह आदमी ऊपर चला गया। उसकी हरकतों को देखने से जान पड़ता था कि इस मकान का कोना-कोना उसका जाना हुआ है। बरामदे से होकर वह सीधा निर्मलादेवी के कमरे के सामने आया। दरवाज़े पर कान लगाकर कुछ सुनने की कोशिश की। फिर, कुछ आहट न मिलने पर, उसने तेज़ी से दरवाज़े के बाहर का एक कड़ा ऊपर की ओर खींचा। इससे दरवाज़ा खुल गया। उसने कमरे के भीतर जाकर दरवाज़ा बन्द कर लिया।

जेब से टार्च निकालकर, दबे पाँव, उसने निर्मला के पलँग के पास जाकर देखा तो वे गहरी नींद में थीं।

खुले हुए सन्दूक़ के आसपास जो काग़ज़ों का ढेर लगा था, उसकी ओर देख उसने मन ही मन कहा—"इसमें से खोज निकालना तो बहुत ही मुश्किल है। अच्छा, वह मुँह ही क्यों न हमेशा के लिए बन्द कर दूँ जो ख़बर दे सकता है। यही ठीक होगा।"

अब उसने अपनी मज़बूत बाँहों से निर्मलादेवी को पलँग से उठाकर ज़मीन पर लिटा दिया। फिर गैस-स्टोव की रबर की नली का अन्तिम सिरा निर्मलादेवी के मुँह में भरकर उसने गैस का मुँह खोल दिया। अब वह चटपट दरवाज़ा बन्द कर बरामदे के बाहर आ गया। सीढ़ियों के सहारे नीचे उतरते हुए उसने लेखराज से कहा—"काम बेखटके पूरा कर दिया है। सबेरे ज़रा होशियार रहना।"

लेखराज को उसकी ओर देखने का साहस नहीं हो रहा था। उसने अस्पष्ट स्वर में पूछा—"आपने क्या......"

उस आदमी ने बीच में ही टोककर कहा—"घबराने की ज़रूरत नहीं है तुम्हें। मैंने निर्मलादेवी का ख़ून नहीं किया है। हाँ, कल सबेरे उनके आत्म-हत्या कर लेने की बात उठेगी। समझे! कल सबेरे किसी को उनके कमरे में जाने मत देना। कह देना, मालकिन सबेरे ही कहीं गई हैं।"

बातचीत करते-करते वे दोनों व्यक्ति बाग़ में आ पहुँचे। उस आदमी ने लेखराज को सावधान कर कहा—"ज़रूरत के माफ़िक़ सोच-समझकर काम करना। याद रक्खो, इसमें तुम्हें कम फ़ायदा न होगा। और अगर काम बिगाड़ दोगे तो उसकी सज़ा भी मामूली न भुगतोगे। अच्छा, अब मैं चला।"

लेखराज ने काँपती हुई आवाज़ से पूछा—"कल क्या आप आ सकेंगे?"

उस आदमी ने आँखें लाल कर लेखराज को सिर से पैर तक देखा और कहा—"मैं तभी आऊँगा जब मेरी आने की इच्छा होगी।"

अब वह सहज ही दीवार पर चढ़ गया और रेलिंग पकड़कर नीचे कूद पड़ा। लेखराज धीरे-धीरे, सोचता हुआ, घर की ओर लौटा।

१३

हरिनारायण की तबीयत इधर कई दिनों की घटनाओं की पेचीदगी देखकर हैरान सी हो रही थी। वे हर वक़्त कुछ सोचते रहते थे। उन्हें देखने

से मालूम होता था, मानों कोई गणितज्ञ किसी कठिन प्रश्न का हल निकालने में उलझा हुआ हो। इधर कई दिनों से निर्मलादेवी से भी उनकी मुलाक़ात नहीं हुई थी। उन्होंने वह फ़िहरिस्त देने को कहा था जिसमें कई आदमियों के नाम और कुछ तारीख़ें लिखी थीं; लेकिन अब तक भेजा क्यों नहीं। रह-रहकर उनके मन में आता था कि बेचारी किसी उलझन में तो नहीं पड़ गई। क्या ठिकाना है।

'वर्तमान संसार' के दफ़्तर में बैठे हुए वे सबेरे कोई अख़बार देख रहे थे कि सम्पादक ने उनके टेबल पर एक पत्र रखते हुए कहा—"हरिनारायण बाबू, जान पड़ता है, भूल से चपरासी ने इसे हमारे चिट्ठियों के बक्स में रख दिया है। लीजिए, यह आपकी चिट्ठी है।"

चिट्ठी पर नीचे की ओर निर्मलादेवी के हस्ताक्षर थे।

हरिनारायण ने मन ही मन कहा—"लेकिन मुझसे आख़िर वे क्या आशा रखती हैं। पुलिस की तरह क्या उनका भी ऐसा ही ख़याल है कि राधाकृष्ण जीवित हैं?"

पत्र की नक़ल इस प्रकार है—

"श्रद्धेय हरिनारायणजी! मैं इन दिनों बहुत बड़ी विपत्ति में पड़ी हुई हूँ। इस सङ्कट के समय आपने मुझे काफ़ी मदद दी है—मेरे साथ सहानुभूति दिखलाई है। इसी से और एक बार मैं आपकी शरण लेना चाहती हूँ।

"इन दिनों कुछ ऐसी घटनाएँ हो गई हैं, जिनसे मुझे यक़ीन होता है कि भैया आज भी जीवित और निरपराध हैं। कुछ बदमाशों ने उन्हें शायद क़ैद कर रक्खा है और उन्हें अपनी इच्छा के विपरीत अनेक निन्दित काम करने पड़े हैं।

"आज शाम को किसी काम से मैं बाज़ार की ओर गई थी। इसी बीच, मौक़ा पाकर, कुछ ऐसे बदमाश मेरे घर में घुस पड़े थे, जिन्हें मैंने अपनी ज़िन्दगी में कभी नहीं देखा।

"आप अगर घर की हालत देख पाते! मानों एक तूफ़ान आ गया था! मेरे सब सन्दूक़ और ट्रङ्क खुले पड़े थे। टेबल के ड्राअर एक तरफ़

उलटे पड़े थे। काग़ज़-पत्र फ़र्श पर चारों ओर बिखरे हुए थे। यह देखकर मैं बहुत डर गई हूँ।

"लेकिन जान पड़ता है कि वे लोग मुझे कोई शारीरिक कष्ट देने नहीं आये थे। कुछ चुराने का भी उनका उद्देश्य नहीं मालूम पड़ता। क्योंकि मेरे पास जो रुपया-पैसा या गहने वग़ैरह हैं, वे सब ज्यों के त्यों हैं। उनमें से एक भी उन लोगों ने नहीं लिया।

"आपको ख़याल होगा कि, रानी लीलावती के मारे जाने के समय, मेरे घर की बैठक में नामों की एक फ़िहरिस्त पड़ी हुई थी। उसे मैंने उठा लिया था। उसे बाद को मैंने एक छोटी सी लाल रंग की डायरी में रख दिया था। डायरी तो फ़र्श पर फेंकी हुई मिली; लेकिन काग़ज़ का वह टुकड़ा उसमें नहीं था।

"मैं भूल नहीं रही हूँ। उस काग़ज़ की चिट को मैंने और कहीं नहीं रक्खा था। जो हो, यह मैं ज़ोर देकर कह सकती हूँ कि उस फ़िहरिस्त को लेने के सिवा चोरों का कुछ दूसरा इरादा नहीं था।

"अगर इसमें मुझसे कुछ भूल हो गई हो तो उसे आप, मेरी वर्तमान मानसिक अवस्था को देखते हुए, क्षमा करेंगे। इस मामले में आपकी दिलचस्पी है, यही सोचकर मैंने आपको ख़बर दी है। मैंने घर की किसी चीज़ को छुआ तक नहीं—प्रत्येक को ज्यों का त्यों रहने दिया है। यह सिर्फ़ इसी लिए कि आपको, तलाश करने पर. इनमें से शायद कुछ मतलब की बात मिल जाय।

"कल दिन भर मैं आपकी राह देखती रहूँगी। हो सके तो आने का अवश्य कष्ट करें।"

पूरा पत्र पढ़ चुकने पर हरिनारायण का चेहरा बदल गया। चिन्ता के मारे उनके माथे में बल पड़ गये।

सचमुच फ़ेहरिस्तवाला काग़ज़ लेने के लिए क्या कोई निर्मलादेवी के घर में घुसा था? इस पर एकाएक विश्वास तो नहीं किया जा सकता, लेकिन फिर घर की इतनी कड़ी तलाशी लेने का उद्देश्य ही क्या हो

सकता है ? यह तो निश्चित है कि रुपयों या गहनों के लिए ऐसा नहीं किया गया। तो फिर ? इसके सिवा उस सुरक्षित मकान में चोरों और डाकुओं का आसानी से घुस जाना भी तो सम्भव नहीं। आख़िर बात क्या है ?

"निर्मलादेवी के पास एक बार ज़रूर चलना चाहिए।"—हरिनारायण ने निश्चय किया। अब वे उनके घर की ओर चटपट चल खड़े हुए। संयोग से एक ख़ाली ताँगा उधर को जा रहा था। उस पर वे सवार हो लिये और कोई पाँच मिनट में निर्दिष्ट घर के सामने जा पहुँचे।

सदर दरवाज़े के पास आकर हरिनारायण ने साँकल खटखटाई। लेखराज ने आकर दरवाज़ा खोल दिया। हरिनारायण ने उससे पूछा—"निर्मलादेवी घर में हैं ?"

"जी नहीं। वे कोई घंटे भर पहले कहीं बाहर गई हैं।"

"तुम्हें ठीक-ठीक मालूम है, वे अभी नहीं लौटीं ?"

"जी, वे अभी तक वापस नहीं आईं। दो और भले आदमी बैठे उनकी राह देख रहे हैं।"

हरिनारायण ने एक बार अपनी कलाईवाली घड़ी की ओर देखकर कहा—"अच्छा चलो, मैं भी बैठ जाऊँ। ज़्यादा तो नहीं, थोड़ी देर तक प्रतीक्षा कर सकूँगा।"

हरिनारायण लेखराज के पीछे-पीछे चले। बैठकवाले कमरे में पैर रखते ही उन्होंने देखा मिस्टर रामचरण शर्मा और शिवचरण वर्मा बैठे हुए हैं। हरिनारायण को देखते ही उन लोगों ने बड़ी आवभगत दिखाते हुए कहा—"अरे, ये तो हरिनारायण बाबू हैं। आइए, आइए; कहिए कैसे आना हुआ।"

"आप लोग कब के आये हैं ?" हरिनारायण ने बैङ्कर-द्वय से हाथ मिलाते हुए कहा—"अवश्य ही निर्मलादेवी से भेट करने आप लोग भी आये हैं।"

"जी हाँ, हम लोग उन्हें यह बताने के लिए यहाँ आये हैं कि यथा-सामर्थ्य हम उनकी मदद करेंगे। कुछ दिन हुए, निर्मलादेवी ने हमें

एक चिट्ठी लिखी थी, जिसमें उन्होंने लिखा था कि 'आप लोग भैया की अङ्कित कोई तस्वीर, जो मेरे पास है, बिकवा दीजिए। अथवा, मेरे लिए कहीं काम का बन्दोबस्त कर दीजिए।' इसी बात को उन्हें जताने के लिए हम लोग यहाँ आये हैं कि अपनी तुच्छ शक्ति भर हम......"

हरिनारायण ने बीच में ही उनकी बात काटकर कहा—"आप लोगों की इस कृपा के लिए मैं उनकी ओर से आप लोगों को असंख्य धन्यवाद देता हूँ। उनके लौटने में ज़्यादा देर न होनी चाहिए। उन्होंने आज मुझसे मिलने का वादा किया था। अच्छा, अगर आप लोगों की अनुमति मिले तो मैं तनिक उठकर उनका पता लगाने की कोशिश करूँ। आख़िर वे कब तक लौटेंगी और गई कहाँ हैं! बात यह है कि मेरे पास इतना वक़्त नहीं है कि ज़्यादा देर तक उनकी प्रतीक्षा कर सकूँ।"

अब हरिनारायण उत्तर की कुछ परवा किये बिना ही उठकर एक दरवाज़े के पास पहुँचे। मिस्टर शर्मा ने गम्भीरता के साथ कहा—"हरिनारायण बाबू, यह दरवाज़ा नहीं है। उस दरवाज़े से जाइए।"

"ओहो! धन्यवाद। लेकिन कुछ हर्ज नहीं; चाहे जिस रास्ते जाऊँ, अभीष्ट स्थान तक पहुँचने में मुझे कोई अड़चन न होगी।"—कहकर हँसते-हँसते हरिनारायण उसी दरवाज़े से निकले। बाहर निकलकर हरिनारायण ने सोचा, क्या सचमुच निर्मलादेवी घर पर नहीं हैं? मैं तो ऐसा नहीं समझता। मुझे तो यह मालूम होता है कि इस हालत में बैङ्कर महोदयों से मिलने का साहस उन्हें नहीं हो रहा है। इसी लिए वे शायद कुछ देर कर रही हैं।

यह घर हरिनारायण का भली भाँति जाना-पहचाना है। सीढ़ियों को पार करते हुए वे सीधे दोमंज़िले पर पहुँचे। निर्मलादेवी के कमरे के सामने पहुँचते ही उन्होंने नाक सिकोड़ते हुए कहा—"बड़ी अजीब महक है। यह तो गैस जान पड़ती है।"

महक और तीव्र होती जा रही थी। एक अज्ञात भय से हरिनारायण का सारा शरीर रोमाञ्चित हो उठा। उन्होंने ज़ोर से दरवाज़े पर

धक्का देकर निर्मलादेवी को पुकारा, लेकिन भीतर से कुछ उत्तर नहीं मिला। इस पर उन्होंने दुबारा ज़ोर से दरवाज़े पर धक्का मारा तो वह खुल गया। ज्योंही हरिनारायण की निगाह कमरे में पड़ी, वे ज़ोर से चिल्ला उठे—"अरे! यह क्या हुआ?"

बात यह थी कि निर्मलादेवी बेहोशी की हालत में फ़र्श पर पड़ी हुई थीं। उनके मुँह में गैस-स्टोव की नली पड़ी हुई थी। स्टोव का मुँह खुला हुआ था। हरिनारायण एक उछाल में निर्मला के पास पहुँचे और उन्होंने चटपट वह नली उनके मुँह से निकाल बाहर की। अब वे बड़े ध्यान से निर्मलादेवी को देखने लगे। उन्होंने उनके हृदय के पास कान लगाकर सुनने की कोशिश की कि हृदय की धड़कन चल रही है या नहीं।

बहुत हलकी आवाज़ आ रही थी। लेकिन इससे हरिनारायण की ख़ुशी का ठिकाना नहीं रहा। वे पागल व्यक्ति की तरह चिल्ला उठे—"जीती हैं—जीती हैं।"

हरिनारायण ने जब धक्का देकर दरवाज़ा खोला था तो उसकी तेज़ आवाज़ को सुनकर मकान के सब लोग उस जगह पहुँच गये थे। पहले सबसे आगे था लेखराज; उसके पीछे मकान की मालकिन थीं और थे दोनों बैङ्कर महोदय—मिस्टर शर्मा और वर्मा। इन लोगों को कमरे में घुसने की कोशिश करते देख हरिनारायण ने गम्भीरता से कहा—"ख़बरदार! आप लोग कृपा कर बाहर ही रहें। यह स्पष्ट दुर्घटना है।"—अब उन्होंने बेहोश निर्मला को दोनों हाथों से उठाकर कमरे से बाहर लाते हुए कहा—"इस वक्त़ इन्हें हवा चाहिए। सिर्फ़ ताज़ा हवा मिलने से इनकी बेहोशी शायद दूर हो जाय।"

हरिनारायण निर्मला को बग़ीचे में ले आये। उन्होंने घास के मैदान पर निर्मलादेवी को लिटा दिया। इतने में मौसी वहाँ आईं और हरिनारायण से बोलीं—"भगवान् ने दया कर आपको यहाँ भेज दिया जिससे इनकी जान बच गई। अगर ऐसा न होता तो मैं कहीं की न रहती।

मेरे मुँह में ऐसी कालिख पुत जाती जो कभी छूट न सकती। नतीजा यह होता कि मैं शर्म के मारे कहीं डूब मरती।"

हरिनारायण अकेले निर्मलादेवी को ले आने के कारण थक गये थे। वे इस समय भी हाँफ रहे थे। बोले—"हाँ, इस बार ये बच तो गई हैं; लेकिन किसके पञ्जे से बची हैं—यह तो बताइए। यह तो मानी हुई बात है कि ये आत्महत्या करना नहीं चाहती थीं। इस मामले की आड़ में कोई बहुत बड़ा रहस्य छिपा हुआ है। सारा मामला मानों नाटक की तरह बड़ी ख़ूबसूरती और क़ायदे से रचा गया है। हम लोगों की आँखों में धूल झोंकने की कोशिश भी कम नहीं की गई।"

इतने में और लोग भी इस जगह आ गये थे। हरिनारायण ने दोनों बैंकर महानुभावों की ओर देखकर, हुकूमत के स्वर में कहा—"आप लोगों में से कोई एक आदमी थाने में जाकर इस दुर्घटना की इत्तिला कर आवे।" इसके बाद वे मौसी की ओर देखकर बोले—"आप तनिक इनकी ओर निगाह रक्खें। जान पड़ता है, अब जल्द ही ये चङ्गी हो जायँगी।"

हरिनारायण ने अब घटना-स्थल की ओर ध्यान दिया। वे लेखराज से तनिक कड़े स्वर में बोले—"क्योंजी, तुम यहाँ खड़े-खड़े क्या देख रहे हो? क्या यह कोई तमाशा है? जाओ, निर्मलादेवी के कमरे के दरवाज़े पर खड़े होकर वहाँ की चीज़ों पर नज़र रक्खो। कोई कुछ इधर-उधर न करने पावे। मैं भी वहीं चलता हूँ। पुलिस के आने से पहले कुछ काम मैं पूरा कर लेना चाहता हूँ।"

लेखराज को साथ लिये हुए हरिनारायण दोमंज़िले पर पहुँचे और निर्मलादेवी के कमरे में घुस गये। कमरे में घुसने से पहले उन्होंने लेखराज को सावधान कर दिया—"तुम भूलकर भी भीतर पैर मत रखना। सम्भव है, बदमाशों ने अपनी कोई निशानी वग़ैरह छोड़ दी हो। मैं उसे नष्ट होने देना नहीं चाहता।"

लेखराज ने दबी ज़बान हरिनारायण से कहा—"बाबूजी, मैं तो यह सब देखकर सन्नाटे में आ गया हूँ। बहुत सुबह बहनजी ने मुझसे कहा

था कि तनिक देर के लिए बाहर जायँगी, पर न जाने कब वे यह भयानक काम कर बैठीं। मैं तो समझता हूँ कि उन्होंने आत्महत्या करने के ही उद्देश्य से मुँह में गैस का नल रख लिया था।"

हरिनारायण ने जवाब दिया—"तुम्हारा कहना ठीक नहीं है। इन्होंने अपनी हत्या स्वयं करने के लिए यह नहीं किया है।"

अब उन्होंने बारीकी से घटना की जांच-पड़ताल करने में मन लगाया। निर्मलादेवी ने अपनी चिट्ठी में उन्हें जो बात लिखी थी वह झूठी नहीं है। सचमुच कमरे में तूफ़ान सा आ गया था। किताबें, काग़ज़-पत्र इत्यादि चारों ओर बिखेर दिये गये हैं। गहने, रुपये-पैसे इत्यादि को किसी ने छुआ तक नहीं है। यहाँ तक कि शृङ्गार-सामग्री में भी किसी ने हाथ नहीं लगाया है।

मकान के दरवाज़े और खिड़कियों को भी ज़्यादा आघात नहीं पहुँचा है। सिर्फ़ दरवाज़ा खोलते वक्त उनके गहरा धक्का देने से एक जगह का हुक उखड़ गया था। अच्छा तो फिर बन्द कमरे में बदमाशों को घुसने का मौक़ा कैसे मिला? ख़ैर, तलाशी में उन्हें एक डिब्बे में रक्खा हुआ साबुन मिला। "ठीक है," कहकर हरिनारायण ने साबुन को अपने रूमाल में लपेटकर, टेबल की दराज में कुछ कपड़ों के बीच में छिपाकर रख दिया। उन्होंने मन ही मन कहा—"यह साबुन मज़ेदार है। पुलिस भूल कर सकती है, लेकिन मैं वैसा करनेवाला आदमी नहीं हूँ। इस वक्त देखना चाहिए कि निर्मलादेवी की कैसी हालत है।"

निर्मला की बेहोशी दूर हो चुकी थी। मिस्टर वर्मा के ख़बर देने पर पुलिस के एक इन्सपेक्टर साहब तशरीफ़ लाये थे। उन्हीं के सवालों का वह जवाब दे रही थी। इन्स्पेक्टर साहब ने उपेक्षा का भाव दिखाते हुए प्रश्न किया—"शुरू से लेकर आख़ीर तक की सब बातें साफ़-साफ़ बतलाइए। कुछ भी छिपाने की कोशिश मत कीजिए।"

निर्मलादेवी कुछ क्षण तक इस भद्दी सूरत-शकल वाले पुलिस-अफ़सर की ओर आश्चर्य से देखती रहीं। भला उनके छिपाने लायक़ बात कौन

सी हो सकती थी ? किस फ़ायदे के लिए वे सच को छिपाने की या झूठा बयान देने की कोशिश करेंगी ? जो हो, उन्होंने सब बातें सोच-समझकर उन्हें बतला दीं। कहानी को अन्त तक सुनकर इन्स्पेक्टर साहब ने मुँह टेढ़ा कर कहा—"यह आत्महत्या का मामला है!"

यह सुनकर निर्मलादेवी की आँखों में आँसू भर आये। उन्होंने सजल नेत्रों से हरिनारायण की ओर देखा। हरिनारायण की समझ में न आया कि क्या जवाब देना चाहिए।

इन्स्पेक्टर साहब ने अपनी रिपोर्ट में न जाने क्या-क्या लिख मारा। लिख चुकने पर उन्होंने कहा—"निर्मलादेवी, आपकी बातों पर यक़ीन करने की तबीअत नहीं हो रही है। बड़ा अजीब मामला है।"

हरिनारायण ने मन ही मन कहा—"मामला सचमुच बड़ा अजीब है; लेकिन मेरे सामने तो सब बातें आईने की तरह साफ़-साफ़ दिखाई पड़ रही हैं।"

पुलिस के इन्स्पेक्टर ने तहक़ीक़ात करने के लिए हरिनारायण से ऊपर-वाले कमरे में, अपने साथ, चलने को कहा; लेकिन उन्होंने नम्रतापूर्वक उनका अनुरोध अस्वीकार कर दिया।

१४

शहर से कोई पाँच मील दूर एक साफ़-सुथरे गाँव में, लहलहाते हुए खेतों तथा हरे भरे बग़ीचों के सुन्दर दृश्य के बीच, स्त्रियों का एक विश्राम-भवन है। यह जगह रेलवे-स्टेशन से बिलकुल नज़दीक है। इसमें स्त्रियों की अच्छी तादाद थी। हिन्दू-धर्म में विहित नियमों तथा आचार-विचार का पालन करना आश्रम की प्रत्येक स्त्री के लिए अनिवार्य है।

एक दिन तड़के इसी स्टेशन पर हरिनारायण त्रिपाठी उतरे और जल्दी-जल्दी पैर बढ़ाते हुए स्त्रियों के उक्त आश्रम के सदर फाटक पर पहुँचे। उन्होंने बिजली की घण्टी का स्विच दबाया। कुछ देर बाद

लोहे के तारों की जाली से मढ़ी हुई बड़ी खिड़की के भीतर से किसी ने पूछा—"आप कौन हैं? किसे खोज रहे हैं?"

हरिनारायण बोले—"आपके आश्रम के सुपरिंटेंडेंट से मिलना चाहता हूँ।"

खिड़की फिर बन्द हो गई। कुछ देर के बाद फाटक खुला और हरिनारायण भीतर घुसे। एक स्त्री ने उन्हें नमस्कार कर मीठे स्वर में कहा—"मेरे साथ चले आइए।"

एक छोटा सा बरामदा तय कर स्त्री ने एक कमरा, जिसका दरवाज़ा आधा खुला हुआ था, दिखाकर हरिनारायण से कहा—"आप कृपया इसमें बैठें; तब तक मैं जाकर उन्हें ख़बर कर दूँ कि आप उनसे मिलना चाहते हैं।"

हरिनारायण वहीं बैठकर बेचैनी से प्रतीक्षा करने लगे। कुछ ही देर में उस कमरे में एक बुढ़िया आ पहुँची। उसकी उम्र काफ़ी ज़्यादा थी; लेकिन फिर भी उसकी आँखों में एक ऐसी चमक थी जो साधारणतः सबकी आँखों में नहीं पाई जाती। उसके चेहरे से एक प्रकार का ऐसा रूखापन प्रकट हो रहा था, जो मुद्दत तक संयम-नियम से रहने का परिणाम कहा जा सकता है।

हरिनारायण उसे देखकर, अदब करने के लिए, उठ खड़े हुए। उन्होंने उसे नमस्कार कर कहा—"माताजी, मैं आपके आश्रम में की, नई भर्ती होनेवाली, लड़की की खोज-ख़बर लेने आया हूँ।"

लेडी-सुपरिंटेंडेंट ने नरमी से कहा—"आप ख़ुद ही आ गये? देखती हूँ, आपने टेलीफोन की प्रतीक्षा नहीं की। ख़ैर, लेकिन आप इतमीनान रक्खें, जिस लड़की के ज़िम्मे निर्मला की देख-भाल करने का काम सौंपा गया है वह जब टेलीफोन करने गई तो उसने कनेक्शन कटा हुआ पाया। इसी कारण हम लोग ठीक वक़्त से आपको ख़बर नहीं दे सकीं।"

हरिनारायण आँखें फाड़-फाड़कर देखने लगे। बोले—"आपकी बात मेरी समझ में बिलकुल नहीं आ रही है।"

"तो फिर आज सबेरे आपने निर्मलादेवी की ख़बर जानने के लिए फोन नहीं किया था ?"—लेडी-सुपरिंटेंडेंट ने पूछा।

"मैंने ! नहीं तो !"

"यह तो बड़ा अजीब मामला है। मेरी समझ में भी तो कुछ नहीं आ रहा है कि आख़िर बात क्या है। तो सबेरे फोन करनेवाला व्यक्ति कौन है ? ख़ैर, आप जिनसे मिलने की नीयत से यहाँ आये हैं, उनसे बेखटके भेंट कर सकते हैं।"

टेबल पर की घंटी बजाते ही एक नौकरनी कमरे में आई। वृद्धा ने उससे कहा—"इनको निर्मला के कमरे में लिवा जाओ। तनिक पहले मैंने उसे पीछेवाले बग़ीचे में घूमते देखा था। शायद अब तक वहीं हो।"

नौकरनी के पीछे-पीछे हरिनारायण उस कमरे से बाहर निकले। सुपरिंटेंडेंट के मुँह से टेलीफोन करने की बात सुनकर वे गहरे सोच-विचार में पड़ गये। इतनी जल्दी निर्मलादेवी के नये निवास-स्थान का पता दूसरे को कैसे लगा ? टेलीफोन करके उसकी ख़बर लेने के लिए ही कौन इतना बेचैन हो उठा है ?"

बग़ीचे में पहुँचकर नौकरनी ने कहा—"बहनजी वे हैं। अच्छा, अब मैं जाती हूँ।"

निर्मला सचमुच कुछ फूल हाथों में लिये हुए एक झाड़ की ओर से बाहर निकल आईं। हरिनारायण को देखते ही ख़ुशी के मारे वे दौड़ आईं और उनका एक हाथ पकड़कर बोलीं—"आप आ गये ? धन्यवाद है आपको ख़ुद ही आने के लिए। मुझे आपके समय की क़ीमत मालूम है हरिनारायण बाबू, लेकिन क्या करूँ मैं ? यहाँ अकेले-अकेले मुझे बिलकुल नहीं अच्छा लगता। आप तो जानते ही हैं, दुनिया में इस वक्त आपके सिवा मेरे भरोसे का आदमी कोई नहीं है।"

निर्मला की आँखों में आँसू भर आये थे। हरिनारायण ने उनके साथ सहानुभूति प्रकट करते हुए कहा—"आप मुझ पर पूरा विश्वास कर

सकती हैं। आख़िर आपको कुछ दिन के लिए भी यहाँ भिजवाकर मैं बहुत कुछ निश्चिन्त हो गया हूँ। यह जगह सुनसान है सही, लेकिन यहाँ चारों तरफ़ एक प्रकार की पवित्रतामय शान्ति का भाव विराजमान है। इसके सिवा, मैं समझता हूँ, यह जगह आपके उन शत्रुओं की पहुँच से बाहर है, जिन्हें आप जानतीं तक नहीं। अच्छा पहले आप यह बताइए कि यहाँ आने की ख़बर क्या आपने किसी को बताई है?"

"नहीं तो! मैंने किसी से भी नहीं कहा। किसी ने कुछ......" निर्मला ने शङ्कित नेत्रों से हरिनारायण की ओर देखा।

जिसके पीछे दुर्भाग्य हमेशा लगा फिरता है, उसे फिर भयभीत करने को हरिनारायण का जी नहीं चाहता। इसके साथ ही टेलीफोन का भेद भी वे जान लेना चाहते हैं। इसी कारण उन्होंने चटपट जवाब दिया—"नहीं-नहीं, मैंने यों ही पूछा था। अच्छा, यह बतलाइए, उस दिनवाली दुर्घटना के सङ्कट को भली भाँति दूर कर पाईं या नहीं।"

निर्मला का गला रुँध आया। बोलीं—"हाँ, उसे दूर ही हुआ समझिए। आपकी दया से ही उस दिन मेरी जान बच गई। एक आदमी ने मुझ पर इतनी कृपा की थी कि मुझे इस संसार से बिदा ही कर देना चाहा था। पहले उसने नींद की दवा देकर मेरी चेतना-शक्ति नष्ट कर दी......ठीक भैया की ही तरह। आप चाहे जो कुछ कहें, मेरा पक्का विश्वास है कि भैया को भी पहले नींद लाने की दवा दी गई। फिर विष देकर उन्हें मार डाला गया।"

हरिनारायण ने कोमल स्वर में कहा—"तो आपको यक़ीन हो गया कि राधाकृष्ण अब जीवित नहीं रहे?"

निर्मला ने टूटी हुई आवाज़ से कहा—"आपने जो सबूत दिये हैं उन्हें देख-सुनकर भी अब इस झूठी आशा को किस लालच से अपनाये रहूँगी? लेकिन मैं कुछ भी नहीं समझ पा रही हूँ कि—"

हरिनारायण ने उन्हें बीच में ही रोककर कहा—"लेकिन समझने लायक़ सब कुछ तो हम लोगों के हाथ में नहीं है। नामों की उस

फ़िहरिस्त ही को लीजिए। उसका कितना मूल्य है—यह हम लोगों की समझ में तब तक नहीं आया, जब तक कि वह हमारे हाथ से चली नहीं गई। अच्छा, आप ठीक-ठीक कह सकती हैं कि वह फ़िहरिस्त इस वक्त आपके पास नहीं है?"

निर्मला ने उदास हो सिर हिलाते हुए कहा—"कह नहीं सकती। मुझे याद भी नहीं है। उस दिन आपसे मैंने कहा था कि लाल रङ्ग की एक डायरी-बुक में रखकर उसे मैंने लकड़ी की आलमारी में छिपाकर रख दिया था। लेकिन इस समय मुझे सन्देह हो रहा है कि अगर वह चोरी नहीं गई है तो मेरे चमड़े के बड़े ट्रङ्क में होगी। हमें उस मकान में एक बार चलना पड़ेगा। फिर भी इसकी ज़्यादा उम्मीद नहीं है। अगर आप आज्ञा करें तो मैं चलूँ।"

हरिनारायण—नहीं-नहीं, इस बारे में ज़्यादा माथापच्ची करना व्यर्थ है। आपने एक दिन कहा था कि उस फ़िहरिस्त में कुछ नाम लिखे हुए थे। उन्हीं को तनिक सोचकर बतलाइए तो सही।

निर्मला ने जवाब दिया—"मुझे याद नहीं आ रहा है। फिर आप ही बतलाइए कैसे क्या कहूँ।"

हरिनारायण ने मुस्कराते हुए कहा—"अच्छा, याद आने का एक उपाय बतलाता हूँ; सुनिए। हम लोगों की आँखें फोटोग्राफी के प्लेट जैसी हैं। अक्सर कोई बात दिमाग़ में नहीं रहती; लेकिन आँखों में वह अङ्कित रहती है। आप याद करने का प्रयत्न मत करें। एक सादा काग़ज़ ले लीजिए और उसी पर फ़िहरिस्त में लिखित नामों को पढ़ने की कोशिश कीजिए।"

अब दोनों एक बेंच पर जा बैठे। हरिनारायण ने जेब से एक सादे काग़ज़ का टुकड़ा निकाला। फ़ाउन्टेन पेन ठीक करके निर्मला के हाथों में देते हुए वे बोले—"लीजिए, शुरू कीजिए तो।"

ठीक इसी समय पहलेवाली नौकरनी पास आ खड़ी हुई। उसने निर्मला-देवी को लक्ष्य कर कहा—"बहनजी, कोई आपको टेलीफोन पर बुला रहा है।"

हरिनारायण भी खड़े होकर बोले—"आपके साथ मैं भी चलना चाहता हूँ। इसमें आपको कुछ एतराज़ तो नहीं है? मैं सिर्फ़ यही जानना चाहता हूँ कि इस वक़्त जिसने फोन किया है वह व्यक्ति और तनिक पहले फोन करनेवाला आदमी, दोनों एक ही हैं या अलग-अलग आदमी हैं।"

मकान में आकर निर्मला ने रिसीवर को हाथ में लेकर कहा—"हाँ; क्या है?" उन्होंने फिर वह रिसीवर हरिनारायण के हाथ में दे दिया।

आवाज़ किसी पुरुष के गले की थी। उसने निर्मलादेवी से पूछा—"निर्मलादेवी से बात कर रहा हूँ न?"

"हाँ, आप कहाँ से फोन कर रहे हैं?"

निर्मला और एक बार पूछने जा रही थी। इसी समय हरिनारायण ने सोचा कि फोन कोई भी कर सकता है; उन्होंने दूसरी ओर रिसीवर को झुका दिया। कुछ भी जवाब नहीं आया।

निर्मला ने फिर आवाज़ दी—"हाँ, मुझे कौन बुला रहा है?"

हरिनारायण ने निर्मला के हाथ से रिसीवर ले लिया। उन्होंने ऊँची आवाज़ में पूछा—"हाँ; कौन बात करना चाहता है?"

लेकिन कुछ भी जवाब न मिलने पर हरिनारायण ने दफ़्तर को फोन करके पूछा—"अभी-अभी एक भले आदमी ने मुझे फोन किया था। सिलसिला क्यों काट दिया गया?"

"मैंने कुछ नहीं कहा महाशय।"

"लेकिन मुझे कोई जवाब न मिलने का कारण क्या है?"

"जवाब नहीं मिल रहा है? इसका कारण यह है कि जिसने बुलाया था, उसने फिर रिसीवर रख दिया है। हाँ, आपसे ठीक ही कह रहा हूँ।"

"उसका नम्बर क्या है?"

"यह नहीं कह सकता महाशय! यह क़ानून के ख़िलाफ़ है।"

हरिनारायण ख़ुद भी यह भली भाँति जानते थे। मारे ग़ुस्से के वे काँपने लगे। ऐसा कौन आदमी है जिसने निर्मलादेवी के लिए फोन किया और उसका जवाब पाकर ही सिलसिला काट दिया।

दोनों आदमी फिर बग़ीचे में लौट आये। पहले की जगह दोनों बैठ गये। निर्मला ने कहा—"हम लोग क्या कह रहे थे? हाँ फ़ेहरिस्त की बात......।"

हरिनारायण ने सारा काग़ज़ उसके सामने रख दिया। निर्मला एकटक उसकी ओर देखती हुई जी-जान से यह जानने की कोशिश करने लगी कि इस काग़ज़ के साथ पूर्वोक्त फ़िहरिस्त का मेल कहाँ पर है। उन्हें याद पड़ा फ़ेहरिस्त में उनके भाई का नाम था। उसके बाद रानी लीलावती का और फिर मिस्टर गुप्त का नाम था। इनके सिवा दो आदमियों के नाम उसमें और भी थे जो उनसे बिलकुल अपरिचित नहीं थे। कुछ देर तक सोचने पर वे एकाएक ज़ोर से कह उठीं—"हाँ, ठीक है; मुझे ठीक याद आ रहा है उसमें मिस्टर शर्मा और वर्मा के दो नाम और थे।"

हरिनारायण को हँसी आ गई। उन्हें हँसते देख निर्मलादेवी ने उत्साह के साथ कहा—"हाँ, इनके नाम थे तो निःसन्देह; अगर इसमें कुछ भूल हो सकती है तो यही कि इन नामों की क्रम-संख्या तीसरी और चौथी रही हो और रानी लीलावती का नाम सबसे पहले रहा होगा। इसके बाद एक तारीख़ भी थी—ऐसा मुझे स्मरण आ रहा है। शायद १ तारीख़ थी; इसके बाद ठीक नहीं कह सकती कि ६ थी या ७।"

"थोड़ा याद करने की कोशिश कीजिए निर्मलादेवी!"—हरिनारायण ने कुछ उत्तेजित होकर कहा।

कुछ देर तक सन्नाटा रहा। निर्मला ने जो नाम अभी अभी बतलाये थे उन्हीं के बारे में हरिनारायण कुछ सोच रहे थे। सादे काग़ज़ पर इन नामों को लिखकर वे तारीख़ का अङ्क १ लिखते हुए सोचने लगे—"क्या सम्बन्ध हो सकता है? रानी लीलावती की हत्या तो हुई थी...।"

एकाएक उनका ध्यान तोड़ती हुई निर्मलादेवी चिल्ला उठीं—"हाँ, मेरा ऐसा ख़याल हो रहा है कि उसमें एक नाम था...न जाने कौन गुप्त। आपको ऐसा कोई नाम मालूम है?"

हरिनारायण ने संयत स्वर में कहा—"मिस्टर गुप्त ! लेकिन मैं सोच नहीं पाता हूँ कि मिस्टर गुप्त का नाम... ।" एकाएक वे उछल पड़े । बोले—"गुप्त ! गुप्त ! अच्छा मिस्टर केदारनाथ गुप्त तो नहीं ?"

निर्मला ने अपनी स्मरण-शक्ति पर पूरा दबाव डालने की कोशिश की । अन्त में उन्होंने कहा—"हाँ, हो भी सकता है । जान पड़ता है, उनके नाम के शुरू में 'केदार' था ।"

अब हरिनारायण में इतना धैर्य नहीं रह गया कि वे निर्मलादेवी की बात और सुनें । वे उठ खड़े हुए और टहलते हुए अपने मन में कहने लगे—"राधाकृष्ण, लीलावती और मिस्टर शर्मा तथा वर्मा सभी तो, देखता हूँ, अज्ञात शत्रुओं के फन्दे में फँस चुके हैं । नहीं-नहीं, पूरी फ़िहरिस्त, अन्त तक, मुझे देखनी ही पड़ेगी ।"

हरिनारायण आकर निर्मलादेवी के सामने खड़े हो गये । उन्होंने निर्मलादेवी की ओर देखकर अभिमान-सूचक स्वर में कहा—"पूरी फ़िहरिस्त देखे बिना काम नहीं चलेगा । मैं क़सम खाकर कहता हूँ निर्मलादेवी कि आपके भैया के हत्यारे का पता लगने में ज़्यादा देर नहीं है ।"

निर्मलादेवी ने कृतज्ञता प्रकट करते हुए हरिनारायण की ओर देखा । उनकी आँखों में आँसुओं की कई बूँदें दिख पड़ीं । उनका सिर एकाएक हरिनारायण की गोद में लुढ़क गया ।

× × × ×

निर्मला से बिदा होने के पहले हरिनारायण ने उन्हें जताया कि "अभी मेरे साथ चलना तुम्हारे लिए ज़रूरी नहीं है ।" निर्मला की भी लौट चलने की वैसी इच्छा नहीं थी । इस समय तक भी उनके मन से भय दूर नहीं हो पाया था ।

फाटक के नज़दीक आते ही एक स्त्री ने पुकारकर कहा—"हरिनारायणजी, बड़ी अम्माँजी एक बार आपसे कुछ बातचीत करना चाहती हैं ।"

हरिनारायण लौट पड़े । लेडी-सुपरिंटेंडेंट ने उनसे भेंट कर बताया कि निर्मला का अब आश्रम में रहना नहीं हो सकता । आश्रम के नियमा-

नुसार अनाथ स्त्रियों को आश्रय देना उचित है; लेकिन उसके बदनाम होने के कारण अब मैं उसे यहाँ नहीं रहने देना चाहती। आप उसके रहने का कहीं और प्रबन्ध करें।"

लेडी सुपरिंटेंडेंट के कहने का रूखा ढङ्ग देख हरिनारायण दङ्ग रह गये। बोले—"आपकी बात मेरी समझ में नहीं आई। कैसी बदनामी ?"

"हरिनारायण बाबू, मुझे अभी-अभी मालूम हुआ है कि निर्मला-देवी के भाई राधाकृष्ण का रानी लीलावती से क्या सम्बन्ध था।"—लेडी सुपरिंटेंडेंट ने कहा।

"आपसे बिलकुल झूठ बात कही गई है।"

"इस बात को बढ़ाने की ज़रूरत नहीं। और भी एक-दो कारणों से उन्हें यहाँ न रखने के लिए मैं लाचार हूँ।"

"अच्छी बात है, मुझे भी कुछ कहना नहीं है। लेकिन कृपया मुझे दो एक दिन का समय दीजिए, जिससे उनके लिए मैं दूसरा कोई स्थान खोज लूँ।"

अब हरिनारायण लेडी-सुपरिंटेंडेंट को नमस्कार कर वहाँ से चल दिये।

१५

हरिनारायण एक दिन मोटर पर सवार हो कोर्ट-बिल्डिंग्स की ओर जा रहे थे और सोचते जा रहे थे कि नामों की फ़िहरिस्त को इससे पहले ही देख लेते तो अच्छा होता। क्रमशः नामों और तारीख़ों को देखने से पता चल जाता कि बदमाशों ने क़त्ल और डकैती का जो सिलसिला जारी कर रक्खा है उसके साथ फ़िहरिस्त के नामों और तारीख़ों का कैसा क्या मेल है। और अगर यह सच है तो यह मानना पड़ेगा कि निकट भविष्य में और भी हत्याएँ देखने को मिलेंगी। निर्मलादेवी भी उन बदमाशों का शिकार हों तो आश्चर्य नहीं। उन्हें आश्रम में दो बार टेलीफोन किया गया। आख़िर यह आदमी कौन है ? रानी लीलावती, कुमारी कनकलता, मिस्टर

गुप्त, शर्मा और वर्मा सभी तो उनके शिकार हो चुके हैं। लूट के सिवा बदमाशों का क्या और कुछ भी उद्देश्य नहीं है? ये सब लोग एक दूसरे के परिचित हैं। सभी या तो शर्मा-वर्मा के बैङ्क से सम्बन्ध रखते हैं अथवा मिस्टर गुप्त के मित्र हैं। कौन कह सकता है कि असल में क्या रहस्य है!

कोर्ट-बिल्डिंग्स के सामने आकर हरिनारायण गाड़ी से उतरे।

रामदयाल के मुक़दमे में वैसे तो विशेष आकर्षण की कोई बात नहीं थी। नाजायज़ माल रखने या नक़ली सिक्का बनाने के मुक़दमे में सर्वसाधारण की दिलचस्पी की कोई बात नहीं है; लेकिन आकर्षण की सिर्फ़ एक बात ज़रूर है इस मामूली मुक़दमे में नामी बैरिस्टर यूसुफ़अली का पैरवी करने के लिए खड़ा होना। हरिनारायण को इससे अत्यन्त आश्चर्य हो रहा था।

बरामदे में कुछ लोग इकट्ठा थे। हरिनारायण ने उनमें से बुआ को फ़ौरन् पहचान लिया। विचित्र ढँग से हाथ नचाकर वे, आदमियों के सामने, अपने को निरपराध सिद्ध करने की चेष्टा कर रही थीं। कह रही थी—'भैया मेरे, मैं यह सब क्या जानूँ? मेरी तो एक छोटी सी दूकान है। दो छोटी-छोटी कोठरियाँ ले रक्खी हैं। और एक कोठरी है ज़मीन के नीचे, जिसमें दूकान का सामान वग़ैरह रखती हूँ। भला मैं क्या जानूँ कि घर के साथ एक पुराने नाले का सम्बन्ध है, जो नदी में जा मिला है। मैं एक दिन घर में बैठी थी कि पुलिसवालों का एक दल मेरे घर में यह कहकर घुस गया कि 'यहाँ नक़ली रुपये बनते हैं, कोकेन की बिक्री होती है, इत्यादि'। मुझे कौन नहीं जानता; लेकिन इन अक़्ल के दुश्मनों को कौन समझावे! कल चौबीस घंटे तक मुझे हवालात में रखकर मार डाला। आज कहते हैं, गवाही देनी पड़ेगी।"

हरिनारायण खड़े होकर बुआ का व्याख्यान सुन रहे थे। एकाएक उनकी निगाह कल्लू पर पड़ी जो कुछ वकीलों और बैरिस्टरों के बीच खड़ा था। वह पागल की तरह अण्ट-शण्ट कुछ बक रहा था और लोग उसकी बातों पर हँसी का फ़व्वारा सा छोड़ते हुए तरह-तरह की चेष्टाएँ कर रहे थे।

बुआ कल्लू को देखते ही आश्चर्य से बोल उठीं—"क्यों रे कल्लू! क्या तुझे भी गवाही देने के लिए बुलाया गया है? ओफ़! मेरी तो मौत है।"

इसी समय बग़लवाला कमरा खुला। बुआ की पुकार हुई। लोगों ने उन्हें एक तरह से ज़बर्दस्ती ठेलकर अदालत के कमरे में किया। हरिनारायण ने कल्लू के कन्धे पर हाथ रखकर कहा—"भाई मेरे, पाँच मिनट के लिए मेरे साथ आओ। तुमसे मुझे 'वर्तमान संसार' के लिए एक बढ़िया लेख की सामग्री मिलेगी।" उसे साथ लिये हुए हरिनारायण बाहर निकल आये। एक सुनसान जगह खड़े होकर पूछा—"क्यों भाई रमाकान्त! बताओ, क्या ख़बर है।"

रमाकान्त ने धीमे स्वर से कहा—"कोई ख़ास बात नहीं है। अभी तक मैं बदमाशों के दल को ज़्यादा नुक़सान नहीं पहुँचा सका। हाँ, कुछ लोगों को जेल में ज़रूर भिजवा दिया है। अभी-अभी अदालत में एक आदमी आयेगा जो हर फ़न में उस्ताद है। हवाई जहाज़ और मोटर चला लेना उसके बायें हाथ का खेल है। बड़े से बड़े ताले वह बात की बात में तोड़ डालता है। नाम है उसका भोला। तुम ज़रा उधर नज़र रखना; मुझे उन सब बातों में समय दे सकने की फ़ुर्सत नहीं है।"

हरिनारायण—तो क्या मैं मामले की सुनवाई तक प्रतीक्षा करूँ?

रमाकान्त—हाँ। वह तो करनी ही पड़ेगी; क्योंकि इससे तुम्हें मतलब की बहुत सी ख़बरें मिलेंगी।

हरिनारायण—लेकिन तुमसे बहुत सी बातें करनी हैं और बहुत कुछ पूछना भी चाहता हूँ।

इसी समय पास ही किसी के पैरों की आहट मिलते ही दोनों एक दूसरे से हटकर खड़े हो गये। लेकिन इससे पहले ही रमाकान्त ने दबी हुई आवाज़ से कहा—"अच्छा, आज आठ बजे रात मैं तुम्हारे घर पर आऊँगा। कहीं जाना मत।"

× × × ×

कोई आध घंटे के बाद मुक़दमा शुरू हुआ। हरिनारायण अदालत के कमरे में जा बैठे। लेकिन जिरह के लम्बे प्रश्नोत्तरों में उनके मतलब की कोई बात नहीं मिली।

हरिनारायण सोच रहे थे—"इस शहर के कोने-कोने में नर घातक गुण्डे अपना जाल फैलाये हुए हैं। राधाकृष्ण की हत्या करनेवाले भी इन्हीं में से कोई होंगे। मौक़ा देखकर वे अपने जाल को खींच दिया करते हैं।"

१६

नौकर ने ख़बर दी—"एक अधेड़ स्त्री आपसे मिलना चाहती है।"

हरिनारायण ने हाथ की घड़ी की ओर देखा, आठ बजना ही चाहता है। शायद इसी वक़्त रमाकान्त आ जाय, यह सोचकर उन्होंने उस स्त्री से न मिलना ही ठीक समझा। लेकिन इसी समय उन्हें याद आया कि किसी पत्र के संवाददाता के लिए ऐसा करना ठीक नहीं। क्या जाने वह कोई ख़बर ही देने आई हो। उन्होंने नौकर से कहा—"अच्छा, उसे चटपट ले आओ।"

सीढ़ियों पर चलने की आवाज़ ज्योंही हरिनारायण के कानों में पहुँची, वे आगन्तुक स्त्री को देखने के लिए बड़ी खिड़की के छड़ों की आड़ में जा खड़े हुए। उन्होंने देखा उस स्त्री का शरीर गठा हुआ था। वह आँखों में चश्मा लगाये हुए थी। हरिनारायण ने कमरे का दरवाज़ा खोल दिया और वह स्त्री आकर सीधे उनकी कुर्सी पर बैठ गई।

हरिनारायण ने मन में कहा—"देखता हूँ, मेरा मकान इसका बिलकुल बिना जाना-पहचाना नहीं है।" लेकिन तुरन्त ही फिर से दरवाज़ा बन्द कर वे कुछ ही क़दम चले होंगे कि उन्होंने देखा कि उस स्त्री की झुकी हुई रीढ़ सीधी हो गई। इससे उन्हें अत्यन्त आश्चर्य हुआ। स्त्री ने अपनी चादर उतार डाली। वह हाथ में जो बैग लिये हुए थी उसे पास ही एक पलँग पर रखकर सिर के बालों को खींचने लगी।

हरिनारायण के मुँह से आवाज़ तक न निकली जब उन्होंने देखा कि स्त्री का नक़ली भेस छोड़कर गठीले शरीरवाले रमाकान्त उनके सामने खड़े हैं। हरिनारायण खिलखिलाकर हँस पड़े और उन्होंने लपककर रमाकान्त को अपने बाहु-पाश में भर लिया। उन्होंने स्नेहार्द्र स्वर में कहा—"ओह! रमाकान्त! हे भगवन्! आख़िर मैं भी तुम्हें नहीं पहचान सका।"

रमाकान्त ने मुसकराते हुए कहा—"अब जान में जान आई। जब तुम मुझे तनिक भी नहीं पहचान सके, तब मेरी बहुत कुछ चिन्ता जाती रही। इससे तो, मालूम होता है कि, मेरा बदला हुआ भेस अच्छा ही रहा। क्यों तुम्हारी क्या राय है?"

हरिनारायण ने प्रतिवाद करते हुए कहा—"अच्छा तो बेशक रहा; लेकिन सच तो यह है कि तुम मेरी आँखों में धूल नहीं झोंक सकते थे। असल में मैंने स्त्री समझकर, शिष्टाचार का ख़याल कर, तुम्हारी ओर ध्यान से देखा ही नहीं था।"

"तो अब तक पूरे सतयुगी ही बने हुए हो!"—रमाकान्त ने व्यंग्य और उत्सुकता-पूर्ण ढंग से कहा।

हरिनारायण ने एकाएक गम्भीरता धारण कर ली। वे रमाकान्त से बोले—"भाई, मैंने सब घटनाओं का सिलसिला बाँधनेवाला सूत्र ढूँढ़ लिया है।"

रमाकान्त ने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा—"ढूँढ़ लिया है? अच्छा, मैं भी सुनूँ, वह क्या है।"

हरिनारायण ने लापरवाही के साथ कहा—"तुम्हारे कहने के अनुसार मुक़दमे की सुनवाई के वक़्त मैं अदालत के कमरे में मौजूद था। सब सुनकर जिस नतीजे पर पहुँचा हूँ वही कहता हूँ; सुनो। शहर में कहीं पर उन लोगों ने एक अड्डा खोल रक्खा है। वहाँ सब लोग आपस में मिलते जुलते हैं। लेकिन कोई यह भेद नहीं बतलाना चाहता कि वह अड्डा कहाँ है। अड्डे के मुखिया के आज्ञानुसार ही गरोह के सब लोग

काम करते हैं। राधाकृष्ण की हत्यावाले मामले में भी उन लोगों का काफ़ी हाथ जान पड़ता है। सब बातों पर ध्यान देकर देखने से पता चलता है कि सभी घटनाओं की जड़ में मिस्टर गुप्त का हाथ है। उनके साथ सब जगहों से सम्बन्ध दीख पड़ता है।"

रमाकान्त ने प्रतिवाद करते हुए, गम्भीरता के साथ, कहा—"नहीं! वे इसमें नहीं हैं।"

हरिनारायण—इसका मतलब?

रमाकान्त—मतलब कैसा? मैं ज़ोर देकर कहता हूँ कि वे नहीं हैं।

हरिनारायण ने आश्चर्य के साथ कहा—"वे नहीं हैं?"

रमाकान्त ने कुछ जवाब नहीं दिया। वे चुपचाप सिगरेट का धुआँ खींचने लगे।

लेकिन हरिनारायण उन्हें सस्ते छोड़नेवाले आदमी नहीं। उन्होंने अपनी बात सिद्ध करने की कोशिश करते हुए कहा—"सोचकर देखो। राधाकृष्णवाले मामले में पहले रानी लीलावती की हत्या हुई। शायद पुराने प्रेमी द्वारा छोड़ दी जाने पर ही उन्होंने दुःख और पछतावे के कारण अपने हाथों अपनी जान गँवा दी है।"

रमाकान्त—नहीं।

रमाकान्त की इस बात से हरिनारायण कुछ नाराज़ से होते दीख पड़े। इसी कारण उन्होंने आवाज़ कुछ ऊँची कर कहा—"लेकिन मैं तुमसे पूछना चाहता हूँ कि उस दावतवाले दिन मिस्टर केदारनाथ गुप्त के यहाँ से कुमारी कनकलता के जो लाखों रुपयों के गहने ग़ायब हो गये उन्हें क्या तुम समझते हो कि उनके निमन्त्रित लोगों में से कोई उड़ा ले गया? मैं तो समझता हूँ कि ऐसा होना असम्भव है। कारण यह है कि एक तो जितने आदमी वहाँ पर मौजूद थे उन सबकी खानातलाशी पुलिस ने ले ली थी, दूसरे निमन्त्रित व्यक्तियों में से सभी उनकी जान-पहचान के और प्रतिष्ठित थे।"

रमाकान्त—नहीं।

हरिनारायण का चेहरा लाल हो गया; उनके होंठ काँपने लगे। उन्होंने उत्तेजित होकर कहा—"मैं जानता हूँ, भेस बदले हुए तुम भी उस दिन वहाँ मौजूद थे और किसी ने तुम्हें पहचाना नहीं। लेकिन—ख़ैर, उस बात को जाने दो। इसके आगे मेरी कोई भी युक्ति नहीं चलने की। फिर भी एक बात पूछना मैं ज़रूरी समझता हूँ। आख़िर तुम्हें कोई नई ख़बर मिली है? तुम्हें पता चला, गहने वग़ैरह किसने चुराये?"

रमाकान्त—नहीं।

हरिनारायण—क्या तुम्हारा मुँह नहीं खुलेगा? तुम्हारे रङ्ग-ढङ्ग से तो मुझे मालूम होता है कि तुम मुझसे कुछ छिपा रहे हो। अच्छा, कुछ हर्ज नहीं। अब मैं जो कहता हूँ उसे सुन लो। मैं समझता हूँ, मेरी बात मान लेने में तुम्हें कुछ उज्र नहीं होगा। उस दिन जब तुम्हारे साथ पहले-पहल मेरी भेट हुई थी तब तुमने मुझे बताया था कि कुछ लोग आसानी से जाली रुपयों को लाकर उन्हें चलाते हैं। उनकी इस हरकत ने ख़ुद तुम्हें भी आश्चर्य में डाल रक्खा है। लेकिन मैं कहना चाहता हूँ कि कोई बड़ा आदमी उन लोगों में न रहने से वे लोग इतनी आसानी से कारबार नहीं चला सकते। बुआ का ज़मींदोज़ मकान ही इनके व्यवसाय का अड्डा है और मेरा ख़याल है कि मिस्टर गुप्त की मदद से सारा काम-काज चल रहा है।

रमाकान्त—नहीं।

हरिनारायण ने और कुछ भी नहीं कहा। लेकिन उन्हें देखने से साफ़ पता चलता था कि वे बहुत उत्तेजित हो गये हैं।

रमाकान्त ने उनकी ओर देखे बिना ही सिगरेट पीना शुरू किया।

हरिनारायण ज़्यादा देर तक चुप नहीं रह सके। कुछ मिनट बाद उन्होंने रमाकान्त से पूछा—"अच्छा, तो तुम बतलाओ न, क्या मामला है।"

रमाकान्त ने हरिनारायण की ओर इस ढङ्ग से देखा जैसे उसकी झपकी अभी-अभी दूर हुई हो। उसने संयत स्वर में कहा—"अभी

तक 'सिर्फ़ रानी लीलावती की आत्महत्या के सिवा प्रमाण तो किसी बात का मिला नहीं है। और गहनों के चोरी चले जाने की चोट सहकर भी कुमारी कनकलता ने अगले महीने मिस्टर गुप्त के गले में माला पहनाना स्वीकार कर लिया है। मेरी समझ में इसमें आश्चर्य करने की अवश्य ही कोई बात नहीं है। यह जो लगातार--एक के बाद दूसरी--चोरी-डकैती का सिलसिला चला आ रहा है, इसमें भी वैसी कोई आश्चर्य-जनक बात नहीं है।"

"आश्चर्य करने की कोई बात नहीं है?"—हरिनारायण उछल पड़े। बोले—"रमाकान्त, तुम मज़ाक़ कर रहे हो। यदि ऐसा न होता तो राधाकृष्ण की घटना से लेकर अन्त तक की सब घटनाओं को देखने से सहज ही....."

हरिनारायण एकाएक रुक गये।

अब तक रमाकान्त एकटक उनकी ओर देख रहे थे। उनके चुप हो जाने पर बोले—"जो कह रहे थे, उसे पूरा कह डालो। बताओ, क्या कहना चाहते थे।"

हरिनारायण ने, सोकर एकाएक उठे हुए आदमी तरह, कहा—"साङ्गोपाङ्गा की बात।"

रमाकान्त ने साथ ही कहा—"बहुत ठीक। अब ठिकाने पर आये।"

उस दिन की बात याद कर दोनों मित्र एक-दूसरे की ओर देखते रह गये।

अन्त में हरिनारायण ने कहा—"रमाकान्त, तुम्हें क्या जँचता है? हवालात का पहरेदार रामसेवक ही क्या साङ्गोपान्ज़ा का अवतार है?"

रमाकान्त ने गम्भीरता-व्यञ्जक स्वर में कहा—"नहीं भाई! तुम अनजान आदमी की तरह कैसी बहकी बातें कर रहे हो! रहस्यमय मार्ग पर जो बड़ा भारी पहिया लगातार चल रहा है, उसका एक मामूली 'अरा' होने तक की सामर्थ्य रामसेवक में नहीं है।"

हरिनारायण ने कहा—"तो फिर मिस्टर गुप्त?" हरिनारायण किसी तरह अपना ख़याल दूर नहीं कर पा रहे थे।

रमाकान्त—'भाई, मेरे कहने से तुम मिस्टर गुप्त को छोड़ दो। बिना कुछ जाने-समझे सांकोपांज़ा के बारे में कोई निश्चित धारणा बना लेना हमारी भूल होगी। हाँ, यह ऐसी-वैसी भूल नहीं, वरन् भयानक भूल होगी। जिस सांकोपांज़ा की असली शकल-सूरत के बारे में हम लोग आज भी कुछ नहीं जानते उसे हम पहचानेंगे ही क्योंकर?"

रमाकान्त की उत्तेजना उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही थी। उसने कहा—"सांकोपांज़ा को हम लोगों ने एक बार देखा है, बूढ़े रायबहादुर के भेस में; फिर उसे ख़ूब हट्टे-कट्टे आदमी की शकल में देखा है। कभी सेठ-साहूकार की पोशाक में देखा है तो कभी बुड्ढे मरीज़ क्लर्क की शकल में। हम कैसे जान सकेंगे कि वह किस भेस में, किस ढङ्ग से, इस वक़् हम लोगों में घूम-फिर रहा है? हम लोग कुछ भी तो नहीं जानते कि असल में उसका मुँह, आँख, कान और रङ्ग वग़ैरह कैसे हैं। हम लोगों को उसे नक़ली शक्ल से रहित वास्तविक रूप में देखने का तो कभी मौक़ा ही नहीं मिला। इसी से तो उसका पीछा करना और उसे ढूँढ़ निकालना इतना मुशकिल हो रहा है। कभी-कभी तो हम लोग उसका पीछा करने में विपत्ति के मुंह में जाकर बाल बाल बच गये हैं। सांको पांज़ा हर वक़् अलग-अलग शक्ल बनाये हुए और कभी-कभी तो एक ही समय दो-तीन शक्ल रक्खे हुए घूमता रहता है। कितना मायावी है वह, इसका ठीक-ठीक अन्दाज़ा कर सकना भी कठिन है।"

सांकोपांज़ा की आलोचना करते समय रमाकान्त आपे में नहीं रहता था शायद वह उसके बारे में न जाने कितनी देर तक बकता रह सकता था।

हरिनारायण आश्चर्य में डूबे हुए से बैठे रहे।

रात धीरे-धीरे ज़्यादा होती जा रही थी।

अन्त में रमाकान्त उठ खड़ा हुआ। दोनों के चेहरों पर उस समय हँसी का कोई भी चिह्न नहीं दीख पड़ रहा था।

हरिनारायण, निर्मलादेवी के बारे में आश्रम में जो घटना हुई थी, उसे रमाकान्त को बताये बिना नहीं रह सके। रमाकान्त पहले तो जी भरकर

हँसते रहे। फिर गम्भीर होकर हरिनारायण के कानों में, नसीहत के तौर पर, जो कुछ कहा, उसके उत्तर में पहले तो उन्होंने इनकार करने की ही बात सोची थी, लेकिन ख़ूब सोच-समझकर उन्होंने मित्र की नसीहत के अनुसार ही काम करना ठीक समझा।

बिदा होते समय रमाकान्त ने हरिनारायण का एक हाथ थामकर धीरे से कहा—"हरिनारायण, तुम मेरी बातों पर जितना ध्यान से विचार करोगे, उतना ही मेरी सीख तुम्हें भली मालूम होगी। सिर्फ़ ग़ौर करने से ही तुम जान जाओगे..."

हरिनारायण ने मित्र की बातों पर चुपचाप अपनी सम्मति प्रकट करने का संकेत किया।

१७

दूसरे दिन हरिनारायण उस मैजिस्ट्रेट के यहाँ बुलाये गये जो पुलिस के चलाये हुए मुक़दमों का फ़ैसला करता था। निर्मलादेवी के बारे में उस दिन मौसी के मकान में जो दुर्घटना हुई थी, उसके ख़ास गवाह वही थे।

अदालत में पहुँचने पर पहले ही हरिनारायण की भेट निर्मलादेवी से हुई। उनके पीछे थे बैङ्कर शर्मा और वर्मा, निर्मला की मौसी और लेखराज।

हरिनारायण को देखते ही निर्मलादेवी कोमल स्वर में बोल उठीं—"ओहो! हरिनारायण त्रिपाठीजी, आप आ गये? मुझे तो आपके आने की कुछ भी उम्मीद नहीं थी। मैजिस्ट्रेट साहब ने कई बार आपकी तलाश कराई थी।"

हरिनारायण को कुछ आश्चर्य हुआ। जेब से अदालत का सम्मन निकालते हुए वे बोले—"क्यों? मुझे तो दो बजे आने के लिए लिखा है? देखिए न!"

निर्मलादेवी ने हँसकर कहा—"वह तो देख रही हूँ। लेकिन मुझे तो ग्यारह बजे ही आने का हुक्म था। ख़ैर; इसमें मेरा ही क़सूर है।

कल आपने जब मुझे, आश्रम में, यह जानने के लिए फोन किया था कि मुझे कब बुलाया गया है, तभी मुझे कह देना चाहिए था। लेकिन मैंने जब फोन पकड़ा तभी......"

हरिनारायण ने तेज़ नज़रों से निर्मलादेवी को देखते हुए कहा—"आप यह क्या कह रही हैं ! कल शाम को मैंने आपको हरगिज़ फोन नहीं किया। किसने कहा आपसे कि मैं आपको फोन पर बुला रहा हूँ ?"

निर्मलादेवी—किसी ने नहीं कहा; फिर भी मैंने ख़ुद अन्दाज़ा कर लिया। मेरे बारे में और किसके सिर में इतना दर्द होगा ?"

फिर वही टेलीफोनवाला मामला ! आख़िर इसमें कौन सा रहस्य है ? न तो निर्मला ने किसी को भी अपना पता बतलाया और न ख़ुद मैंने ही। फिर भी शहर से बाहर, सुनसान आश्रम में, छिपकर रहने पर भी अज्ञात शत्रु के हाथ से उनका छुटकारा नहीं।

एक प्रकार की भयानक बेचैनी से हरिनारायण का कलेजा जलने लगा। उन्होंने निर्मलादेवी की ओर देखकर कहा—"आश्रम में तो अब आप और नहीं रह सकेंगी। तो कहाँ रहने का आपने निश्चय किया ?"

निर्मलादेवी ने अप्रसन्नता-व्यंजक ढङ्ग से कहा—"कितना ही कष्ट क्यों न हो; आज तो आश्रम को ही लौट चलना है। इसके बाद कल से जहाँ भाग्य में बदा होगा, रहने का इन्तज़ाम किया जायगा।"

इसी समय मैजिस्ट्रेट मिस्टर निगम के इजलासवाले कमरे का दरवाज़ा ख़ुला। एक कर्मचारी उसमें से बाहर निकला और इधर-उधर देख-भालकर उसने पूछा—"हरिनारायण त्रिपाठी आये हैं ?"

हरिनारायण ने आगे बढ़कर जवाब दिया—"जी हाँ; मैं अभी आता हूँ।"

हरिनारायण फिर निर्मलादेवी के पास आकर धीरे से बोले—"आप यहीं रुकी रहकर मेरी प्रतीक्षा करें। मुझे आपसे एक बात और कहनी है। वह यह कि किसी भी क्षण आप यह न भूलें कि इसके बाद जो कुछ भी घटना होगी—जिसमें आपको अकेली, मेरे साथ या दूसरे लोगों

के साथ रहना पड़े; चाहे इसी वक्त या बाद को, आपके भाग्य में जो कुछ भी बदा हो, और उसमें मेरा क़सूर चाहे कितना ही अधिक क्यों न हो—वह सब आपकी भलाई के लिए होगी। मैं इससे ज़्यादा इस वक्त कुछ नहीं कह सकता।" हक्का-बक्का हो रहे व्यक्ति की तरह देखती हुई निर्मला के कुछ कहने से पहले ही हरिनारायण लपककर मैजिस्ट्रेट के कमरे में दाखिल हुए।

मिस्टर निगम ने हरिनारायण का सम्मान करते हुए उनसे हाथ मिलाया और मुसकराते हुए कहा—"निर्मलादेवी की जान बचाने के लिए मैं आपकी प्रशंसा करता हूँ। इस मामले में सभी अख़बारनवीसों में आप सचमुच प्रशंसा के पात्र हैं। अब आप यह बतलावें कि आपका खयाल क्या है। निर्मलादेवी की हत्या करने की कोशिश की गई थी या उन्होंने ख़ुद ही आत्महत्या करनी चाही थी।"

हरिनारायण ने संयत स्वर से जवाब दिया—"इस बारे में मुझे कुछ भी शक नहीं कि यह उनकी हत्या की कोशिश है।"

"मेरा भी यही खयाल है। शुरू से ही मेरा विचार है...।"—मिस्टर निगम की बात में एक कर्मचारी के आ जाने से रुकावट पड़ गई। उनके पास खड़े होकर उसने पूछा—"क्या हरिनारायण त्रिपाठीजी की गवाही ली जायगी?"

मिस्टर निगम ने कहा—"चार-छः पंक्तियों में लिख रक्खो। मैं समझता हूँ कि त्रिपाठीजी ने 'वर्तमान संसार' में जो विवरण लिखकर प्रकाशित कराया है, उसके सिवा कोई और नई बात उन्हें नहीं कहनी है।"

हरिनारायण ने गम्भीरता के साथ कहा—"जी हाँ, आप ठीक कह रहे हैं।"

उक्त कर्मचारी ने हरिनारायण का बयान संक्षेप में लिखकर एक बार पढ़कर सुना दिया। हरिनारायण ने उस पर अपने हस्ताक्षर कर दिये।

मिस्टर निगम ने हरिनारायण से कहा—"गवाहों से दो-चार बातें मैं और पूछ लेना चाहता हूँ जिसमें मामला ज़रा साफ़ हो जाय। इसके बाद सबके सामने ही गवाहों के बयानों का एक दूसरे से मिलान कर देखूँगा।"

हरिनारायण कमरे में मैजिस्ट्रेट के पास ही एक जगह बैठ गये। न्यायकर्ता की कुर्सी पर बैठकर मैजिस्ट्रेट सब गवाहों से कड़ाई से जिरह करने लगे।

पहला नम्बर था निर्मलादेवी का। उनका जवाब निर्भीकता और सरलता से भरा था। फिर मौसी की बारी आई। इस दुर्घटना के प्रकट होने से उनकी बेहद बदनामी होने की आशङ्का के सिवा उन्हें और कुछ सङ्कोच नहीं था।

हरिनारायण के सामने ही नौकर लेखराज खड़ा था। उसका जवाब अनजान आदमी की तरह था। उस दिन की घटना के बारे में कोई ब्योरेवार बात वह नहीं कह सका।

दोनों बैङ्कर भी पास ही बैठे हुए थे। मिस्टर शिवचरण वर्मा की उम्र काफ़ी हो चली थी। उनके चेहरे से एक प्रकार की शान्ति और स्वच्छता की ज्योति प्रकट होती थी। श्रीयुक्त रामचरण शर्मा की उम्र उनसे बहुत कम थी; फिर भी उन्हें देखते ही उनकी बुद्धिमत्ता, कार्य-पटुता और सजीवता का पता चल जाता था। शहर के प्रतिष्ठित लोगों में उनके नाम की प्रसिद्धि भी ख़ूब थी।

मिस्टर निगम ने इन लोगों की ओर देखकर पूछा—"आप लोग निर्मलादेवी के पास क्यों गये थे? इसी लिए न कि इस मुसीबत के वक़्त उनकी कुछ सहायता कर सकते हैं या नहीं?"

शर्म के मारे निर्मलादेवी का सिर झुक गया; उस ओर देखकर मिस्टर वर्मा ने कहा—"इसमें तनिक बखेड़ा है। उम्मीद करता हूँ, मिस निर्मला इस पर कुछ आपत्ति न करेंगी। उन्होंने हम लोगों से किसी क़िस्म के दान के लिए निवेदन नहीं किया था और न हम लोगों का वह उद्देश्य ही था। पुरानी जान-पहचान के कारण ही मिस निर्मला ने पत्र लिखकर हमसे पूछा था कि उनके लिए हम लोग कोई काम-काज ढूँढ़ सकते हैं या नहीं। काम हो सकने की उम्मीद करके ही हम लोग उनके पास यह जानने के लिए गये थे कि वे कौन सा काम कर सकेंगी। ईश्वर

का धन्यवाद है कि उस समय हम लोग वहाँ मौजूद थे और उनकी जान बचाने में हरिनारायण त्रिपाठी की थोड़ी-बहुत मदद भी कर सके थे।"

मिस्टर निगम ने हरिनारायण से पूछा—"अच्छा त्रिपाठीजी, आप बतला सकते हैं कि घर में जाने पर आपको सन्देह पैदा करनेवाली कोई चीज़ दीख पड़ी थी या नहीं। अख़बार में तो लिखा है—'हत्या करने की कोशिश जान पड़ती है'।"

हरिनारायण ने जवाब दिया—"हाँ, वही ठीक है। बड़ी खिड़की खोलकर सन्देह-जनक कोई चीज़ पाने की उम्मीद से ही मैं बाहर की ओर, दीवार देखने के लिए झुक गया था। मैं खिड़की के छड़ों की भी जाँच करने से बाज़ नहीं आया।"

"क्यों? बतलाइए तो।" मैजिस्ट्रेट ने पूछा।

हरिनारायण—बात यह है कि मिस्टर गुप्त के घर की घटना को मैं तब तक भूला नहीं था। उस घटना की जाँच करने का काम अवश्य ही आपके ज़िम्मे नहीं था; इससे कह नहीं सकता कि आपका उसके बारे में क्या ख़याल है। लेकिन मेरा ख़याल है कि इन रहस्य से भरी हुई घटनाओं में परस्पर एक सम्बन्ध है। शायद आपको पता होगा कि पुलिस की तहक़ीक़ात के बाद, मिस्टर गुप्त द्वारा निमन्त्रित भले आदमियों ने जब एक-एक कर अपने घर का रास्ता लिया तब, उस कमरे की—जिसमें कुमारी कनकलता अचेत की दशा में पाई गई थीं—एक खिड़की की सिटकिनी के ऊपर गलाई हुई मोमबत्ती का एक टुकड़ा पाया गया था। वह जैसे कड़ा था वैसे ही एक ओर से टूटा हुआ था। मतलब यह कि मोमबत्ती में ही हीरे और मोती वग़ैरह थोड़ी देर तक छिपाकर रक्खे गये थे। इससे अगर यह ख़याल कर लिया जाय कि जाँच जितनी देर तक जारी रही, बदमाश उतनी देर तक मिस्टर गुप्त के घर पर ही मौजूद थे; क्योंकि जब किसी को बाहर निकलने का कोई रास्ता नहीं था...अच्छा, जाने दीजिए उस बात को। जब मैं यहाँ मिस्टर गुप्त के घरवाले मामले में गवाही देने नहीं आया, तब खिड़की के छड़ों इत्यादि की जाँच क्यों की—

यही कहता हूँ। मैं सिर्फ़ देखना चाहता था कि मिस्टर गुप्त के घर पर जो काण्ड हो चुका है, उसका अभिनय फिर भी होता है या नहीं।

मैजिस्ट्रेट—अन्त में आपने क्या तय किया?

हरिनारायण—खिड़की के दरवाज़े पर कुछ भी मुझे नहीं मिला, इससे अन्त में मैं कुछ भी तय नहीं कर पाया।

मिस्टर शिवचरण वर्मा ने मिस्टर निगम की ओर देखकर कहा—"श्रीमान् यदि इजाज़त दें तो मैं कुछ कहूँ। हरिनारायण त्रिपाठी की राय से मेरी राय मिलती-जुलती है। मिस्टर गुप्त के घर जो घटना हो चुकी है उससे निर्मलादेवी की दुर्घटना मिले या न मिले; लेकिन इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि रानी लीलावती की मृत्यु के साथ इसका सम्बन्ध है।"

मिस्टर रामचरण शर्मा बोले—"इस मामले में मेरा ख़याल कुछ और आगे बढ़ा हुआ है। हम लोगों के बैङ्क का जो सोना लुट गया है उससे भी इस रहस्य से भरी हुई घटना का शायद सम्बन्ध है।"

मिस्टर निगम ने सहानुभूति प्रकट करते हुए कहा—"ओहो! वह तो नक़ली रुपयों की बात है। इसमें सन्देह नहीं कि आप लोगों का बहुत ज़्यादा नुक़सान हुआ है।"

मिस्टर रामचरण शर्मा उदासीनता प्रकट करते हुए, तनिक मुसकरा-कर, बोले—"उस विषय में कुछ न पूछिए हुज़ूर! उसने तो हम लोगों के व्यवसाय की जड़ तक हिला दी है। बहुत से बड़े-बड़े लोग, जिनका हमारे यहाँ हिसाब था, इस घटना से घबरा उठे थे। मिस्टर गुप्त भी इनमें से एक हैं। वे हमारे एक ख़ास असामी हैं। हुज़ूर तो जानते ही हैं, रोज़गार की जड़ ऐतबार है। हमने बहुत कुछ नुक़सान तो अपने निजी बीमे के रुपयों से पूरा कर लिया है; लेकिन रुपयों के अलावा और भी जो कुछ हमारा नुक़सान हुआ है, उसका पूरा होना सम्भव नहीं। ख़ैर, हमारी चाहे जितनी अधिक हानि क्यों न हुई हो, वह निर्मलादेवी के नुक़सान के मुक़ाबले में कुछ भी नहीं है। उन्हें एक चोट तो लगी ही थी, अब दूसरी को भी सिर पर झेलना पड़ा। रानी लालावती की हत्या, उनके भाई की......।"

हरिनारायण ने बीच में ही टोककर कहा—"रानी लीलावती की हत्या किसी ने नहीं की। उन्होंने आत्महत्या कर ली है। इसके लिए मैं आप लोगों को ज़िम्मेदार बनाना नहीं चाहता। फिर भी मालूम तो यही होता है कि आप लोगों ने उनकी सब की सब पूँजी के ख़त्म हो जाने की सूचना लिखकर भेज दी थी; इसीसे उन्हें हद दर्जे की चोट पहुँची थी।"

मिस्टर शिवचरण वर्मा ने शान्त संयत स्वर में कहा—"हरिनारायण त्रिपाठीजी! आप क्या यह सोचते हैं कि उन्हें सूचना देने के सिवा हम लोगों के सामने कोई दूसरा रास्ता भी था? जहाँ लेन-देन का कारबार है, वहाँ सच बात बतलाने के लिए हम लोग क़ानून और न्याय की दृष्टि से बाध्य हैं। इसके सिवा हमारे और आपके बीच एक और गहरा मतभेद है। हम लोगों की राय है कि रानी लीलावती का क़त्ल किया गया है।"

मिस्टर निगम ने कहा—"मैं आप लोगों को अपनी राय बता देना चाहता हूँ। मान लीजिए, आप लोग मैजिस्ट्रेट के कमरे में नहीं बैठे हुए हैं, बल्कि अपने किसी दोस्त के यहाँ बैठे हुए हैं। एक साधारण व्यक्ति की हैसियत से मैं कहना चाहता हूँ कि रमाकान्त के साथ रहकर हरिनारायण त्रिपाठीजी ने यद्यपि अपनी योग्यता बहुत कुछ बढ़ा ली है, फिर भी इस मामले में उनसे हमारी राय नहीं मिल रही है।"

हरिनारायण ने व्यंग्य करते हुए कहा—"श्रीमान् ने ख़ासी लम्बी दुम जोड़ दी मुझे।"

मिस्टर निगम ने उनकी बातों की ओर कुछ भी ध्यान न देते हुए कहा—"इस मामले में श्री शिवचरण वर्मा से मैं सहमत हूँ। अवश्य ही रानी लीलावती को किसी ने या कुछ लोगों ने मिलकर मार डाला है।"

हरिनारायण ने क्रोध-व्यञ्जक स्वर में कहा—"आप लोग युक्ति और तर्क के सहारे कुछ नहीं कहते। रानी लीलावती की चिट्ठी ही से साबित है कि उन्होंने आत्महत्या की है। चिट्ठी के सच होने में भी कुछ सन्देह नहीं है। सर्वस्व नष्ट होने की ख़बर मिलने से ही उन्हें सांघातिक चोट पहुँची और इसी कारण उन्होंने आत्महत्या कर ली।"

कुछ देर तक कमरे में गहरा सन्नाटा छाया रहा। बाद को शिवचरण वर्मा ने धैर्य और गम्भीरता के साथ कहा—"तो फिर आप क्या कृपा कर हमें समझा देंगे कि रानी लीलावती की लाश राधाकृष्ण की चित्रशाला में क्योंकर गई?"

हरिनारायण को इसी प्रकार के प्रश्न किये जाने की उम्मीद थी। उन्होंने कहा—"मेरी समझ में तो इसके दो कारण हो सकते हैं। पहला तो—जो मुझे युक्ति-सङ्गत नहीं जँचता—यह है कि रानी लीलावती के मन में जिस वक़्त आत्महत्या करने की इच्छा उत्पन्न हुई उसी वक़्त यह इच्छा भी उनके मन में हुई कि आत्मीयों को आख़िरी बार देख लूँ। इसके सिवा राधाकृष्ण ने अपने घर आने के लिए उन्हें निमन्त्रण भी भेज रक्खा था। सम्भवतः विष-पान के समय के सम्बन्ध में उन्होंने गड़बड़ कर दी थी; क्योंकि वे भली भाँति जानती थीं कि उनकी लाश राधाकृष्ण के घर पाई जाने पर उसे कितनी मुसीबत का सामना करना पड़ेगा। इसी से जो वे अपनी ख़ुशी से नहीं आईं यह ठीक ही था। दूसरा कारण मेरी राय में ज़्यादा सम्भव मालूम होता है। वह यह है कि सर्वस्व स्वाहा हो जाने की ख़बर पाकर रानी लीलावती ने अपनी जान दे डालने का निश्चय किया। यह ख़बर, चाहे जैसे हो, ऐसे किसी आदमी को लग गई जिसका बहुत कुछ स्वार्थ उनके आचरण से जुड़ा हुआ था। रानी लीलावती के विष पीते ही वह आदमी या उसके साथी लोग रानी साहबा की लाश को राधाकृष्ण की चित्रशाला में ले गये। राधाकृष्ण को भी उन लोगों ने अनजान में या ज़बर्दस्ती बेहोशी की दवा दे दी। इसी का नतीजा यह है कि दूसरे दिन पुलिस ने आकर रानी लीलावती की लाश के साथ राधाकृष्ण को बेहोशी की हालत में पाया। होश में आने पर राधाकृष्ण ने कोई सन्तोष-जनक वक्तव्य नहीं दिया। इसी कारण पुलिस को उन्हें रानी लीलावती का हत्यारा समझ लेने में कुछ भी अस्वाभाविक बात नहीं मालूम हुई। आप लोग क्या कहते हैं?"

मिस्टर निगम ने कहा—"लेकिन आप एक बहुत ज़रूरी, काम की, बात भूलते जा रहे हैं। राधाकृष्ण की चित्रशाला में तेज़ ज़हर की एक शीशी खुली हुई पाई गई थी। राधाकृष्ण से पूछने पर उन्होंने बतलाया था कि बहुत दिनों से उन्होंने किसी क़िस्म के विष का इस्तेमाल चित्र बनाने के लिए नहीं किया था। वे असल में अपराध प्रमाणित करने के सब सूत्रों को नष्ट कर डालते; लेकिन ऐसा जब नहीं कर पाये तब. जान पड़ता है, उन्होंने सच कह दिया। और अगर यह सच हो तो मानना ही होगा कि सारे मामले के भीतर ऐसा रहस्य छिपा हुआ है जिसका हम लोगों को आज तक कुछ पता नहीं चला।"

शिवचरण वर्मा ने कहा—"हरिनारायणजी की बातें यद्यपि विशेष तर्क-सम्मत नहीं हैं फिर भी उनमें एक रोमाञ्चकारी कार्य की गन्ध पाई जाती है। अच्छा, हरिनारायण बाबू, अगर आपकी बात सही मान ली जाय तो आप हम लोगों को यह समझाने की कृपा करेंगे कि रानी लीलावती की लाश को उस तरह ढोकर ले जाने में हत्यारे का कौन सा लाभ था?"

हरिनारायण की आँखों से चिनगारियाँ निकल रही थीं। जोश के मारे उनके गले की आवाज़ में एक अजीब तरह का परिवर्तन हो गया। उन्होंने कहा—"आपके इस सवाल का जवाब देने के लिए भी मैं तैयार हूँ और जवाब भी बहुत मामूली है। रानी लीलावती की लाश ढोकर ले जाने में हत्यारे का लाभ यह है कि उसने एक ही ढेले से दो चिड़ियों का शिकार करने की कोशिश की है। एक तो उसने हत्या के सम्बन्ध में पुलिस की आँखों में धूल झोंक दी है; दूसरे एक बेगुनाह आदमी के कन्धों पर जुर्म का बोझ लाद दिया है। मेरा तो ख़याल है कि उसकी चालाकी कारगर भी हुई है।"

सुननेवाले सब लोग चुपचाप यह कहानी सुन रहे थे। सिर्फ़ मिस्टर निगम कुर्सी से उठकर जल्दी-जल्दी कमरे में टहल रहे थे।

हरिनारायण कहने लगे—"मामला यहीं तक ख़तम नहीं है। मैं कुछ और कहना चाहता हूँ। नहीं कह सकता कि इसका आख़िरी

नतीजा क्या होगा। यह मेरा सिद्धान्त नहीं है। मन ने स्वयं ही कहने के लिए मुझे विवश किया है।"

सभी लोग कोई अजीब बात सुनने के लिए उत्कण्ठित हो उठे। हरिनारायण धीरे-धीरे निर्मलादेवी की ओर बढ़कर संयत स्वर से बोले —"निर्मलादेवी, मुझे उम्मीद है कि आप इस बार सब बातें साफ़-साफ़ हम लोगों से बतलायेंगी। आप मान लें कि अपने उन मित्रों के साथ बैठी हैं जो सचमुच आपकी भलाई की कामना करते हैं। भाई पर प्रेम रखना आपके लिए स्वाभाविक ही है। उन्हें बचाने की कोशिश करने में जिस भ्रातृ स्नेह का परिचय पाया जाता है उसकी क़ीमत चुकाने के लिए भी हम लोग तैयार हैं; लेकिन इस बार सच बात को छिपाये बिना वास्तविक घटना को साफ़ तौर से बता देना बहुत ज़रूरी हो गया है।"

निर्मलादेवी की ओर से मुड़कर मिस्टर निगम की ओर हरिनारायण ने इस ढङ्ग से देखा कि लोग यह नहीं समझ सके कि वे सचमुच अभिनय कर रहे हैं या नहीं।

"इतने दिनों से मैं 'वर्तमान संसार' में लिखता आ रहा हूँ कि राधाकृष्ण सचमुच मार डाले गये हैं और इस सम्बन्ध में मुझे काफ़ी प्रमाण भी मिले हैं। लेकिन इधर की कुछ घटनाओं ने मेरे उस ख्याल को उलट दिया है। हवालातवाली दुर्घटना के बाद जितनी घटनाएँ हुई हैं उनमें से हर एक में पुलिस को राधाकृष्ण के हाथ की छाप मिली है। इतने दिनों तक इस विषय को ज़बर्दस्ती असम्भव बताकर मैंने उड़ा देना चाहा था; लेकिन आप मुझसे एक ज़रूरी बात बराबर छिपाती आ रही हैं। उसी को अब मैं स्पष्ट कह देना चाहता हूँ। उस दिन शाम के समय आपके उस मौसीवाले मकान में राधाकृष्ण ने आपसे भेंट की थी। उसके बाद ही बहन की हत्यावाला यह मामला...।"

हरिनारायण और नहीं कह पाये। उनकी चमकती हुई आँखें एकटक निर्मलादेवी के मुँह की ओर गड़ गईं। निर्मलादेवी काँपने लगीं।

इस आक्रमण ने उन्हें बिलकुल लाचार कर दिया था। वे यह निश्चय न कर पाईं कि क्या करें।

परन्तु मिस्टर निगम के सामने जैसे मामला बहुत कुछ साफ़ होता आ रहा था। उन्होंने गम्भीरता से कहा—"हरिनारायणजी, अभी जो बात आपने कही है उसकी गम्भीरता, मुझे आशा है, आपसे छिपी न होगी। अब आपको यही करना है जिसमें उपयुक्त प्रमाणों द्वारा इसकी पुष्टि हो जाय।"

हरिनारायण ने अचम्भे में आकर उनकी ओर देखकर कहा—"प्रमाण आप खोजने पर निर्मलादेवी के घर में ही पा जायँगे। मैं इससे ज़्यादा कुछ कहना नहीं चाहता।"

मिस्टर निगम ने कहा—"लेकिन कल सुबह के पहले तहक़ीक़ात करने की कोई सूरत नज़र नहीं आती।" इसके बाद दोनों बैङ्कर और लेखराज वग़ैरह सब लोगों की ओर देखकर वे बोले—"इस बार, आप लोगों की इच्छा न रहने पर भी, आपसे बिदा लेता हूँ।" फिर मौसी की ओर देखकर उन्होंने कहा—"कल सबेरे पुलिस आपके घर की तलाशी लेगी। आपसे मैं कह देना चाहता हूँ कि उससे पहले निर्मलादेवी के कमरे में आप किसी को घुसने न दें। अभी कृपा कर बाहर इन्तज़ार करें।"

सबको हटाकर मिस्टर निगम हरिनारायण के सामने आकर खड़े हो गये। उन्होंने कहा—"हरिनारायण त्रिपाठीजी, अब आप बताइए क्या बात है।"

हरिनारायण ने कहा—"मेरे कहने के मुताबिक़ कमरे की तलाशी लेते समय आप लोगों को एक दराज में, निर्मलादेवी के कपड़े के नीचे, रूमाल में बँधा हुआ एक साबुन मिलेगा। उसे लेकर आप हस्तरेखा-परीक्षक के पास भेज देंगे तो वे बता देंगे कि उस पर राधाकृष्ण के हाथ की बहुत ही साफ़ छाप मौजूद है।"

मिस्टर निगम आश्चर्य के मारे ठिठक से गये।

निर्मलादेवी कुछ कहने को उठी थीं लेकिन फिर कुर्सी पर लुढ़क पड़ीं। उनकी आँखों में जो आँसू भरे हुए थे वे सूख गये और आँखों में एक अवर्णनीय आतङ्क की तस्वीर खिंच गई।

मिस्टर निगम टेबल के सामने बैठ गये और एक काग़ज़ लेकर उस पर कुछ लिखने लगे। इस बीच हरिनारायण ने चुपके से जाकर निर्मलादेवी का बायाँ हाथ ज़ोर से पकड़ लिया और मानों स्पर्श द्वारा ही बहुत कुछ कहने की कोशिश की।

लिखना समाप्त कर चुकने पर मिस्टर निगम ने बिजली की घंटी दबाई। पुलिस के दो सिपाही भीतर आये। मिस्टर निगम ने उनसे तनिक ठहरने का इशारा किया और ख़ुद वे निर्मलादेवी के सामने आ खड़े हुए। उन्होंने संयत स्वर से कहा—"हरिनारायण त्रिपाठी ने जो इलज़ाम लगाया है उसके बारे में आप कुछ कहना चाहती हैं? आप यह क़बूल करती हैं या नहीं कि आपके भाई राधाकृष्ण ने छिपकर आपसे भेट की है?"

क्रोध के आवेग और कष्ट के मारे निर्मलादेवी के गले से स्पष्ट आवाज़ न निकल सकी। एक बात भी वे नहीं कह सकीं। अन्त में उन्होंने अस्पष्ट स्वर में कहा—"आप लोग न जाने क्या ऊँट-पटाँग कह रहे हैं।"

ठीक ठीक जवाब न पाकर मिस्टर निगम ने कहा—"निर्मलादेवी, जब तक आप अपने को निरपराध प्रमाणित कर सकने योग्य काफ़ी सबूत नहीं देंगी तब तक मुझे लाचार होकर आपको हिरासत में रखना पड़ेगा।" अब उन्होंने पुलिस के सिपाहियों से कहा—"तुम लोग इनको गिरफ़्तार कर लो।"

पुलिस के दोनों सिपाहियों ने ज्योंही आकर निर्मलादेवी के हाथ पकड़े, त्योंही उनकी आत्मा एक बार चीख़ उठी। लेकिन उसी समय उन्हें याद आईं, हरिनारायण की आँखें—ममता और स्नेह से भरी हुईं आँखों ने मानों उन्हें रोका। उनका बर्ताव अजीब तरह का होने पर भी तनिक पहले की उनकी हिदायत भी उन्हें याद आ गई ......एक भी बात वे नहीं कह

सकीं। वे निश्चल खड़ी रहीं। उन्हें हरिनारायण पर इतना विश्वास रखना चाहिए। उनके वास्तविक क्लेश का बहुत कुछ परिचय उन्हें इससे पहले मिल चुका है। फिर भी एकाएक उन्हें जैसी चोट पहुँची है उससे उनके सिर में चक्कर आने लगा।

एक घंटे बाद की बात है। हरिनारायण कोर्ट-बिल्डिंग्स के सामने टहल रहे थे। इतने में किसी ने पीछे से उनके कन्धे पर हाथ रक्खा। उन्होंने चौंककर पीछे मुड़कर देखा तो मिस्टर निगम मुसकराते हुए बोले—"आपने बड़ी समझदारी से काम लिया है। मुझे इसकी उम्मीद ही नहीं थी।"

हरिनारायण ने कहा—"आज से एक सप्ताह के भीतर और बहुत सी बातें आपको मालूम हो सकेंगी।"

मिस्टर निगम—अच्छी बात है; निर्मलादेवी को मैंने अकेली एक कमरे में रखने का प्रबन्ध कर दिया है। अकेली रहने पर बहुधा औरतें कुछ कहने की कोशिश करती हैं।

हरिनारायण ने लापरवाही से कहा—"मैं देखता हूँ, उस ओर से कुछ सुनने की आप उम्मीद रखते हैं।"

मिस्टर निगम—अवश्य! इसमें क्या सन्देह है।

अब मिस्टर निगम एक मोटर पर सवार होकर चले गये। हरिनारायण ने उनकी ओर देखकर मन ही मन हँसते हुए कहा—"इन लोगों की बुद्धि की बलिहारी है!"

१८

मिस्टर निगम से छुट्टी पाकर हरिनारायण ने मौसी से भेट की और अपनी इच्छा से उनके साथ उनके घर आये। रास्ते में मौसी ने बहुत खेद प्रकट किया और कहा कि निर्मलादेवीवाली दुर्घटना के बाद मकान में

रहनेवाले दूसरे लोग भी उसे छोड़कर चले गये। अब नौकर लेखराज और रसोईदारिन के सिवा कोई भी आदमी उसमें नहीं रह गया है।

बातचीत करते-करते ज़्यादा रात हो गई। हरिनारायण छुट्टी लेने के लिए उठ खड़े हुए। मौसी उन्हें पहुँचाने सदर दरवाज़े तक आईं। इससे आगे बढ़ने की उन्हें हिम्मत नहीं हुई। कौन जाने अँधेरे में कहीं अपने को छिपाये हुए कोई भयानक डाकू—कोई ख़ून का प्यासा नरघातक शैतान—खड़ा हो। उनका अभिप्राय समझकर हरिनारायण ने हँसकर कहा—"रहने दीजिए, लेखराज को बुलाने की ज़रूरत नहीं। शायद वह सो रहा होगा। जाते वक़्त मैं ही बग़ीचे का दरवाज़ा बन्द करता जाऊँगा।"

मौसी ने आराम की साँस लेकर कहा—"आपको धन्यवाद देती हूँ। ऐसा अजीब दरवाज़ा है कि तनिक ज़ोर से खींचने से ही दरवाज़ा बन्द हो जायगा। और फिर क्या मजाल कि बाहर से कोई खोल ले।"

हरिनारायण ने उनसे छुट्टी ली और वे अँधेरे में ग़ायब हो गये। फाटक को खींचकर बन्द करने की आवाज़ कानों में आते ही मौसी ने भी निश्चिन्त होकर मकान का सदर दरवाज़ा बन्द कर दिया। मेहमान, चले जाने से पहले, अपना कर्तव्य नहीं भूला।

लेकिन हरिनारायण वहाँ से बाहर नहीं गये। अहाते के भीतर ही खड़े होकर उन्होंने ज़ोर से फाटक का दरवाज़ा बन्द कर दिया। इसके बाद कोई आधे घंटे तक वहीं साँस रोके हुए वे खड़े रहे। जब उन्होंने भली भाँति समझ लिया कि मौसी सो गईं, तब घर की ओर बढ़ते हुए कहा—"अब देखा जायगा।"

दीवार लाँघकर, दबे पाँव चलकर, हरिनारायण मकान के नज़दीक आ खड़े हुए। निर्मलादेवीवाले कमरे का एक जँगला आधा खुला हुआ देखकर उनकी ख़ुशी का ठिकाना नहीं रहा।

हरिनारायण का भाग्य अच्छा था; क्योंकि उन्होंने देखा ठीक जँगले के पास तक लोहे का एक नल बराबर चला गया है। कैसी विचित्र सीढ़ी है! अब उन्हें ऊपर जाने में अड़चन नहीं होगी।

उभरी हुई पेशियोंवाली मोटी बाँहों के सहारे उस नल को पकड़कर हरिनारायण ऊपर चढ़ने लगे। जँगले के नज़दीक पहुँचकर वे नीचेवाली चौखट मज़बूती से पकड़ कर लटक पड़े और फिर कसरत का पैतरा दिखाते हुए, बात की बात में, कमरे में पहुँच गये।

वे सोच रहे थे कि कमरे में रोशनी करें या नहीं। कमरे में कौन सी चीज़ कहाँ रक्खी हुई है, यह उन्हें भली भाँति मालूम था, फिर भी वे सारे घर को एक बार अच्छी तरह से जाँच लेना चाहते थे। इसी समय जँगले की झिरी से होकर चन्द्रमा की रोशनी कमरे में पड़ी। उनके अनुसन्धान के लिए वह साधारण प्रकाश पर्याप्त था।

शुरू से अन्त तक एक बार कमरे की छानबीन कर चुकने पर हरिनारायण उठ खड़े हुए। इसके बाद उन्हें ध्यान आया कि मामला धीरे-धीरे पेचीदा हो जायगा। उन्हें विश्वास था कि आज रात में ही आदमियों का एक ऐसा जत्था इस घर में आ पहुँचेगा जिसे निःसन्देह किसी दूसरे आदमी का यहाँ मौजूद रहना पसन्द न होगा। वे लोग अच्छी तरह जानते हैं कि कल इस कमरे की तलाशी लेने पुलिस के आदमी आवेंगे; क्योंकि इसमें हरिनारायण को तनिक भी सन्देह नहीं था कि गवाहों में कोई न कोई डकैतों का साथी है। अच्छा तो वह कौन है? ख़ुद मौसी तो नहीं हैं? कौन जाने नौकर लेखराज ही हो! यह भी हो सकता है कि शान्तप्रकृति शिवचरण वर्मा या बुद्धिमान् रामचरण शर्मा ही वह व्यक्ति हों। पर ये ख़ुद ही डाकुओं के शिकार हो चुके हैं, इससे ऐसा ख़याल करना शायद ठीक नहीं है। कौन जानता है, इससे पहले कोई इस कमरे में आया है या नहीं।

हरिनारायण ने दराज खोलकर कपड़े के भीतर ज्योंही हाथ डाला, उनका चेहरा ख़ुशी से चमक उठा। साबुन तो ठीक उसी जगह है जहाँ पहले रक्खा गया था। इससे जान पड़ता है, कमरे में सबसे पहले मैं ही आया हूँ। अच्छा, तो फिर इस बार नये-नये आनेवालों की पहचान की जा सकती है।

अँधेरे में बैठे हुए हरिनारायण ने अपनी मानसिक दृष्टि से आनेवालों का मुँह देखने की कोशिश की। यह देखकर उन्हें आश्चर्य हुआ कि बार-बार मिस्टर गुप्त की आकृति उनके कल्पना-नेत्रों के सामने स्पष्ट होने लगी।

मिस्टर गुप्त! लेकिन निश्चित रूप से कोई पक्का प्रमाण पाये बिना उनके बारे में ठीक-ठीक कुछ ख़याल करने को हरिनारायण तैयार नहीं थे। उन्हें इसकी भी फ़िक्र थी कि छिपा कहाँ जायगा। बिछौने के नीचे छिप रहना सम्भव नहीं है। इससे तुरन्त पकड़ जाऊँगा। परदे की आड़ में छिपने से भी यही नौबत आ सकती है। निर्मलादेवी का बड़ा ट्रङ्क तो है ही। क्यों न उसी में छिप रहूँ। वही जगह मुझे उपयुक्त जँचती है। ट्रङ्क के भीतर इतना स्थान है कि मेरे जैसा आदमी मज़े में रह सकता है। उसके भीतर छिपे-छिपे आनेवालों की करतूत देखने में तनिक भी कठिनाई न होगी। और अगर निर्मलादेवी की चीज़ें देखने के लिए वे लोग ट्रङ्क को खोलेंगे भी तो उनसे मेरी देखादेखी हो जाने में भी कुछ हर्ज नहीं। उस वक़्त उन लोगों से मेरी देखादेखी होगी मेरे पिस्तौल के साथ।

अब हरिनारायण ने ट्रङ्क को खोलकर देखा तो उसमें कपड़े, पुस्तकें इत्यादि भरी हुई थीं। फिर भी भीतर उनके लिए काफ़ी जगह थी। ट्रङ्क का ढक्कन अजीब तरह का था। उसे खोलकर भीतर से झुका देने पर ढक्कन अपने आप बन्द हो जाता था। यह देखकर उनकी ख़ुशी का ठिकाना न रहा।

रात धीरे-धीरे बीतती जा रही थी। हरिनारायण ने सोचा—"किया क्या जाय? लम्बी रात क्या सिर्फ़ चुपचाप प्रतीक्षा करते-करते ख़तम हो जायगी? मैंने जो सोच रक्खा है, वह क्या व्यर्थ ही होगा?" एकाएक दरवाज़े पर ज़ोर से धक्के देने की आवाज़ सुन पड़ी। कोई बग़ीचे के फाटक पर धक्का दे रहा है।

हरिनारायण चौंक उठे। जँगले की राह बाहर निकले बिना बग़ीचे के रास्ते आने-जानेवालों को देखने का कोई उपाय नहीं है। इसके सिवा

इससे आवाज़ भी हो सकती है और कमरे के लकड़ी के फ़र्श पर जो चलने की आहट होगी...... । हरिनारायण ने उत्कण्ठा से कान खड़े कर लिये।

कुछ ही देर के बाद यह आवाज़ सुन पड़ी—"आप लोग क्या कह रहे हैं? आधी रात को क्या सोचकर किसी भले आदमी के घर बखेड़ा मचाने आये हैं? हम लोगों को क्या शान्तिपूर्वक मरने का भी हुक्म नहीं है?"

हरिनारायण ने मन ही मन कहा—"यह क्या है? यह तो मौसी के गले की आवाज़ मालूम होती है। लेकिन फिर क्या हुआ?"

उन्होंने किसी अपरिचित व्यक्ति को कहते सुना—"क़ानून क़ानून ही है। हम लोग सिर्फ़ उसका हुक्म तामील करनेवाले हैं। पुलिस-मैजिस्ट्रेट ने तहक़ीक़ात करने का हुक्म दिया है; उसका अक्षरशः पालन करने को हम लाचार हैं। कृपा कर इस वक़्त अपने नौकर से कह दीजिए कि उक्त स्थान पर हम लोगों को लिवा ले चले।"

हरिनारायण सोच रहे थे—"मामला क्या है? पुलिस-इन्स्पेक्टर कहाँ से आ टपके? इस जगह पकड़ा जाने पर मैं उन्हें क्या जवाब दूँगा? देखा जायगा, कैसा क्या होता है।"

ऊपर मानों कुछ लोग आ रहे थे। एक आदमी ने कड़ी आवाज़ से कहा—"इधर आइए जनाब, बहनजी का कमरा इस ओर है।"

हरिनारायण बोल उठे—"अब मैंने इन महाशय को पहचाना—ये तो हम लोगों के लेखराज हज़रत हैं! परन्तु इनके कण्ठ-स्वर में इतनी चुस्ती कहाँ से आ गई? आज दोपहर को कचहरी में तो इनके गले से आवाज़ ही नहीं निकल रही थी।"

एकाएक एक बात याद आने से हरिनारायण उछल पड़े। बोले—"ओह! कैसी मोटी समझ है मेरी! सारे शहर में ऐसा कोई भी पुलिस-इन्स्पेक्टर नहीं जो आधी रात को तलाशी लेने के लिए आवे। तो फिर ये लोग कौन हैं? मैं जिस जत्थे की आशा में बैठा हूँ, उसी के आदमी तो नहीं हैं ये?"

जिस जगह छिपे हुए थे, वहीं लेटे-लेटे हरिनारायण उत्कण्ठा के साथ प्रतीक्षा करने लगे। दल के लोगों ने घर में प्रवेश किया। हरिनारायण को प्रतीत हुआ, एक आदमी ने बिजली की रोशनी भी जलाई।

ट्रङ्क के चमड़े के मामूली छेद से हरिनारायण सिर्फ़ किसी तरह साँस भर ले सकते थे। उससे वे यह नहीं देख सके कि घर में क्या हो रहा है।

मौसी भी इस दल के साथ कमरे में आ गई थीं। वे कह रही थीं—"इसी जगह हरिनारायण ने फ़र्श पर बेहोशी की हालत में पड़ी हुई निर्मला-देवी को देखा था। उस कोने में गैस का स्टोव रक्खा हुआ था, जिसका नल उनके मुँह में लगा दिया गया था।"

पुलिस-इन्स्पेक्टर बना हुआ आदमी प्रायः हर वक्त एक अक्षर में अपना जवाब दिया करता था। बीच-बीच में हरिनारायण को एक और आदमी के गले की आवाज़ सुन पड़ती थी। उसे सुनने से उन्हें बार-बार ख़याल आता था कि यह आवाज़ मेरी जानी-पहचानी हुई है। यह मिस्टर गुप्त के गले का स्वर तो नहीं है?

मिस्टर गुप्त को हरिनारायण ने दो-एक बार देखा ज़रूर था और उनकी बोली भी थोड़ी-बहुत सुनी थी; लेकिन उन्हें ठीक-ठीक निश्चय नहीं हो सका कि यह उन्हीं की आवाज़ है। परन्तु यह तो निश्चित है कि यह असल में पुलिसवालों का जत्था नहीं है। अब उन्हें क्या करना चाहिए। पहले उन्होंने सोचा कि पिस्तौल ताने हुए मैं छिपने की जगह से निकलकर बाहर आ जाऊँ। इसके बाद चिल्लाकर और पिस्तौल दाग-कर शोर-गुल मचाऊँ। लेकिन इसी वक्त पुलिस इन्सपेक्टर बने हुए आदमी ने मौसी से कहा—"आप क़लम-दावात दे सकती हैं? सरकारी रिपोर्ट लिखनी है।"

मौसी ने कहा—"ज़रूर, अभी ला देती हूँ।" अब वे क़लम-दावात लाने चली गईं।

ज्योंही वे कमरे से बाहर गईं, हरिनारायण ने सुना अस्पष्ट स्वर से बात-चीत होने लगी। लेखराज अवश्य ही इन बदमाशों का सहायक है;

क्योंकि नक़ली पुलिस-इन्सपेक्टर ने उससे पूछा था—"शाम को कोई नहीं आया ?"

लेखराज—नहीं; हरिनारायणजी माँ के साथ-साथ आये थे और वे ठीक दस बजे यहाँ से चले गये।

इन्स्पेक्टर—सेवती नहीं आई ?—नहीं ? अच्छा तो फिर देर करने की ज़रूरत नहीं ! चटपट काम शुरू कर दिया जाय।

हरिनारायण ने समझा, अब आख़िरी वक़्त आ रहा है। ऊपर के ढक्कन का ही तो फ़र्क़ था। पिस्तौल को मुट्ठी में पकड़कर वे साँस रोककर प्रतीक्षा करने लगे।

असहिष्णुता-सूचक स्वर से इन्स्पेक्टर ने पूछा—"कुछ मिला नहीं ?"

"नहीं सरकार, सब जगह तो छान डाला। जल्दी में...।"

इसी समय बाहर मौसी के पैरों की आहट मिलते ही, ऊपर का ढक्कन फिर बन्द हो गया।

इन्स्पेक्टर—यहाँ जल्दी में काम नहीं हो सकता। वक़्त लगेगा।

मौसी ने कमरे में पहुँचकर कहा—"यह लीजिए क़लम-दावात।"

इन्स्पेक्टर ने कहा—"मुझे इतना वक़्त नहीं है कि एक-एक चीज़ की जाँच बारीकी के साथ करूँ। जहाँ तक मेरा ख़याल है, उस चमड़े के ट्रङ्क के सिवा और कोई सन्देह-जनक वस्तु नहीं है। उसे हम लोग थाने में ले जाना चाहते हैं। ज़रूरी काग़ज़ वग़ैरह उसी में खोजने से मिलेंगे।"

मौसी ने कहा—"मुझे कुछ उज्र नहीं है। आप इतमीनान से इसे थाने में ले जायँ। अब भी इस परेशानी से पिण्ड छूटे !"

ट्रङ्क में चटपट सब चाभियाँ लगा दी गईं। हरिनारायण ने अपने को क़ैद समझ लिया। उन्होंने इसमें अपना कुछ नुक़सान नहीं समझा; लेकिन हिलने-डुलने का कोई रास्ता न रहा। किसी तरह का सन्देह होने पर सब नदी की धारा में डुबाकर मुझे मार डालेंगे।

सब लोग मिलकर ट्रङ्क को उठाने लगे। हरिनारायण ने सोचा—"अब बड़ी मुशकिल हुई। ये सब मुझे न जाने कहाँ लिये जा रहे हैं।

ट्रङ्क के भीतर दोनों ओर वज़न बराबर रखना बड़ा कठिन हो रहा है। जान पड़ता है, सीढ़ियों पर चढ़ते हुए ये ट्रङ्क को ले जा रहे हैं। अब ये लोग फेंक न दें, तभी जान बच सकती है।"

१६

क़ैदी हरिनारायण ट्रङ्क के भीतर लेटे हुए अपनी बेवकूफ़ी को कोस रहे थे। उन्हें क्रोध भी आ रहा था। यह रोंगटे खड़ा कर देनेवाला सफ़र कहाँ खतम होगा?

ढोनेवालों के साथ मौसी भी फाटक तक आई थीं। हरिनारायण ने छुटकारे के लिए सोचा था कि ट्रङ्क के भीतर से चिल्लाकर शोर-गुल करूँगा तो शायद मौसी और रास्ता चलनेवाले दूसरे लोगों के रहते बदमाश मेरा कुछ कर न सकेंगे और मैं आसानी से छूट जाऊँगा। शायद वे चिल्ला भी उठे होते; लेकिन उसी समय आदमियों ने बातचीत करनी शुरू की। वे सावधानी से सुनने लगे।

"अब एक किराये की मोटर या घोड़ागाड़ी लानी होगी।"

"यहाँ मुशकिल से मिल सकेगी। हाँ, लेखराज गाड़ीवालों के अड्डे पर जाकर ले आवे तो काम चल सकता है।"

"यही अच्छा होगा। तो फिर जल्दी से चला जाय।"

हरिनारायण ने सोचा—"यह भी अच्छा ही है। जब ये लोग गाड़ी से जाना चाहते हैं, तब यह तो निश्चित है कि नदी में मुझे डुबोकर मार डालने का इनका इरादा नहीं है। बाद में सुभीते के माफ़िक़ छुटकारे का कोई उपाय सोचकर बाहर निकला जा सकता है।"

नज़दीक ही घोड़े की टाप सुन पड़ी। थोड़ी ही देर में एक गाड़ी आकर उन लोगों के पास खड़ी हो गई। गाड़ीवान ने कड़ी आवाज़ में पूछा—"कितनी दूर जाना होगा हुज़ूर?"

"थाने तक।"

हरिनारायण मन ही मन हँसे। यह बात अवश्य ही मौसी की आँखों में धूल झोंकने के लिए कही गई है। देखा ही जायगा! मैं शर्त रखकर कह सकता हूँ कि रास्ते में यह पता बदल जायगा।

कुछ आदमियों ने मिलकर ट्रङ्क को उठाकर गाड़ी में रक्खा। जत्थे का एक आदमी उस पर चढ़कर बैठ गया। मौसी के यहाँ से बिदा होने पर गाड़ी धीरे-धीरे चलने लगी।

पहियों की घरघराहट के मारे हरिनारायण को उन लोगों की एक भी बात नहीं सुन पड़ी। यह जानने का भी कुछ उपाय नहीं था कि गाड़ी किस रास्ते जा रही है। छेद के रास्ते ट्रंक के भीतर जो बहुत ही हलकी सी रोशनी आ रही थी, उससे जान पड़ता था कि सबेरा हो रहा है।

ज़ोर के एक धक्के के साथ गाड़ी एक जगह रुक गई। लोगों ने ट्रङ्क को उतारकर पटरी पर रक्खा। गाड़ी का किराया चुकाया गया और वह चली गई।

दरवाज़े पर किसी के हाथ से धक्का देने की आवाज़ सुन पड़ी। इसके बाद ही दो आदमियों ने ट्रङ्क को सिर पर उठाते हुए, उसके अस्वाभाविक भारीपन के लिए, अस्पष्ट स्वर में गाली दी।

हरिनारायण ने अन्दाज़ लगाकर समझा कि वे लोग किसी मकान की तीसरी मंज़िल पर गये। एक दरवाज़े का ताला खोला और फिर ट्रंक को एक कमरे के भीतर ठेलकर रक्खा और दरवाज़ा बन्द कर दिया।

सुनसान कमरे में अकेले हरिनारायण और उनमें से दो बदमाश थे। पैरों की आवाज़ सुनने से हरिनारायण को पता चला कि कमरे में ज़्यादा असबाब इत्यादि नहीं है। हलकी सी रोशनी भी अब नहीं दिखाई पड़ती थी। घर में चारों ओर अँधेरा छाया हुआ था।

एकाएक ट्रंक के ढक्कन के ऊपर एक आवाज़ सुनकर हरिनारायण ने पिस्तौल को सँभालकर हाथ में ले लिया। लेकिन उन्हें थोड़ी ही देर में अपनी भूल मालूम हो गई। ढक्कन खोला नहीं जा रहा था; बल्कि उस पर दो आदमी बैठे भर थे।

वे लोग जब बातचीत करने लगे तब हरिनारायण को बेहद ख़ुशी हुई; क्योंकि अब तो उन्हें इनकी बहुत सी गुप्त बातें भी सुनने को मिलेंगी। लेकिन अफ़सोस! ये बातचीत कर तो रहे थे ज़रूर; पर ऐसी भाषा में कर रहे थे कि उसका एक शब्द भी हरिनारायण की समझ में नहीं आ रहा था। कुछ देर बाद नक़ली इन्स्पेक्टर के साथ ये बाहर चले गये। जाते समय इन्होंने दरवाज़े के किवाड़ भर बन्द किये; उसमें ताला नहीं लगाया। इससे हरिनारायण की ख़ुशी का ठिकाना न रहा। अब छुटकारा होने में ज़्यादा देर नहीं।

हरिनारायण के हाथों और पैरों में जैसे किसी ने कील ठोंक दी थी। हाथ पैर सिकोड़कर एक ही ढङ्ग से पड़े रहने से उनके सारे शरीर में लक़वा सा मार गया था।

कुछ देर तक बदमाशों का इन्तज़ार करने पर हरिनारायण की यह चिन्ता जाती रही कि घर में उनके सिवा कोई और भी है। अब उन्होंने अपने छुटकारे का इरादा किया। उनकी जेब में कई फलोंवाला एक चाक़ू था। बड़ी मुशकिल से उन्होंने उसे खींचकर ठीक किया। उसके फल से वे ट्रङ्क का चमड़ा काटने लगे। थोड़ी ही देर में उन्होंने इतना बड़ा छेद कर लिया जिसमें से उनका सिर और उनके शरीर का अगला हिस्सा बाहर निकल सकता था। वे ख़ुशी में अपने को भूल से गये। चटपट उस छेद के रास्ते वे बाहर निकल आये। लेकिन चमड़े के कटे हुए हिस्से से रगड़ खाकर उनका कपड़ा कई जगह फट गया और दोनों हाथों में जहाँ-तहाँ खरोंच लगने से ख़ून बहने लगा।

जकड़े हुए हाथ-पैरों को सीधा करते हुए हरिनारायण ने सोचा कि छुटकारा बहुत ही आसानी से हो गया। आसपास किसी की आहट नहीं मिल रही है। इस वक़्त यहाँ का मालिक मैं ही हूँ।

हरिनारायण ने ज्योंही चमड़े के फटे हुए ट्रङ्क की ओर करुणापूर्ण दृष्टि से एक बार देखा, एकाएक उनके कलेजे की धड़कन बन्द सी होने लगी। सारे शरीर में बिजली सी दौड़ गई। खिड़की की झिलमिली के रास्ते

जो रोशनी की कुछ लकीरें कमरे में आ रही थीं, उनके कारण दीख पड़ा कि ट्रङ्क के पीछे एक आदमी पड़ा हुआ है। एक ही उछाल में हरिनारायण उसके पास आ खड़े हुए। बदमाशों में से कोई सोने का ढोंग किये हुए तो नहीं पड़ा है? वे झुककर बैठ गये और उसका एक हाथ उठाते ही उन्हें मालूम हुआ कि आदमी मर गया है।

मुँह देखना आवश्यक है। आदमी फ़र्श पर मुँह के बल पड़ा हुआ था। हरिनारायण ने ज़ोर लगाकर उसके शरीर को उठाकर उलट देने की कोशिश की तो एकाएक उनकी दृष्टि उसके मुँह पर जा पड़ी। उसके मुँह की ओर देखते ही आश्चर्य और भय के मारे उनका हाथ अपने आप ही छूट गया और लाश धड़ाम से ज़मीन पर गिर पड़ी।

हरिनारायण अपने आप, अस्पष्ट स्वर में, बोल उठे—"ओह! कैसी आफ़त का सामना है। देखता हूँ, ये मिस्टर गुप्त हैं!"

लाश सचमुच मिस्टर गुप्त की थी। मुँह की रङ्गत बिगड़ी हुई थी और जीभ बाहर निकल आई थी। एक रङ्गीन रूमाल से ख़ूब कसकर उनका गला बँधा हुआ था।

हरिनारायण चिन्ता के अथाह समुद्र में ग़ोते खाने लगे—"इस वक्त अगर कोई कमरे में आ जाय तो उसे मैं कौन सा सन्तोषप्रद उत्तर दे सकूँगा? अकेले सुनसान घर में एक लाश के सामने, शहर के एक अज्ञात कोने में, एक अपरिचित मकान में, मैं बैठा हुआ हूँ। असल में मैं कहाँ हूँ? बदमाश लोग क्या मुझे सचमुच न जानते हुए इस घर में छोड़ गये हैं!"

हरिनारायण को अपनी हथेली भीगी हुई जान पड़ी। उनके ज़ख़्मों से अब भी ख़ून बह रहा था। उन्होंने सोचा—"यह तो और भी मज़ेदार बात है। मैं अकेला लाश के नज़दीक बैठा हुआ हूँ; मेरे हाथ में ख़ून के दाग़ हैं। ऐसी हालत में मुजरिम माने जाने से मुझे बचाने की ताक़त किसमें हो सकती है। चाहे जैसे हो, मुझे यहाँ से बाहर निकलना ही पड़ेगा।"

चुपके से हरिनारायण ने कमरे का दरवाज़ा खोला। वे कमरे से बाहर आकर सीढ़ी के पास खड़े हो गये। किसी प्रकार की आवाज़ नहीं सुन पड़ रही थी। मकान भी सुनसान जान पड़ता था।

इसी वक्त हरिनारायण ने ऊपर की मंज़िल से किसी को नीचे उतरते और निचले हिस्से से एक स्त्री को ऊपर की ओर चढ़ते देखा। बीच रास्ते में उनका सामना होते ही स्त्री बोली—"बाबू जीवनरामजी, आपकी चिट्ठियाँ इत्यादि लिये हुए मैं आपको देने अभी ऊपर जा रही थी।"

"कुछ ज़रूरत नहीं थी सेवती! मैं तो नीचे उतरूँगा ही; छोटी-छोटी सीढ़ियों को पार कर उतरना...।"

आदमी उतरता हुआ नीचे को जाने लगा और स्त्री ऊपर चढ़ने लगी। स्त्री को उसी दरवाज़े की ओर आते देख हरिनारायण का कलेजा भय के मारे ज़ोर से धड़कने लगा। इसके बाद, इसी हालत में, वे पकड़ लिये जायँगे। लेकिन, स्त्री सीढ़ी के सामने का हिस्सा तय करके फिर ऊपर जाने लगी।

अब और इन्तज़ार करना अक़्लमन्दी का काम नहीं है। यही सोचकर हरिनारायण सीढ़ी पर चले आये और नीचे उतरने लगे। हज़ार कोशिश करने पर भी वे चलने की आहट बिलकुल नहीं छिपा पाये। वे जल्दी-जल्दी क़दम रखते हुए उतर ही रहे थे कि स्त्री ने ऊपर से ही आवाज़ दी—"कौन है? आप किसे खोज रहे हैं?"

हरिनारायण खड़े हो गये। स्त्री ने क्या उन्हें सीढ़ियों से उतरकर घर से बाहर आते देख लिया है? अन्त में क्या वे योंही अनाड़ी आदमी की तरह पकड़ लिये जायँगे? अब सोचने का वक्त कहाँ है? सीढ़ी से कई क़दम ऊपर जाकर उन्होंने ऊँची आवाज़ से पूछा—"जीवनरामजी घर पर हैं?"

"नहीं साहब! अभी-अभी तो वे यहाँ से गये हैं। क्या आपसे उनकी भेंट नहीं हुई?"

"अच्छा, कुछ हर्ज नहीं। मैं फिर किसी वक्त आऊँगा।"

हरिनारायण मुड़कर खड़े हो गये और धीरे-धीरे सहूलियत से उतरने लगे। वे बात की बात में मकान से सकुशल बाहर निकल आये।

२०

जिस दिन हरिनारायण ने मिस्टर गुप्त की लाश को सुनसान घर में देखा था, उससे दो दिन पहले की बात है। मिस्टर गुप्त अपने लिखने-पढ़ने के कमरे में बैठे हुए कुछ काम कर रहे थे कि नौकर ने उनके पास आकर कहा—"सरकार, एक लड़की आपसे भेंट करना चाहती है।"

"उसका नाम क्या है ? पूछ लिया है ?"

"नहीं हुज़ूर ! मेरे बहुत पूछने पर भी उसने अपना नाम नहीं बतलाया। उसने कहा कि नाम जानकर क्या करोगे ! मैं बहुत ज़रूरी काम से आई हूँ; सिर्फ़ दो मिनट के लिए उनसे मिलना चाहती हूँ।"

मिस्टर गुप्त सोच ही रहे थे कि क्या करना चाहिए, इतने में नौकर ने फिर कहा—"वह कह रही है कि कुमारी कनकलता के यहाँ से किसी ज़रूरी......।"

मिस्टर गुप्त को और आपत्ति करना ठीक नहीं जँचा। बोले—"अच्छा, उसे लिवा लाओ।"

कुछ मिनट बाद एक, मामूली हैसियत की, स्त्री कमरे में आई। मिस्टर गुप्त के कुछ कहने से पहले ही वह दबी हुई आवाज़ से बोली—"इस वक़्त आपके पास आकर मैंने आपके ज़रूरी काम का बहुत हर्ज किया है। लेकिन जिस ज़रूरत ने मुझे यहाँ आने के लिए लाचार किया है, उसे देखते हुए देर करना किसी तरह ठीक नहीं था।"

मिस्टर गुप्त ने शान्त भाव से कहा—"अपनी ज़रूरत आप बेखटके कह सकती हैं।"

स्त्री ने नम्रता से कहा—"मैं आपसे किसी क़िस्म की मदद माँगने नहीं आई। मैं बड़े आदमियों के यहाँ लड़कियों और स्त्रियों के हाथ हीरे और मोती वग़ैरह बेचने का काम करती हूँ।"

मिस्टर गुप्त ने हँसकर कहा—"आपके आने का मतलब मैंने समझ लिया। लेकिन......।"

"बाबू साहब, तनिक सुन तो लीजिए।"

"मेरा ख़याल ग़लत नहीं है। कुमारी कनकलता से मेरा ब्याह होने की बात ज़ाहिर होने के बाद से ही मेरे पास आनेवाले सुनारों, जौहरियों इत्यादि का ताँता बँध गया है। मेरा तो इन सबके मारे नाकों दम हो गया है। इसी से कहता हूँ कि अगर बेचने की आशा से मेरे पास आई हो तो, खेद के साथ बतलाना पड़ता है कि, तुम्हें लौट जाना पड़ेगा। इस वक़्त मुझे कुछ ख़रीदने की ज़रूरत नहीं है।"

मिस्टर गुप्त की बातें बिलकुल साफ़ थीं; लेकिन स्त्री ने वहाँ से हटने का नाम तक नहीं लिया। बोली—"बाबूजी, आपने चटपट सोच लिया कि आपको देने लायक़ शायद कोई चीज़ मेरे पास नहीं है। मैं आपको ऐसे हीरे और मोती दिखला सकती हूँ कि......।"

"मैं यह माने लेता हूँ। अपने दही को कौन खट्टा कहता है? लेकिन मुझे अभी सचमुच......।"

स्त्री ने उन्हें रोककर कहा—"कृपा कर मेरी बात सुन लीजिए। मैं जवाहरात का रोज़गार करती हूँ सही; लेकिन वे चीज़ें कुछ आपके हाथ बेचने नहीं आई हूँ। मेरे आने का उद्देश्य कुछ दूसरा है।"

मिस्टर गुप्त ने कोई बात नहीं कही। वे एकटक उस स्त्री की ओर देखने लगे।

स्त्री कहने लगी—"शायद आप जानते ही होंगे, रोज़गार के सिलसिले में बहुतेरे जौहरियों के पास मुझे जाना पड़ता है। ऐसे ही एक आदमी के यहाँ मैं गई थी, जहाँ मुझे कुछ हीरे और मोती मिले हैं। मेरा ख़याल है कि उन्हें देखने पर आप बिना ख़रीदे नहीं रह सकेंगे।"

"मुझे क्षमा करना भई, इस वक़्त मैं कुछ भी ख़रीदना नहीं चाहता।"

स्त्री के चेहरे पर अजीब तरह की मुसकराहट फूट पड़ी। "संसार में ऐसी बहुत सी चीज़ें हैं जिन्हें किसी तरह भी लौटाया नहीं जा सकता।"

कहती हुई उसने अपने कपड़ों के भीतर से चमड़े का एक छोटा सा बैग निकाला। उसने उसके भीतर से दो मोती निकालकर मिस्टर गुप्त के सामने रख दिये। फिर वह बोली—"कृपा कर इन्हें देखिए तो सही! मैं समझती हूँ, ये आपको ज़रूर पसन्द आवेंगे।"

मिस्टर गुप्त बिना कुछ कहे-सुने मोतियों को देखने लगे। वे मोतियों के विशेषज्ञ भी थे। भली भाँति देखकर बोले—"बेशक तुम्हारे ये दोनों मोती बहुत ही बढ़िया हैं। लेकिन किसी जानकार को दिखाये बिना इन्हें ख़रीदने की हिम्मत मुझमें नहीं है। और फिर इस समय मुझे ख़रीदना भी तो नहीं है।"

"कोई भी जानकार आदमी इनको ख़रीदे बिना वापस नहीं करने का। मैं तो समझती हूँ, यदि मैंने इन्हें कुमारी कनकलता को दिखाया होता तो वे मारे ख़ुशी के नाच उठतीं।" उसने ज़ोर से कहा।

मिस्टर गुप्त को यह सोचकर आश्चर्य हुआ कि यह अजीब तरह की स्त्री कहना क्या चाहती है। मोतियों के लिए यह इतनी ज़िद क्यों कर रही है? एकाएक बिजली की धारा की तरह एक बात उनके स्मृति-पटल पर चमक उठी।

"तुमको ये दोनों मोती कहाँ मिले? क्या मुझे यह बता सकती हो?" मिस्टर गुप्त ने स्त्री से पूछा।

मिस्टर गुप्त के यह सवाल करने पर स्त्री उठ खड़ी हुई। उसने क्षोभ से भरी हुई आवाज़ में कहा—"आपके क़ीमती वक़्त को व्यर्थ बरबाद करने के लिए मुझे सख़्त अफ़सोस है। अब आपके सवाल का जवाब देने में अवश्य ही ज़्यादा देर हो जायगी और बहुत सी बातें मुझे कहनी पड़ेंगी। मैंने आपसे जो कहा है कि अगर ये मोती कुमारी कनकलता के हाथ पड़ते तो...।"

"तो तुम उन्हें इन मोतियों को दिखाओ न।"

"नहीं, मैं चाहती हूँ कि ये आपके ही पास रहें और आप ही उन्हें दिखावें। मैं फिर आपसे मिलूँगी और आप लोगों की मोतियों के

विषय में जो राय होगी, उसे जानने की चेष्टा करूँगी। आपको इनका ज़्यादा दाम भी नहीं देना पड़ेगा।"

मिस्टर गुप्त कुछ आनाकानी कर रहे थे और दोनों मोतियों की ओर बार-बार देख रहे थे। रह-रहकर वे सोच उठते थे—"मैं शर्त बदकर कह सकता हूँ कि निमन्त्रणवाले दिन मेरे घर पर कुमारी कनकलता के जो गहने चोरी गये थे, उन्हीं में के ये दोनों मोती हैं।"

स्त्री ने भी शायद ताड़ लिया था कि वे क्या सोच रहे हैं। इससे वह खड़ी-खड़ी मुसकरा रही थी।

मिस्टर गुप्त सोच रहे थे—"यह स्त्री पुलिस की जासूस तो नहीं है जो चोरी गये हुए हीरे-जवाहरात की खोज में घूम रही है।" उन्होंने उसका पता पूछना चाहा; लेकिन फिर न जाने क्यों अपनी इस इच्छा को रोक लिया। कुछ देर तक सोचकर वे बोले—"अच्छा, कल मैं कुमारी कनकलता से मिलने जाऊँगा। अगर तुमको कठिनाई न हो तो ये मोती मेरे पास रहने दो। यदि वे इन्हें पसन्द करेंगी तो मैं ख़रीद लूँगा।"

× × × ×

"क्यों कनकलता, तो फिर इन दोनों मोतियों को लेने में तुम्हें कुछ उज्र नहीं है न? मुझे तो डर था कि एक अपरिचित व्यक्ति से दोनों चीज़ें लेने में शायद तुम्हें प्रसन्नता न हो।"

कुमारी कनकलता ने मुसकराकर कहा—"यह आपकी नम्रता है। गुलाब कैसे ही बग़ीचे में क्यों न हो, इससे उसका मूल्य कम थोड़े ही हो सकता है। इस मामले में ज़्यादा माथापच्ची करना बेकार है।"

मिस्टर गुप्त—तो इन दोनों को देखो। ये तुम्हें पसन्द हैं या नहीं?

उनके हाथ से दोनों मोती लेकर कुमारी कनकलता बड़ी खिड़की के पास जा खड़ी हुईं। वे इन्हें भली भाँति देखना चाहती थीं। देख चुकने पर वे प्रसन्नता सूचित करती हुई ज़ोर से चिल्ला उठीं—"कैसा आश्चर्य है! ये मोती विलक्षण हैं।"

मिस्टर गुप्त ने नज़दीक आकर पूछा--"तुम्हें पसन्द हैं! तो फिर ये दोनों मोती... ।"

कुमारी कनकलता ने सिर हिलाते हुए कहा--"सचमुच क़ीमती हैं। मेरे चोरी गये हुए मोतियों के सिवा इनकी जोड़ का मोती मैंने तो अभी तक कहीं नहीं देखा। उनके खो जाने से मुझे जो दुःख पहुँचा है वह वर्णनातीत है। बात यह है कि इन मोतियों को मुझे मेरी माँ ने उस समय दिया था, जब वे अन्तिम साँस ले रही थीं। उन मोतियों की जोड़ के मोती पा सकने की आशा मैंने बिलकुल ही छोड़ दी थी।"

"तो तुम्हारी राय है कि ये दो मोती भी उसी क़िस्म के हैं?"

कनकलता उस समय भी मोतियों को उलट-पुलटकर देख रही थीं। एकाएक बोल उठीं—"कैसी विचित्र बात है! ये भी बिलकुल वैसे ही हैं। उनकी रोशनी के भीतर जो एक अजीब तरह की वस्तु थी, वैसी ही इनमें भी मैं देख रही हूँ। आपकी बात बिलकुल ठीक है। मेरे चोरी गये हुए मोती और ये दोनों मोती एक ही हैं।"

मिस्टर गुप्त ने मुसकराते हुए कहा—"मेरा भी ठीक यही ख़याल है। और इसका कारण भी है।" अब उन्होंने इन मोतियों के मिलने का सारा क़िस्सा कह सुनाया। उन्होंने यह भी कहा कि जल्द ही बहुत सी चीज़ें मैं प्राप्त कर सकूँगा। अन्त में वे बोले--"मैं समझता हूँ कि वह स्त्री पुलिस की जासूस है। उसने चोरी का माल ख़रीदने और बेचने-वाले आदमी के पास मुझे ले चलने के लिए कहा है, जहाँ से तुम्हारे चोरी गये हुए गहनों की पुनः प्राप्ति हो सकती है।"

भय के कारण कुमारी कनकलता का चेहरा पीला पड़ गया और वे बोलीं —"अरे राम! आप अकेले ही उन लोगों के बीच जाना चाहते हैं क्या?"

"क्यों? इसमें हर्ज ही क्या है?"

"अगर आपके कहने के अनुसार सचमुच वे चोर और डाकू हैं तो क्या उन्हें यह समझना बाक़ी होगा कि आपके पास कितने ज़्यादा रुपये हैं।"

एकाएक कुमारी कनकलता का चेहरा पीला पड़ गया। गले की आवाज़ को ज़बर्दस्ती ऊँची करती हुई वे बोलीं—"नहीं-नहीं; यह ठीक नहीं है। आपका यह काम बहुत जोखों का होगा।"

मिस्टर गुप्त ने लापरवाही से कहा—"मैं मानता हूँ कि तुम्हारा कहना ठीक हो सकता है। लेकिन वे लोग मुझे अपने जाल में फँसाना चाहते होंगे तो इसके और भी न जाने कितने रास्ते हो सकते हैं। अच्छा, अगर ऐसा ही है तो क्या हमारे पास आकर चोरी गया हुआ माल दिखाने का साहस उन्हें हो सकता था? मेरा तो ख़याल है कि यह स्त्री चोरों या डाकुओं के दल की नहीं है। यह है पुलिस की जासूस। उसके साथ जाने में मुझे तो कोई डर की बात नहीं दीख पड़ती। तुम कुछ फ़िक्र मत करो।"

लेकिन कुमारी कनकलता इतनी आसानी से निश्चिन्त नहीं हो सकीं। वे बोलीं—"न जाने क्यों मेरा मन आज प्रसन्न नहीं है। और अगर कुछ भी ख़तरा नहीं है तो हम दोनों ही क्यों न उसके साथ चलें। इससे जवाहरात को पहचानने में भी सुभीता होगा।"

मिस्टर गुप्त चलने के लिए उठ खड़े हुए और बोले—"ख़तरा हो या न हो, इसमें तुम्हें घसीटना मैं अक़्लमन्दी का काम नहीं समझता। तुमसे अनुरोध करता हूँ कि अपनी ज़िद छोड़ दो। झूठमूठ डरने की कुछ ज़रूरत नहीं है। मैं बच्चा थोड़े ही हूँ।"

वहाँ से निकलकर मिस्टर गुप्त सीधे रायल होटल में जा पहुँचे। यहीं पर हीरे-मोती का रोज़गार करनेवाली स्त्री से मिलने की बात थी।

स्त्री पहले से ही वहाँ मौजूद थी। उन्हें देखकर उसने हँसते हुए कहा—"मुझे आशा है, कुमारी कनकलता ने मोतियों को पसन्द किया होगा।"

मिस्टर गुप्त—हाँ, उन्हें पसन्द हैं। अब हमें चटपट अपने उस जौहरी के पास ले चलो।

स्त्री—चलिए; मैं तो तैयार हूँ।

एक किराये की मोटर गाड़ी पर मिस्टर गुप्त और वह स्त्री, दोनों व्यक्ति सवार हो गये। थोड़ी ही देर में स्त्री के बताये हुए पते पर एक घर के सामने गाड़ी पहुँचकर रुक गई।

घर की छोटी-छोटी सीढ़ियों के सहारे दोनों ऊपर चढ़ने लगे। सामने के बन्द दरवाज़े पर धक्का देकर स्त्री ने कहा—"पैरों की आहट सुन पड़ती है। शायद कोई आ रहा है।"

दरवाज़ा आधा खुल गया और भीतर से किसी ने पूछा—"कौन है ?"

"मैं हूँ।"—स्त्री की आवाज़ सुनकर पूरा दरवाज़ा खोल दिया गया। भीतर से अनुरोध किया गया—"कृपा कर अन्दर आइए।"

दरवाज़े के भीतर ज्यों ही मिस्टर गुप्त ने पैर रक्खे, जौहरी स्त्री ने पीछे से एक रङ्गीन रूमाल उनके गले में डालकर मज़बूती से गले को कस दिया और उनकी कमर पर घुटना रखकर ज़ोर से धक्का दिया। मिस्टर गुप्त में आक्रमण रोकने की शक्ति न रह गई। वे कराहते हुए उस स्त्री की बग़ल में ही गिर पड़े। वे छुटकारे की तदबीर सोच रहे थे कि इसी वक्त अँधेरे में से एक आदमी बिजली की तरह लपककर आया जिसका सारा शरीर काले रङ्ग की पोशाक से ढका हुआ था। उसके हाथ में एक तेज़ छुरा था। मिस्टर गुप्त को किसी प्रकार की चेष्टा करने का मौक़ा दिये बिना ही उसने छुरे को उनके हृदय में मूठ तक घुसेड़ दिया।

स्त्री ने कहा—"आप न आ जाते तो यह भाग ही चुका था।"

"उससे क्या होता ! तुम चटपट साड़ी वग़ैरह बदल डालो नीलिमा। किसी को सन्देह तो नहीं हुआ ? अच्छा, कल तुम्हारा रुपया मिल जायगा। रसीद घर में फेंक दी है न, जिससे पुलिस को धोखा हो ?"

"जी हाँ।"

२१

गहरा आश्चर्य प्रकट करते हुए हरिनारायण ने पूछा—"आपने यह क्योंकर जाना कि कल आपके घर जो पुलिस-इन्स्पेक्टर गया था वह नक़ली था।"

मौसी ने कहा—"उसके थोड़ी ही देर बाद हलके के इन्स्पेक्टर श्री कुञ्जविहारी मिश्र मेरे घर आये थे। उन्होंने सारा मामला सुना था।"

"इसके बाद उन्होंने क्या किया?"

"मुझे और लेखराज को थाने चलने को कहा। वहाँ जाने पर कैसी भीषण जाँच-पड़ताल का मुक़ाबला करना पड़ा! मानों उनका सारा सन्देह हमीं लोगों पर था।"

हरिनारायण ने गम्भीर होकर कहा—"लेकिन घर के किसी आदमी की साजिश इसमें है ज़रूर। क्योंकि नक़ली पुलिस के आदमी कुछ दरवाज़ा तोड़कर तो घर में घुसे नहीं।"

"यहीं तो मुझे भी गड़बड़ मालूम होती है। उन लोगों ने अपने को छिपाना नहीं चाहा। ढिंढोरा पीटते हुए, दरवाज़े पर धक्का देकर, हम लोगों को जगाने के बाद घर में दाख़िल हुए। फिर हमारे नौकर के ज़रिये ट्रङ्क उठवा ले जाकर गाड़ी पर रक्खा।"

"अच्छा, लेखराज उन लोगों के साथ गया था?"

"हाँ, वह तो गया ही था और उसी ने हमें भी मुसीबत में डाल दिया। हम लोगों को थाने में बैठे रहने का हुक्म देकर कुञ्जविहारी मिश्रजी ने मेरे घर की तलाशी लेने को कहा। मुझे नहीं मालूम, इसके बाद क्या हुआ। मालूम नहीं, उन्हें क्या मिला। लेखराज को मेरे पास से दूसरी जगह ले गये। इसके बाद मुझे पता चला कि उसकी कोठरी से उन लोगों को हर तरह के तालों की चाभियों का एक गुच्छा मिला है। लेखराज पक्का चोर है। कैसी अजीब बात है।"

हरिनारायण बोले—"अच्छा, आपकी अपनी राय क्या इससे उलटी है?"

"अवश्य। वह अर्से से मेरे यहाँ है। उस पर मेरा पक्का विश्वास है। उसे छुड़ाने का क्या उपाय है हरिनारायण बाबू?"

बनावटी गम्भीरता से हरिनारायण ने कहा—"मैं मामूली आदमी हूँ। समाचार-पत्र में काम कर अपनी गुज़र करता हूँ। मैं क्या कर सकता हूँ।

अच्छा होता अगर आप मिस्टर शर्मा और वर्मा जैसे बड़े आदमियों से इस काम में मदद लेतीं। शायद वे लोग कोई उपाय कर सकें।"

यह सलाह मौसी को बुरी नहीं जँची। वे फोन करने को उठ गईं। अब हरिनारायण ने अपना कर्त्तव्य निर्धारित कर लिया। बहुत सम्भव है, पुलिस लेखराज को निरपराध कहकर छोड़ दे। तब! तब तो काम बहुत कुछ पिछड़ जायगा।"

इसी वक्त मौसी ने आकर कहा—"मिस्टर शर्मा तो थे नहीं। मैंने वर्माजी को सूचना दे दी है। उन्होंने कहा है कि आज कुछ नहीं हो सकेगा। और इसके सिवा मैं कर ही क्या सकता हूँ?"

हरिनारायण ने भारी आवाज़ से कहा—"बात उन्होंने झूठ नहीं कही है। अच्छा, कल ठीक ग्यारह बजे मैं आपकी उस जगह जाऊँगा। यदि कुछ नई बात होगी तो मालूम होगी।"

× × × ×

सन्ध्या समय मज़दूरों की श्रेणी का एक आदमी लड़खड़ाते हुए पैर रखता चला जा रहा था। उसका नशा शायद अपनी हद तक पहुँच गया था। इसी से उसके रुँधे हुए गले से सप्तम स्वर में आवाज़ निकल रही थी—

"धोखा देकर प्राण-पखेरू उड़ गये—और—फिर नहीं लौटे।"

उसकी उलटी दिशा से बढ़िया कपड़े पहने एक भला आदमी आ रहा था। एकाएक उस आदमी ने भलेमानस को ज़ोर से पकड़कर कहा—"क्यों भाई, उड़े हुए पखेरू! ज़ञ्जीर तुड़ाकर कहाँ चले गये थे? मेरा प्राण-पिंजड़ा सूना पड़ा रो रहा है।"

इस अचानक आक्रमण से पहले तो वह भला आदमी हक्का-बक्का हो गया, लेकिन बाद को उसने मतवाले को ज़ोर से धक्का देकर अपने को छुड़ा लिया और क्रुद्ध होकर कहा—"क्योंजी, अपना पागलपन दिखाने की दूसरी जगह तुम्हें नहीं है। सामने ही थाना है। देखने पर पिंजड़े की चिड़िया को फिर पिंजड़े में बन्द करने में देर न करेंगे।"

लेकिन आदमी तनिक भी नहीं हिला। वह फिर उस भले आदमी के कुर्त्ते को ज़ोर से पकड़कर अपनी धुन में ही चिल्लाने लगा—"मेरे प्राणों का पखेरू उड़ा जा रहा है। ओ जमादार साहब, पकड़िए—पकड़िए इसको, भागने न पावे।"

रास्ते में लोग तमाशा देखने के लिए इकट्ठा हो गये थे। हँसते-हँसते उनके पेट में बल पड़ गये थे।

इसी समय पास के थाने से पुलिस का एक कर्मचारी बाहर निकला। उसने मतवाले के कन्धे पर हाथ रखकर कहा—"क्या हो रहा है हज़रत! अगर ससुराल में रहने की इच्छा न हो तो चटपट यहाँ से खिसक जाइए।"

लेकिन मतवाले ने हटने का कोई लक्षण नहीं प्रकट किया। उसने कहा—"कौन? जमादार साहब? मेरे प्राणों का पखेरू भाग रहा है। पकड़कर ला दीजिए साहब! नहीं तो मैं बचूँगा नहीं साहब।"

"अजी, देखता हूँ तुम्हारा नशा बढ़ता ही जा रहा है। अच्छा, हवालात में जाते ही वह जाता रहेगा।" कहकर आदमी को खींचता हुआ थाने की ओर ले चला।

मतवाला आसानी से जाना नहीं चाहता था। एक ही बात उसकी ज़बान पर नाच रही थी—"प्राणों का पखेरू भाग रहा है। जमादार साहब, पकड़िए।"

थाने में आकर पुलिस-कर्मचारी ने एक सिपाही से कहा—"कमरा ख़ाली है न? इसको फाँस रखना होगा। घण्टे भर में मुलज़िमों की गाड़ी आ जायगी; मैं लिख रखता हूँ।"

सिपाही ने मतवाले को धक्का देकर हवालात की छोटी कोठरी के भीतर बन्द कर दिया।

× × × ×

हर एक थाने से हवालात के क़ैदियों को इकट्ठा करती हुई पुलिस-महकमे की मोटरगाड़ी पूर्वोक्त थाने के सामने आ खड़ी हुई। एक कर्मचारी ने उसमें से निकलकर पूछा—"आज कोई नहीं है?"

"दो आदमी हैं" कहकर थाने का इञ्चार्ज कर्मचारी काग़ज़ वग़ैरह उसे समझाकर मुलज़िमों को लाने के लिए चला गया। पहला मुलज़िम तो शान्तिपूर्वक आकर गाड़ी के एक छोटे से खाने में घुस गया। उसके बाद मतवाले की बारी आई। चिल्लाकर, शोर-ग़ुल मचाकर, हाथ-पैर पटक कर उसने बड़ा फ़साद खड़ा कर दिया। गाड़ी के सामने आकर वह पछाड़ खाकर गिर पड़ता था। लेकिन दो सिपाहियों ने उसे ज़बर्दस्ती एक छोटे से खाने में ठेलकर दरवाज़ा बन्द कर दिया।

गाड़ी जब चलने लगी तब थाने के कर्मचारी ने चिल्लाकर कहा—"ऐसा मतवाला मुलज़िम मुश्किल से देखा होगा हम लोगों ने साहब। सारी रात तक इसका नशा कम नहीं हुआ।"

लेकिन बन्द कमरे के भीतर मतवाले के चेहरे में आश्चर्यजनक परिवर्तन हो गया था। कुछ देर तक स्तब्ध-सा रहकर वह ठहाका मारकर हँस उठा। उसने मन में कहा—"हरिनारायण त्रिपाठी यदि मतवाला है तो फिर...देखता हूँ, मेरा बनावटी वेष अच्छा ही रहा।"

गाड़ी हिलती हुई चल रही थी। मुँह बाहर की ओर निकालकर देखने की बेकार कोशिश करते हुए हरिनारायण ने कहा कि कहाँ से होती हुई गाड़ी चल रही है इसका पता नहीं चल रहा है। अब यह उस थाने को जायगी जिसके हलके में मौसी का मकान है। मेरे पीछेवाला ख़ाना ख़ाली मालूम पड़ता है। शायद लेखराज को उसी में रक्खेंगे। तो फिर टिन की चद्दर को हाथ से ठोंककर उसके साथ बातचीत करना बिलकुल असम्भव नहीं है। फिर, सुना है, इस गाड़ी से कोई भाग नहीं सकता।

बग़ल से घरघराती हुई एक मोटर-लारी चली गई। हरिनारायण को मालूम हुआ, उनकी गाड़ी एक पुल पर से होकर जा रही है। इसी समय एक तेज़ झटका लगा और गाड़ी को दाहिनी ओर के मोड़ की ओर जाते देख हरिनारायण को आश्चर्य हुआ। यह क्या? ये लोग कहाँ जा रहे हैं? रास्ता सुनसान मालूम होता है? सवारियों का अधिक

आवागमन नहीं है। शायद दूसरे रास्ते से चल रहे हों। घबराने की कुछ ज़रूरत नहीं। लेखराज से भेट होने में और कितनी देर होगी?

हरिनारायण एकाएक ज़ोर से पीछे की दीवाल से टकरा गये, मानो मोटर-गाड़ी को किसी की टक्कर लगी हो। सामने ही एक मोटर की घरघराहट और उसी से मिलकर एक कर्कश स्वर सुन पड़ा—"बायें से नहीं चला सकते? बिलकुल नवाब बन गये हो!"

हरिनारायण को मालूम हुआ, मोटर के दरवाज़े को हाथ से पीटकर कोई पूछ रहा है—'चोट तो नहीं आई?"

"नहीं। लेकिन... ।"

पूछनेवाला उस समय शायद चला गया था। हरिनारायण ने सोचा, मोटर के ड्राइवर ने ही—जो अपनी ज़िम्मेदारी पर लोगों को ले जा रहा था—यह सवाल किया था।

गाड़ी की हालत देखने से पता चलता था कि उसका कोई पहिया ख़राब हो गया है। उसे निकालकर फिर से दूसरा पहिया लगाकर मोटर को चलाने में आध घण्टा तो लगेगा ही। इतनी देर में लेखराज शायद...

गहरी चुप्पी में कई मिनट बीत गये। एक ही जगह बन्द खाने में बैठे-बैठे हरिनारायण का दम घुटने लगा। ये सब क्या मुझे इसी जगह फेक देना चाहते हैं? एकाएक गाड़ी का निचला हिस्सा फिर से ऊँचा होता देखकर हरिनारायण को प्रसन्नता हुई। अब कहीं पहिया ठीक हुआ है।

गाड़ी चलने लगी; लेकिन दूसरे ही क्षण हरिनारायण के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। अवश्य ही बाहर कोई घटना हो रही है; क्योंकि उन्होंने देखा कि गाड़ी एक पूरा चक्कर काटकर जिस रास्ते से आई थी उसी रास्ते लौट पड़ी। कुछ देर तक वह पूरी रफ़्तार से चलती रही। बाद को उसकी चाल कम होने लगी और तनिक देर में, एक तेज़ झटके के साथ, वह सड़क के बग़ल में आकर खड़ी हो गई।

गाड़ी खड़ी होते ही हरिनारायण ने मन ही मन कहा—"हम लोग ठीक जगह आ गये हैं; लेकिन तनिक देर हो गई है।"

एक आदमी ने क़ैदी-गाड़ी का दरवाज़ा खोलते हुए कर्कश स्वर में कहा—"सब लोग जल्दी बाहर निकलो।"

लेकिन हरिनारायण बाहर पैर रखते ही दङ्ग रह गये। बात क्या है! हम लोग तो हेड-आफ़िस में पहुँच गये हैं। अब सोचने का मौक़ा कहाँ था! चारों ओर क़तार बाँधे पुलिस के पहरेदार खड़े हैं। एक आदमी ने हुकूमत जताते हुए रूखी आवाज़ से कहा—"सब लोग, एक-एक कर, जल्दी-जल्दी चले आओ।"

पहले मुलज़िम के साथ हरिनारायण ने एक छोटे से कमरे में, जहाँ दफ़्तर था, प्रवेश किया। लम्बे-चौड़े टेबल के सामने एक कर्मचारी, गम्भीर मुद्रा में, बैठा हुआ था। उसने दोनों मुलज़िमों की ओर कृपा-दृष्टि डालते हुए पूछा—"आज सिर्फ़ यही दो आदमी?"

"जी हाँ, हुज़ूर।"

"पैंतालीस नम्बरवाले कमरे में ले जाओ।"

दो पहरेदारों ने उन लोगों को ले जाकर एक अँधेरी कोठरी में बन्द कर दिया।

सुनसान कमरा था। हरिनारायण बेहद क्षुब्ध हो गये। लेखराज से भेट करने की उनकी सारी कोशिश पर पानी फिर गया। अब सोने के सिवा करना ही क्या है! हरिनारायण ने कम्बल खींच लिया। इसी समय दूसरा आदमी अपने मन में ही गरजकर बोला—"मैंने क्या क़ुसूर किया है? मैं निरपराध आदमी हूँ। अब क्या करूँ मैं?"

"अब करना क्या है? इस वक़्त कम्बल को सिर से पैर तक तान-कर नाक बजाना शुरू कर दो।"—कहकर हरिनारायण पूरे कम्बल को ओढ़कर ख़ुद भी सोने लगे।

× × × ×

मिस्टर खन्ना अनजान की तरह कुछ मिनट तक हरिनारायण की ओर ताकते रहे। बाद को बोले—"हरिनारायणजी! आप हैं। कल मुलज़िमों में आपका चालान हुआ है! मेरा तो दिमाग़ ही जैसे काम नहीं करता।"

हरिनारायण को सबेरे पबलिक प्रासिक्यूटर के दफ़्तर में हाज़िरी देनी पड़ी थी। वहाँ पर अपना परिचय दे चुकने पर उन्होंने प्रमाण के लिए मिस्टर खन्ना को बुलाने की प्रार्थना की। मिस्टर खन्ना ने आकर उन्हें छुड़ा लिया और अपने दफ़्तर में ले जाकर उनसे पूछा—'हरिनारायणजी, आपने क्या किया था जो पुलिस के हाथों गिरफ़्तार होने की नौबत आई ?"

हरिनारायण ने उन्हें सब बातें साफ़ साफ़ बतला दीं। मिस्टर खन्ना ने ज़ोर से सिर हिलाकर कहा—'महाशय, आपकी बातों पर विश्वास करने को जी नहीं चाहता। फिर आपकी जासूसगिरी और अक़्लमन्दी की तारीफ़ करता हूँ।"

हरिनारायण ने कहा—"आपके इस कथन से मैं सहमत नहीं; क्योंकि इतनी कोशिश करने पर भी मैं किसी तरह लेखराज से भेंट नहीं कर सका। आपने उससे कुछ पूछ-ताछ की है ?"

मिस्टर खन्ना ने सिर हिलाकर क्षुब्ध होकर कहा—"आह! भाई मेरे, आप कल रात की विचित्र घटना का कुछ भी अन्दाज़ नहीं कर पायेंगे, यद्यपि उसमें अप्रत्यक्ष रूप से आपका बहुत कुछ हाथ था।"

"कल रात की विचित्र घटना! मेरा हाथ? आप क्या कहते हैं ?"

"कहता क्या हूँ हरिनारायणजी! पुलिस दङ्ग रह गई है। आप भी नहीं बचे। आपने अभी कहा है न कि कल आपकी गाड़ी से एक दुर्घटना हो गई है। सचमुच क्या हुआ था ? जानते हैं ? एक मोटर से आपकी गाड़ी टकरा गई। ड्राइवर या तो बिलकुल मूर्ख है या पक्का चालाक है।"

हरिनारायण ने सामने की ओर झुककर आग्रह से पूछा—"क्या—क्या—मामला क्या है ?"

"मामला यों है—क़ैदी-गाड़ी को कल पूरी हानि पहुँची है। ड्राइवर अकेले ठीक न कर पाया तो उसने हेड क्वार्टर को फ़ोन से ख़बर दी। उससे कहा गया कि गाड़ी ठीक होते ही फ़ौरन उसी जगह लौट जाय।

उसे आगे जाने की ज़रूरत नहीं। फोन करते-कराते कुछ देर हो गई। इसके बाद हेड-क्वार्टर से जब उस थाने को फोन किया गया जिसमें मौसी का मुहल्ला है, कि कल सबेरे से पहले क़ैदी-गाड़ी नहीं जा सकेगी, तब वहाँ के दारोग़ा की बात सुनते ही फोन करनेवालों की आँखों की पलकों का गिरना बन्द हो गया। दारोग़ा ने फोन के जवाब में बतलाया कि तनिक पहले ही एक क़ैदी-गाड़ी आई थी, जो सब मुलज़िमों को बिठाकर ले गई। आपका शिकार लेखराज भी उनमें था।"

हरिनारायण ने हताश होकर कहा—"हे भगवन्! मैंने उस ओर बिलकुल ध्यान नहीं दिया था।"

"सच्चा मामला यों मालूम होता है कि आपकी गाड़ी से जो दूसरी गाड़ी की भिड़न्त हो गई है, वह कोई दुर्घटना नहीं है वरन् जान-बूझकर ऐसा किया गया है। यह सिर्फ़ इस उद्देश्य से कि जिसमें गाड़ी अगले थाने पर न जाय। वह दूसरी क़ैदी-गाड़ी निस्सन्देह हमारे ही यहाँ से चुराई गई है। इसके बाद नक़ली पोशाक पहनकर, नियमानुसार फ़ार्म दाख़िल कर, दस्तख़त बनाकर और मुलज़िमों को थाने से बाहर निकालकर बदमाश रफूचक्कर हो गये!"

"और उस गाड़ी का क्या हुआ?"

"वह क़िले के मैदान के किनारे पड़ी मिली है। कहना न होगा, वह ख़ाली ही थी।"

हरिनारायण की गम्भीरता धीरे-धीरे बढ़ती जा रही थी। वे बोले—"तो लेखराज भी फ़रार हो गया। और वह मोटर जिससे हमारी गाड़ी की टक्कर हुई थी?"

"यह और भी मज़ेदार बात है त्रिपाठीजी, उसकी खोज करने जाते ही फिर वही राधाकृष्ण के द्वारा की गई घटनाएँ आ पड़ीं। गाड़ी किसकी है, आपने कुछ सोचा है?"

"नहीं; मैंने सोचना तो छोड़ ही दिया है।"

"एक ऐसे आदमी से मैंने नम्बर पूछा, जिसने अपनी आँखों से यह दुर्घटना देखी थी। नम्बर की खोज करने पर पता चला कि गाड़ी के मालिक हैं मिस्टर गुप्त—केदारनाथ गुप्त !"

हरिनारायण उछल पड़े, जैसे उन्होंने बिजली की धारा छू ली हो। बोले—"मिस्टर गुप्त !"

"हाँ। मैंने उनके नाम का सम्मन निकालकर भेज दिया है। आपसे पोशीदा तौर पर कहता हूँ कि उन्हें आते ही गिरफ़्तार करने के लिए मैं मजबूर हूँ।"

मिस्टर खन्ना को उम्मीद थी कि उनकी यह चमत्कार से भरी हुई बात सुनकर हरिनारायण स्तब्ध हो जायँगे। लेकिन इसके बदले उन्हें कुर्सी पर लेटकर ज़ोर से हँसते देखकर उनके दिल को चोट लगी। कठोर स्वर से उन्होंने पूछा—"त्रिपाठीजी, इसमें इतना हँसने की कौन सी बात है ?"

हरिनारायण ने अब अपने को सँभाल लिया था। उन्होंने शान्त होकर कहा—"कुछ नहीं। मैं सिर्फ़ यही सोच रहा हूँ कि मिस्टर गुप्त जैसे प्रतिष्ठित मनुष्य ने जहाँ-तहाँ—चारों ओर—राधाकृष्ण के हाथ की छाप रख जाने की हिकमत कहाँ से सीखी ?"

"लेकिन उनके छाप रखने की क्या ज़रूरत है जब कि राधाकृष्ण ख़ुद जीते हैं ! स्वयं आपने मुझे एक दिन यह बात बतलाई थी।"

"हाँ-हाँ। मुझे याद नहीं थी। तो हम लोग मिस्टर गुप्त को राधाकृष्ण का सहायक कह सकते हैं।" बात पूरी कह चुकने पर हरिनारायण उठ खड़े हुए और नम्रता से बोले—"क्या मेरी एक बात सुनेंगे ?"

मिस्टर खन्ना ने चुपचाप गर्दन हिलाकर सम्मति जताई।

"देखिए, इस मामले में इस वक़्त भी बहुत सी आश्चर्य-जनक बातें हम लोगों के लिए इकट्ठा हो गई हैं कि कई जन्म तक बैठे-बैठे सिर खपाने पर भी उन्हें सुलझाना मुश्किल मालूम होता है।...... अच्छा, जाता हूँ।"

हँसते हुए वे घर से बाहर निकल आये। इसके बाद उन्हें क्या करना चाहिए?

२२

रात ज्यादा हो गई है। मूसलधार पानी बरस रहा है। आसमान के हृदय को चीरती हुई बिजली लगातार चमक रही है। ऐसी भीषण रात को दो आदमी, जानवरों की तरह तेज़ चाल से, कहीं जा रहे हैं।

× × × ×

दीनानाथ ने पूछा--"उसे आने के लिए चिट्ठी किसने लिखी?"

नीलिमा--हमीदा ने। उसी ने मानों बुला भेजा है। उसकी क्या मजाल जो उसके बुलाने पर न आवे!

"लेकिन भई, मुझे यह सब अच्छा नहीं लगता। चाहे जो हो, है तो वह अपने दल का ही एक आदमी। उसे इस तरह भुलावा देकर ले आना और फिर मार डालना...।"

"वह दल का है? किसके दल का? वह विश्वासघातक है।"

"हमें उसके विश्वासघात का कोई काम मालूम है?"

"यह तो मैं नहीं कह सकती; लेकिन अपने दल के और-और लोग—किनाराम, रामसेवक, लालविहारी--भी तो वहीं थे। सभी की एक राय है। फिर बाल की खाल निकालने की क्या ज़रूरत है?"

इस समय तूफ़ान और भी तेज़ हो उठा। प्रकृति ने और भी भयानक स्वरूप धारण किया। जीवित प्रेत की भाँति दो आदमी एक मैदान के किनारे आ खड़े हुए।

दीनानाथ ने कहा--"अच्छा, कुछ हर्ज नहीं। हम नज़दीक आ गये हैं। भेंट कहाँ होगी?"

"कोई पचास गज़ और आगे बढ़कर। बरगद के पेड़ के तले।"

"और फाँसी?"

"चौबे लोगों के बग़ीचे के नज़दीक।"

वे लोग खड़े हो गये और प्रतीक्षा करने लगे। कई मिनट तक भीगे कपड़े पहने, लगातार गिर रही जलधारा के नीचे, वे जाड़े के मारे काँप रहे थे। उनके हाथ-पैर ठिठुर से रहे थे।

दूर पर किसी के चलने की हलकी आहट मिली। दीनानाथ के कान के पास मुँह ले जाकर नीलिमा ने अस्पष्ट स्वर में कहा—"वही आ रहा है। पैरों की आवाज़ मैं साफ़ पहचान रही हूँ।"

इन लोगों के दल का एक आदमी धीरे-धीरे मृत्यु के लिए बिछाये गये जाल में पैर रखने के लिए चला आ रहा है और वह जाल फैलाया है इन लोगों ने। यह सोचते ही इनकी तबीयत ताज़ा हो उठी।

राहगीर की शकल धीरे-धीरे साफ़ दीख पड़ने लगी। वह बड़ी तेज़ी से चला आ रहा था। नज़दीक आने पर अँधेरे में दो आदमियों को देखकर वह भयानक ढङ्ग से चौंक उठा। बाद को पहचान लेने पर बोला—"कौन है? दीनानाथ? अरे नीलिमा! क्या मामला है? इतनी रात को तलबी क्यों हुई! कैदी-गाड़ी से भागने के बाद रास्ते में चलते ही न जाने क्यों मेरा शरीर काँपने लगता है। चटपट बतलाओ, मुझे क्यों बुलाया है।"

नीलिमा बोली—"लेखराज, तुम हम लोगों पर सन्देह करते हो?"

लेखराज ने गम्भीर स्वर से कहा—"भई, मज़ाक़ करने के लिए मेरे पास वक्त नहीं है। मैं नहीं समझता तुम लोग क्या चाहते हो! चिट्ठी लिखी थी किसने? हमीदा ने?"

दीनानाथ और नीलिमा में से किसी ने कुछ नहीं कहा।

लेखराज ने असहिष्णुता से कहा—"साफ़-साफ़ बतलाओ भई। यहाँ खड़े-खड़े भीगना मैं नहीं चाहता। सर्दी के मारे दाँत बज रहे हैं।"

नीलिमा ने अब कहा—"मेरे साथ आओ।"

"तुम लोगों के साथ! हरगिज़ नहीं। ऐसी भयावनी रात को मैं कहीं जाना नहीं चाहता। किसी अच्छे दिन की प्रतीक्षा करो भाई।

लेकिन अपना अभिप्राय तो बतलाओ पहले। मेरी ओर इस ढङ्ग से देख रहे हो कि जान पड़ता है मुझे समूचा निगल जाओगे। चटपट पेट को तनिक हलका कर डालो।"

दीनानाथ इस बीच, लेखराज की आँख बचाकर, उसके पीछे जाकर खड़ा हो गया। कठोर स्वर से उसने कहा--"तो तुम हम लोगों के साथ न जाओगे ? तुम्हें जाना ही पड़ेगा।"

चौंककर वह मुड़कर खड़ा होने लगा, लेकिन नीलिमा ने ज़ोर से उसे अपनी बाँहों में भर लिया। अब असल मामला समझकर उसने डर के मारे काँपते हुए स्वर में कहा—"तुम लोगों का मतलब क्या है ?"

"मतलब बाद को समझना। इस वक़्त यह बतलाओ कि चलोगे या नहीं।"

लेखराज शायद 'नहीं' कहना चाहता था, लेकिन इसके पहले ही दीनानाथ ने पीछे से उसके गले में एक फन्दा डाल दिया और फिर उसकी कमर पर घुटना रखकर फन्दे को ज़ोर से खींचा—लेखराज वहीं ज़मीन पर गिर पड़ा। नीलिमा उसकी छाती पर चढ़ बैठी और उसने लेखराज के दोनों हाथ बाँध दिये। दीनानाथ ने उसके पैर भी बाँध दिये।

नीलिमा ने अपनी पोशाक के भीतर से फटे हुए कपड़ों से तैयार की गई पट्टी की तरह एक चीज़ निकाली। इसी से लेखराज की आँखें बाँधकर दीनानाथ ने बचा हुआ थोड़ा सा कपड़ा उसके मुँह में भी ठूँस दिया।

लेखराज मुर्दे की तरह लेटा रहा। वह अपना बचाव करने का कुछ भी उपाय नहीं कर पाया।

बाँधने का काम ख़तम होने पर दीनानाथ ने पूछा--"गाड़ी क्या ज़्यादा दूर है ?"

"नहीं, नज़दीक ही है।"

चुपचाप धीमी चाल से एक मोटरकार उसी ओर आ रही थी—दीनानाथ और नीलिमा जल्दी से उठ खड़े हुए और सिगरेट सुलगाने के

बहाने एक उछाल में अलग जा खड़े हुए। लेकिन उन लोगों की इतनी सावधानी बेकार थी। रामसेवक का पहचाना हुआ स्वर कानों में आया--"बदमाश को पकड़ लिया है न?"

"हाँ।"

"लेते आओ उसे।"

दो आदमियों ने पकड़कर लेखराज को मोटर पर पीछे की ओर सुला दिया और फिर एक काले कम्बल से उसे ढक दिया, जिसमें कोई देख न सके।

मोटर-कार तीर की तरह तेज़ी से सुनसान रास्ते पर दौड़ने लगी।

× × ×

बदमाशों का अड्डा क्या है पुराने ज़माने के राजाओं का शस्त्रागार है। कुल्हाड़ी और गड़ासे से लेकर नये ज़माने के बन्दूक़ वग़ैरह अस्त्र तक दीवालों पर क़तारों में लटक रहे थे।

छत के ऊपर से रस्सी से बँधी हुई एक लालटेन लटक रही थी। उसी की हलकी लौ बीच-बीच में बुझ जाने का भय दिखला रही थी। इसी रोशनी में जीते-जागते राक्षसों और चुड़ैलों की तरह कुछ लोग जिस आनन्द में तन्मय हो रहे थे उसे सोचने से ही कलेजा काँपने लगता है। डरावनी शकल-सूरत के, कसौटी की तरह काले, एक आदमी ने हमीदा को धक्के देकर कहा--"तुम्हारा दीनानाथ क्या समझ गया है न कि इसी जगह हम लोग उन सबकी प्रतीक्षा करेंगे?" हमीदा ने मुँह बनाकर कहा--"ओह! मौत का सामना है। एक ही बात कितनी बार बतलानी पड़ेगी। यह बात तो नहीं है कि मेरे साथ बात-चीत करने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहे हो!"

अट्टहास से सारा कमरा गूँज उठा लेकिन किनाराम दबनेवाला आदमी नहीं था। वह जानता था कि यद्यपि वह दल का एक आदमी है फिर भी बहुत से लोग उसका विश्वास नहीं करते—सब बातें नहीं कहते। इसी से हमीदा की बात के जवाब में उसने क्रुद्ध होकर कहा--"ओहो! तुम

तो आपे से बाहर हो गई ? लेकिन इससे मैं भूलने का नहीं। तुम्हें बतलाना होगा, वे तीन आदमी कहाँ गये। बुआ, तुम्हीं साफ़-साफ़ बतलाओ।"

बूआ ने चुपचाप गर्दन हिलाकर अपनी असम्मति जताई। कहा—"मैं वह सब ख़बर नहीं रखती।"

इस बात पर घर का एक भी आदमी विश्वास नहीं कर सका। किनाराम ने उसका एक हाथ कसकर पकड़ लिया और कहा—"झूठ बोलनेवाली बुढ़िया! हमारे साथ भी हिकमत की बातें करने में तुझे शर्म नहीं आती। कितने दिन से तू हम पर सन्देह करती आ रही है?"

"चुप रहो।" ओठों पर उँगली रखकर हमीदा ने सबको मौन धारण करने का संकेत किया। पल भर में चारों ओर सन्नाटा छा गया।

"जान पड़ता है, वे लोग आ रहे हैं।" कहकर हमीदा चुपचाप उठी और दबे पैरों दरवाज़े के पास आकर खड़ी हो गई। बनावटी आवाज़ से उसने किसी को पुकारा।

ठीक वैसी ही बनावटी आवाज़ में उत्तर मिला—"हाँ, वही लोग हैं।"

वह बैठने जा रही थी लेकिन लालविहारी ने उसका हाथ पकड़कर ठेलते हुए कहा—"चली जाओ इस बार।"

हमीदा इस पर एतराज़ करती हुई कुछ कहना चाहती थी लेकिन लालविहारी ने उसे रोककर कहा—"तुम्हारी बकवाद सुनने का वक्त़ नहीं है। किनाराम, इस बेंच पर चले आओ। तुम, मैं और दीनानाथ आज के मामले का फ़ैसला करेंगे। नीलिमा मुलज़िम के नाम से अभियोग उपस्थित करेगी और अगर हमीदा का जी चाहे तो वह अभियुक्त की ओर से वकालत कर सकती है।"

"ऐसी वकालत जहन्नुम में जाय। तुम लोग उसके टुकड़े-टुकड़े करके नमक और मिर्च से खा जाओ। इसमें हमारा क्या नुक़सान है।"

× × × ×

गहरा सन्नाटा छाया हुआ है। बाहर सुनाई दिया, एक लकड़ी का बक्स रस्सी के सहारे ऊपर उठ रहा है।

सब लोग आकर लकड़ी के सन्दूक़ को घेरकर खड़े हो गये और किनाराम ने अपनी मोटी-मोटी भुजाओं के सहारे लेखराज के निश्चल शरीर को ऊपर तानकर, जड़ पदार्थ की तरह, ज़मीन पर पटक दिया और हँसकर कहा—"यह बहुत घटिया माल है।"

हमीदा ने पैरों से लेखराज के मुँह में का कपड़ा हटाना शुरू किया कि देखे, वह बचा है या नहीं। नीलिमा ने आगे बढ़कर कहा—"ख़बरदार, हटकर खड़ी होओ।"

इसके बाद एक बोतल में से थोड़ा सा तरल पदार्थ उसके गले में उँडेलकर वह एक बेञ्च पर बैठ गई और बोली—"काम जल्दी पूरा करना होगा। वक्त बरबाद करने से काम नहीं चलेगा।"

किनाराम ने लेखराज के शरीर को उठाकर लकड़ी के एक खम्भे के सहारे खड़ा कर दिया। फिर एक रस्सी लाकर मज़बूती से उसे खम्भे से बाँध दिया। हमीदा ने इस बीच उसके मुँह में ठूँसा हुआ कपड़ा निकाल बाहर कर दिया।

नीलिमा ने गम्भीरता से कहा—"पञ्च लोग अपनी-अपनी जगह बैठ जायँ और कोई एक आदमी इसे थोड़ा सा सोमरस पिला दे।"

बुआ एक मिट्टी के घड़े में थोड़ा सा ठंढा पानी ले आईं। उसे उन्होंने लेखराज के मुँह में लगाया। लेखराज में पीने की शक्ति नहीं रह गई थी। इससे लाचार होकर बुआ ने पानी के छींटे उसके मुँह पर मारे।

कुछ देर बाद होश में आने पर लेखराज ने आँखें खोलीं। नर-पिशाच लोग कौतूहल से दीप्त नेत्रों द्वारा देखने लगे कि होश में आने पर लेखराज का पीला चेहरा कैसे भय के मारे नीला होने लगा।

नीलिमा उसकी ओर झुककर बोली—"मेरी बात सुन रहे हो लेखराज?"

"मुझे छोड़ दो।" कल जो लोग लेखराज के मित्र थे उनके मन में इस दया की भीख से करुणा का उद्रेक होना तो दूर रहा; बल्कि सबने उसे बढ़िया मज़ेदार चीज़ समझा।

न्याय की गम्भीरता अक्षुण्ण रखती हुई नीलिमा बोली—"भाई, मैं तो क़ायदा-क़ानून ठीक तरह से मानकर चलना ही पसन्द करती हूँ। तुम्हारा विचार ठीक तरह से न होने पर मैं इस मामले में दख़ल ही न देती। लालविहारी, तुम्हीं को अभियोग उपस्थित करना होगा। बताओ, लेखराज, दल का आदमी होने पर भी, आज क्यों यहाँ लाया गया है।"

लालविहारी घर में अव्यवस्थित ढँग से टहल रहा था। बोला—"लेखराज, हम लोगों में से किसी ने कभी तुम्हारे साथ विश्वासघात किया है? तुम्हें फन्दे में फँसाने की कोशिश की है? हम लोगों में से किसी के ख़िलाफ़ तुम्हें कुछ कहना है?—नहीं?—अच्छा, अब तुम्हारे ख़िलाफ़ मुझे जो कुछ कहना है, कहता हूँ। कुमारी कनकलता के मामले में तुमने हम लोगों के साथ जो विश्वासघात किया है उसे स्वीकार करते हो?"

लेखराज ने करुण स्वर से चिल्लाते हुए कहा—"भाई, तुम्हारी बातें मेरी समझ में नहीं आ रही हैं। बताओ, मेरा क्या अपराध है।"

लालविहारी ने कड़ककर कहा—"तो मैं अब साफ़-साफ़ बता दूँ। उस दिन कुमारी कनकलता के गहने चुराने का ज़िम्मा तुम्हारे ऊपर था न। तुमने हम लोगों का साथ छोड़, अपने ही जैसे और भी कई दग़ाबाज़ों को साथ ले, कनकलता को एक अँधेरी कोठरी में भरकर उनके गहने हथिया लिये। हम लोगों को अँगूठा दिखा दिया। तुम्हारे उन दोस्तों की कमी नहीं है जिन्हें हम लोग नहीं पहचानते। क़ैदी-गाड़ी से तुम्हारा छुड़ाया जाना इसका प्रमाण है। जानते हो, ऐसे विश्वासघात की क्या सजा होती है?"

नीलिमा ने भी वक्ता के कथन की पुष्टि की। लेखराज ने कहा—"परमात्मा जानता है, मुझे यह सब कुछ नहीं मालूम।"

दल के सब लोग हिंस्र पशु की तरह ख़ून के प्यासे हो रहे थे। नीलिमा ने कहा—"लेखराज, अगर तुम सच बात नहीं बताओगे तो जानते हो तुम्हें क्या दण्ड मिलेगा? तुम्हारा मुँह हमेशा के लिए बन्द हो जायगा। हमीदा इसके मुँह पर कपड़ा बाँध दो।"

हमीदा ने फिर उसके मुँह पर कपड़ा बाँधना शुरू किया। नीलिमा ने बुआ से कहा—"आप सबसे ज़्यादा उम्र की हैं। आप ही इसके लिए दण्ड का निश्चय करें।"

बुआ—मेरे विचार से विश्वासघात की सज़ा मृत्यु है।

सब लोग प्रसन्नता से नाच उठे। नीलिमा ने कहा—"अच्छा, यही किया जाय। मेरी राय है, इसे हथौड़े से मार मारकर ख़तम कर देना चाहिए।"

बुआ कोठरी के एक अँधेरे कोने से हथौड़ा ले आई और उसे तान-कर भरपूर लेखराज के चेहरे पर मारा। सब लोगों ने बारी-बारी से ऐसा ही किया। लेखराज के हाथ-पैर बँधे थे। बेचारा चुपचाप अपने साथियों का यह अत्याचार सहने लगा। अन्त में उसने अपनी जान देकर अपने पापों का प्रायश्चित्त किया।

नीलिमा कुछ दूर खड़ी थी। रामसेवक ने अपने हाथ से शस्त्र फेंकते हुए कहा—"क्यों जी, तुमने तो प्रहार ही नहीं किया?" नीलिमा बोली—"मैंने समझ-बूझकर अपने को अलग रखा है। ज़रा अपनी सूरत तो देखो। साफ़ होकर आ जाओ; अभी लाश को यहाँ से हटाना बाक़ी है। हम-तुम दोनों मिलकर यह कर लेंगे।"

२३

'वर्तमान संसार' के प्रधान सम्पादक ने हरिनारायण से कहा—क्यों महा-शय, आप इधर कहाँ थे? आप जानते हैं, कितनी बड़ी घटना हो गई है? मिस्टर गुप्त का पता ही नहीं है। उनके एकाएक ग़ायब हो जाने से कितनों की तक़दीर फूट गई। व्यापार-जगत् में बड़ी हलचल मची है।

हरिनारायण—आप चिन्ता न करें। आज के अङ्क में मिस्टर गुप्त के लापता होने के विषय में ब्योरेवार लेख दूँगा।

अब हरिनारायण ने पत्र के व्यवसाय-विभाग के सम्पादक से भेंट कर उनसे व्यापारिक मामलों पर कोई आध घंटे तक बातचीत की। इतने

में ही प्रधान सम्पादक ने आकर कहा—"आप अभी यहीं बैठे हैं। यह देखिए 'हंस' ने कैसी ताज़ा खबर छापी है। मिस्टर गुप्त की लाश एक मकान में बरामद हुई है।"

"अच्छा, मैं अभी चला। अखबार में और क्या लिखा है? मिस्टर गुप्त ने आत्महत्या की है या उनका क़त्ल हुआ है?"

"पुलिस अभी इसका कुछ निश्चय नहीं कर पाई।"

× × × ×

"मिस्टर रीड, आपसे दो-एक बातें करना चाहता हूँ। आशा है, आपको असुविधा न होगी।"

"हाँ हाँ, बैठिए।"

"पुलिस ने मिस्टर गुप्त की लाश का पता कैसे लगाया?"

"कल उनके नौकरों ने उन्हें सबेरे नहीं देखा तो उन्हें ताज्जुब हुआ। उन लोगों ने मुझे ख़बर दी। मैं गुप्त के मकान पर गया तो वहाँ मुझे एक जगह किराये की कुछ रसीदें पड़ी मिलीं। एक तो हाल की ही थी। उसके मुताबिक़ मैंने दूसरे मुहल्ले के उस मकान में जाकर खोज की तो मालूम हुआ कि कल एक नया किरायेदार एक बड़ा सन्दूक़ ले आया है। बाद को उसके कमरे में गया तो देखा गुप्त की लाश ट्रङ्क के पास ही पड़ी हुई है।"

पूछने पर रीड साहब ने और बताया कि "किसी ने मिस्टर गुप्त का क़त्ल किया है। ट्रङ्क पर फिर राधाकृष्ण की उँगलियों के निशान और फ़र्श की धूल पर बहुत से पद चिह्न भी मिले हैं। अब मैं राधाकृष्ण के चित्रालय को भली भाँति जाँचना चाहता हूँ। शायद वहाँ कुछ काग़ज़-पत्र मिलें, जैसे कि गुप्त के घर वे रसीदें मिली हैं। आप मेरे साथ चलें।"

हरिनारायण तैयार हो गये। दोनों कुछ देर में अभीष्ट स्थान पर पहुँचे। चित्रालय के भीतर पैर रखते ही दोनों आदमी चिल्ला उठे—"अरे, यह क्या बात है!"

घर के ठीक बीचोबीच छत से बँधी एक रस्सी में एक आदमी का ठण्ढा कड़ा शरीर लटक रहा था। मिस्टर रीड ने उसे छूते ही कहा—"इसे मरे देर हुई।"

हरिनारायण स्तब्ध नेत्रों से मुर्दे की ओर देख रहे थे। मिस्टर रीड ने उनकी मदद से मुर्दे को उतारकर फ़र्श पर रक्खा। उसका मुँह कुचला हुआ था और फूल गया था जिससे पहचाना नहीं जा सका। दोनों हथेलियाँ तेज़ाब से जला दी गई थीं। हत्यारा शायद यह नहीं चाहता था कि इसकी उँगलियों का निशान कोई ले सके।

मि० रीड—शायद यह राधाकृष्ण की लाश हो।

हरिनारायण—नहीं, उनकी नहीं हो सकती। वे यहाँ आकर फाँसी क्यों लगाने लगे?

मि० रीड—इसमें भी चालाकी है। गले में रस्सी का तनिक भी दाग़ नहीं है।

हरिनारायण ने भली भाँति लाश को देख-भालकर कहा—"यह लेखराज की लाश है। इसके गले पर जो चिह्न है उसे मैंने अच्छी तरह से देखा है। जान पड़ता है, बदमाशों ने इसे जेल से छूट आने पर ख़तम कर दिया है जिसमें इसके द्वारा उनका रहस्योद्भेद न हो।"

इसी वक्त किसी ने दरवाज़ा खटखटाया। मिस्टर रीड ने दरवाज़ा खोला तो देखा एक पुलिस का सिपाही साइकिल से उन्हें ख़बर देने आया है। आदमी ने झुककर सलाम किया और कहा—"हुज़ूर, बुआ का गरोह पकड़ लिया गया है।"

"कौन-कौन गिरफ़्तार हुए हैं?"

"बुआ, दीनानाथ, नीलिमा तथा और भी कुछ लोग जिनके नाम मालूम नहीं।"

हरिनारायण—कल्लू नहीं?

सिपाही—नहीं, कल्लू भाग गया।

मिस्टर रीड ने सिपाही को बिदा कर दिया तो हरिनारायण से पूछा—"आप कल्लू को कैसे जानते हैं?"

"आपने कल्लू से ही ख़बर पाकर तो इस दल को गिरफ़्तार किया है।"

"आप पागल तो नहीं हुए हैं? आपसे किसने कहा कि वह हमारा आदमी है?"

हरिनारायण ने स्थिर दृष्टि से मिस्टर रीड की ओर देखकर कहा—"इसके लिए आप माथापच्ची न करें। यह कल्लू आपके पुराने रमाकान्त के सिवा और कोई नहीं है।"

मिस्टर रीड आश्चर्य के मारे हरिनारायण का मुँह देखने लगे।

२४

जेल का एक सन्तरी निर्मलादेवी की कोठरी में एक बुढ़िया को ढकेलते हुए बोला—"चली जा।" और बाहर से कोठरी का दरवाज़ा बन्द कर दिया।

निर्मलादेवी की ही तरह बुढ़िया को भी कमरे में दूसरे व्यक्ति को देखकर कम आश्चर्य नहीं हुआ। उसने सन्देह की दृष्टि से निर्मला की ओर देखकर कहा—"क्यों जी, तुम्हारा क्या नाम है?"

निर्मलादेवी ने अनिच्छा से कहा—"निर्मला।"

"निर्मला! नाम तो बढ़िया है। कितने दिनों से ससुराल आई हो? मैं तो, बेटी, कल रात में आई। सुनी है शानदार बात! बुआ चोरी का माल क्रय-विक्रय करती है। ऐसी झूठ बात भी सम्भव है! ईश्वर इसका न्याय करेंगे।"

निर्मलादेवी चुप रहीं। बुआ ने वक्र दृष्टि से उन्हें देखकर कहा—"तुम कुछ बोलती नहीं हो। तुम मुझ पर जासूसगिरी करने के लिए तैनात की गई हो क्या?"

बेचारी निर्मला इसका क्या जवाब देती।

× × × ×

हरिनारायण की ख़ुशी का ठिकाना न था। उन्होंने बैरिस्टर साहब को राज़ी कर उनके काग़ज़-पत्र अपने बैग में रखकर, निर्मलादेवी के वकील की हैसियत से, उनसे भेंट करने की कोशिश की। निर्मलादेवी से एक अलग कमरे में मिलने का प्रबन्ध कर दिया गया।

हरिनारायण के साथ के दोनों पहरेदार जब कमरे का दरवाज़ा बन्द कर बाहर चले गये तब वे जल्दी से निर्मला के पास जा पहुँचे। उन्हें देखते ही निर्मलादेवी का चेहरा उतर गया। वे बोलीं - "हरिनारायणजी, आपने मुझे झूठ-मूठ क्यों गिरफ़्तार कराया? आख़िर मेरे साथ इतनी दग़ाबाज़ी क्यों की आपने?"

हरिनारायण ने कोमल स्वर में कहा— "आप मुझ पर विश्वास रक्खें; आपकी भलाई के लिए ही मुझे विवश होकर यह अप्रिय कार्य करना पड़ा। आपको याद होगा, किसी ने मेरी ओर से आपको दो बार फोन किया था और पूछने पर एक बार भी, आपको मेरा कुछ पता नहीं चला। मेरा ख़याल था कि यह जानने के लिए ही उन लोगों ने फोन किया था कि आप आश्रम में हैं या नहीं। इन्हीं लोगों ने आपको मौसीवाले घर में मार डालने का षड्यन्त्र रचा था। किसी अन्य स्थान में आपको रखना ख़तरे से ख़ाली न देख मैंने लाचार होकर यह हिकमत निकाली। यहाँ आपको कुछ भी डर नहीं है। आशा है, इसके लिए मुझे क्षमा करेंगी।"

निर्मलादेवी के चेहरे पर हँसी दीख पड़ी। बोलीं—"आपने पहले से ही यह मुझे क्यों नहीं बता दिया?"

"इसका एक कारण तो यह है कि यह बात मेरे दिमाग़ में ठीक अन्तिम समय आई। दूसरे यदि आपको मैं बतला देता तो गिरफ़्तारी के बाद, हज़ार कोशिश करने पर भी, भय और आश्चर्य का स्वाभाविक

प्रदर्शन आप न कर सकतीं और उन लोगों को आपकी गिरफ़्तारी में सन्देह करने का मौक़ा मिलता।"

"आप भी अजीब आदमी हैं। मुझे अच्छा हैरान किया आपने। कुछ नई ख़बर भी है?"

हरिनारायण ने ट्रङ्क की घटना उन्हें बतलाई और कहा—"फ़िहरिस्त अब तक नहीं मिली।"

निर्मला ने एकाएक चिल्लाकर कहा—"मेरा स्वभाव भी अनोखा है। वह मेरे एक हैंड-बैग में ही थी। लेकिन उस समय मुझे याद नहीं था। लीजिए, अभी देती हूँ।"

हरिनारायण ने फ़िहरिस्त को लेकर देखा। उसमें रानी लीलावती, राधाकृष्ण, कुमारी कनकलता, शर्मा-वर्मा, निर्मलादेवी, मिस्टर गुप्त के नाम और प्रत्येक नाम के सामने एक तारीख़ दी थी। अन्त में फिर शर्मा-वर्मा का नाम था और सामने लिखा था 'मार्च के आख़िरी हिस्से में'। पूरा पढ़ चुकने पर हरिनारायण चिन्तित होकर बैठ रहे। रानी लीलावती और राधाकृष्ण की मृत्यु से जिस रहस्यमय काण्ड का आरम्भ हुआ है, शायद मार्च के अन्त में शर्मा-वर्मा के विनाश से उसकी समाप्ति होगी। अगर यह सच है तो तीन ही दिन और बच रहे हैं। अब उन्होंने निर्मला से कहा—"यह फ़िहरिस्त मैं अपने पास रखता हूँ। हाँ, आप बता सकती हैं कि आपके भाई ने क्या मिस्टर गुप्त की कम्पनी के शेयर ख़रीदे थे?"

"जी हाँ; कुछ थोड़े से शेयर उन्होंने लिये थे। शर्मा-वर्मा-बैङ्क में ही उन्होंने प्रबन्ध किया था।"

"तो किसी निश्चित दिन उसका रुपया देना ज़रूर तय रहा होगा?"

"हाँ।"

हरिनारायण एकाएक घायल शेर की तरह गरज उठे—"निर्मलादेवी, बहुत जल्द मैं रहस्य का पता लगाता हूँ—एक हफ़्ते के भीतर ही।"

शर्मा-वर्मा-बैङ्क मिस्टर गुप्त के सब शेयर बेचता है, किसी निश्चित दिन रुपया देने की शर्त पर। मि० गुप्त के मरने से शेयर की दर बहुत उतर गई है। अब महीने के अन्त में उक्त बैङ्क दोनों हाथों से रुपया बटोरेगा। शनिवार महीने का आख़िरी दिन है; उस दिन बैङ्क का सन्दूक़ रुपयों से भर जायगा। उसी दिन, फ़िहरिस्त के अनुसार, बैङ्क लूटा जायगा।

रमाकान्त के डेरे पर आकर हरिनारायण ने कई बार उन्हें पुकारा; लेकिन कुछ जवाब नहीं मिला। रमाकान्त से भेट करना बहुत आवश्यक था। निराश होकर हरिनारायण नीचे उतर आये।

रास्ते में शर्मा-वर्मा-बैङ्क का विशाल प्रासाद मिला। हरिनारायण तनिक सोचकर बैङ्क के भीतर गये। एक कमरे में दोनों मालिक बैठे हुए थे।

मिस्टर शिवचरण वर्मा ने अपने स्वाभाविक शान्त स्वर में पूछा—"आप क्या चाहते हैं?"

हरिनारायण—इधर जो कई एक रहस्यमय घटनाएँ हुई हैं उनमें अप्रत्यक्ष रूप से आप लोगों का भी सम्बन्ध है। ख़ुफ़िया पुलिस विभाग के साथ-साथ मैं भी इन मामलों की जाँच किया करता हूँ। मुझे कुछ ऐसे प्रमाण मिले हैं जिनकी उपेक्षा शायद आप लोग न करेंगे। अब आप लोगों का ही नम्बर है और कुल तीन दिन बाक़ी हैं।"

रामचरण शर्मा ने कहा—"समय रहते सावधान कर देने के लिए आपको धन्यवाद। हम सतर्क रहेंगे। आप किसलिए आये हैं?"

"मैंने 'वर्त्तमान संसार' से इन तीन दिनों की छुट्टी ले ली है और चाहता हूँ कि यह समय यहीं बिताऊँ। आपको कुछ उज्र तो नहीं है?"—हरिनारायण ने कहा।

"आपकी प्रार्थना जैसी आवश्यक है, वैसी ही आकस्मिक भी। अच्छा, मैं मिस्टर वर्मा से सलाह करने के बाद कुछ कह सकूँगा।" कहकर मिस्टर शर्मा और वर्मा परामर्श करने चले गये।

कोई आध घंटे बाद दोनों ही मालिकों ने आकर हरिनारायण को जताया—"आप इस समय से ही यहाँ के अतिथि हुए।"

× × × ×

रात का भोज चल रहा था। तीन आदमी चुपचाप भोजन कर रहे थे। अन्त में शिवचरण वर्मा ने कहा—"आपके पहरे का पहला दिन तो बीत गया। कुछ सन्देहजनक बात आपको मिली?"

"नहीं।"—लेकिन हरिनारायण की बात सच नहीं थी; क्योंकि एक आदमी को उन्होंने उस दिन टेलीफोन का तार ठीक करते देखा था। पता लगाने पर मालूम हुआ था कि बैङ्क के मालिकों के कहने पर कम्पनी ने उसे भेजा था। हरिनारायण ने जैसे उसे कहीं देखा था। डकैतों के दल का तो वह नहीं है? हरिनारायण ने उसकी जाँच कर देखा तो उसमें कुछ दोष नहीं दिखाई पड़ा। आदमी अच्छा कारीगर था।

शिवचरण वर्मा—इस मकान में आपके रहने से वे लोग शायद साव-धान हो गये हैं। इससे हमारा तो फ़ायदा ही है।"

हरिनारायण—लेकिन वे इतने डरपोक नहीं हैं कि इसी से डर जायँगे। ख़ैर, आप मुझे इस मकान में आने के सब रास्ते दिखा दीजिए।

अच्छी बात है आप अभी सब देख लीजिए।" कहकर मिस्टर शिवचरण वर्मा ने हरिनारायण को अपने साथ लेकर मकान दिखाना शुरू किया। बरामदे में खड़े होकर मिस्टर वर्मा ने कहा—"वह दाहनी ओर सदर फाटक है—यहाँ से कुछ दूर। बाईं ओर निचले हिस्से में दफ़्तर है। वहाँ जाने का एक ही रास्ता है—इस बरामदे से होकर। इसे बन्द कर देने पर भीतर आना असंभव है।"

हरिनारायण किसी जँगले से भी भीतर नहीं आया जा सकता?

वर्मा—बिलकुल नहीं। रास्ते की ओर के सब जँगलों में लोहे के मोटे-मोटे छड़ लगाये गये हैं। बाग़ की ओर का जँगला प्रतिदिन सन्ध्या को भीतर से बन्द कर दिया जाता है। इस बरामदे के अन्तिम ओर

पुस्तकालय है। उसके पास के दो कमरों में मैं रहता हूँ; बाक़ी कमरे ख़ाली पड़े हुए हैं।

हरिनारायण—आपके कमरों के जँगलों का रुख़ रास्ते की ओर है या बग़ीचे की ओर?

वर्मा—बाग़ की ओर है। क्यों?

हरिनारायण—उसमें जाना बिलकुल असम्भव है क्या?

वर्मा—बिलकुल असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। इसके सिवा बग़ीचे में कोई नहीं जाता। अगर कोई नीचे से उसमें जाना चाहे तो वह सीढ़ी लगाकर, जँगलों का शीशा फोड़कर और छड़ों को उखाड़कर जा सकेगा। चलिए न; ज़रा उसे आप अपनी आँखों ही देख लें।

हरिनारायण ने उनके कमरे की भली भाँति जाँच-पड़ताल करनी शुरू की। बोले—"दरवाज़े की ओर ही सोने के लिए पलँग है। पड़े-पड़े जँगले की राह से सब कुछ दीख पड़ता है। पलँग के ऊपर की ओर बिजली की रोशनी का प्रबन्ध है। अगर आपको असुविधा न हो तो मैं रात को यहीं पर रहकर आगन्तुकों की प्रतीक्षा करूँ।"

"आप अकेले ही इस कमरे में रह सकेंगे?"

"निस्सन्देह। जो लोग आयेंगे उन्हें आपके कमरे का कोना-कोना भली भाँति मालूम होगा। इससे भीड़ इकट्ठा करना बेकार है। मैं इसमें अकेला ही रहना चाहता हूँ।"

"लेकिन इसमें कम ख़तरा नहीं है त्रिपाठीजी।"

"आप तनिक भी चिन्ता न करें।"

बैङ्कर-द्वय ने उदास चित्त से बिदा ली। हरिनारायण ने और एक बार घर को भली भाँति जाँच लिया और वे पलँग पर जा बैठे। पिस्तौल को मज़बूती से उन्होंने हाथ में पकड़ लिया।

रोशनी को बुझाते ही घने अँधेरे ने कमरे को निगल लिया। इसी अन्धकार-समुद्र में हरिनारायण, भावी आशङ्का की प्रतीक्षा में, साँस रोककर बैठ गये और मिनट गिनने लगे—एक, दो, तीन…।

बाहर बरामदे में, ग़लीचे पर, पैरों की हलकी चाप सुन पड़ी। कौन है? क्या सचमुच किसी ने पदार्पण किया? हरिनारायण ने आँखें गड़ाकर देखा तो उन्हें जान पड़ा जैसे कोई अँधेरे में उनकी ओर देखता हुआ खड़ा है। दरवाज़ा धीरे-धीरे खोला जाने लगा। आधा दरवाज़ा खुल गया। कोई आ रहा है, लेकिन यह है कौन? हरिनारायण की पलकों का गिरना बन्द हो गया। वे निश्चल बैठे रहे। मन ही मन कहा—"मृत्यु! आओ; तुम्हारे स्वागत के लिए मैं यहाँ मौजूद हूँ।"

लेकिन कोई घटना नहीं हुई। कोई भीतर नहीं आया। फिर उस आततायी के आने की प्रतीक्षा! कई मिनट यों ही बीत चले। हरिनारायण का सिर दरवाज़े के पास ही था। उन्होंने कुछ भी नहीं देखा लेकिन आततायी से उनकी स्थिति अवश्य ही छिपी नहीं थी। वह छिपे-छिपे ही आक्रमण की तैयारी कर रहा था। घर में सचमुच कोई आया था--हरिनारायण ज़ोर देकर यह बात कह सकते थे। अँधेरे में उन्होंने अनुभव किया कि आततायी उनके पलँग की ओर झुक पड़ा था। उनका गला दबाकर साँस लेना बन्द कर देने के लिए आततायी की उँगलियाँ टेढ़ी हो उठी थीं। हरिनारायण ने हाथ में रिवाल्वर को और भी दृढ़ता से पकड़ लिया और सोचा कि "चाहे जैसे वह मुझ पर आक्रमण करे, मैं उसे कसकर पकड़ लूँगा और रोशनी जला दूँगा।"

किसी तरह चिल्लाकर आत्मरक्षा का मौक़ा पाने से पहले ही हरिनारायण को मालूम हुआ कि उनके मुँह पर एक काला कपड़ा रख दिया गया है और दो मज़बूत बाँहें उनके गले को ज़ोर से दबाये हुए हैं। छाती पर भारी बोझ लदा है जिससे दम घुट रहा है।

अब कोई उपाय नहीं था। हरिनारायण का हृदय काँप उठा। शरीर की हर एक शिरा और पेशी से शक्ति-सञ्चय कर उन्होंने ज़बर्दस्ती आततायी के शिकञ्जे से अपने को छुड़ा लिया। तत्पश्चात् उसका एक हाथ ज़ोर से पकड़कर स्विच की ओर लपकते हुए वे चिल्ला उठे—"दौड़ो; मदद दो; जल्दी आओ।" लेकिन रोशनी नहीं हुई; किसी ने

तार काट दिया था। आततायी ने धीरे-धीरे उन्हें और भी सख्ती से बाँहों में जकड़ लिया। हरिनारायण की देह शिथिल होने लगी। उनका दाहना हाथ कोई इतने ज़ोर से ऐंठ रहा था कि हड्डियों के जोड़ उखड़ जाने में देर नहीं थी।

हरिनारायण ने जी-जान से कोशिश कर, अजीब हिकमत से, फिर अपने को छुड़ा लिया। उन्होंने लपककर पास ही रक्खा हुआ टार्च उठाकर उसका बटन दबाया। तेज़ रोशनी की एक झलक में उन्होंने आततायी को देख लिया। यह चेहरा उन्होंने पहले भी कहीं देखा है। छरहरा शरीर काले कपड़ों से आच्छादित था। मुँह पर काले रङ्ग का नक़ाब था। हरिनारायण चिल्ला उठे—"सांकोपाञ्ज़ा।"

लेकिन उनकी बात खतम होते न होते आततायी भूखे बाघ की तरह उनके ऊपर टूट पड़ा। टार्च की रोशनी बुझ गई और घने अँधेरे में होने लगा दोनों का भीषण पैशाचिक अवर्णनीय द्वन्द्व-युद्ध। आततायी ने उन्हें अपने बाहु-पाश में भयङ्कर रीति से जकड़ लिया। फिर अपना दाहना हाथ छुड़ाकर हरिनारायण ने किसी तरह पिस्तौल दाग दी। एक प्रचण्ड आवाज़ हुई और साथ ही आततायी ने ज़ोर से उन्हें दीवाल की ओर ढकेलकर छोड़ दिया। जँगले का एक छड़ टूट गया, एक अलमारी धड़ाम से उलट पड़ी और फिर एकदम सन्नाटा! इस सन्नाटे के बीच ज़ोर-ज़ोर से साँस लेने की आवाज़ और किसी के कराहने का अस्पष्ट स्वर सुन पड़ता था। हरिनारायण फिर गोली चलाने जा रहे थे कि इसी समय अत्यन्त निकट से जैसे किसी ने कहा—"वह भाग गया।" एक और आवाज़ आई—"रोशनी चाहिए।"

एक दियासलाई जल उठी। उसकी काँपती हुई लौ में हरिनारायण ने कमरे में तीन आदमियों को देखा। उनके कपड़े फट गये थे, मुँह पर खून का दाग़ था। वे अब तक हाँफ रहे थे। हरिनारायण ने उन्हें चटपट पहचान लिया। जिनके मुँह पर ख़ून का धब्बा था वह थे शिवचरण वर्मा; फ़र्श पर अधमरे से पड़े हुए थे मिस्टर रामचरण शर्मा और

जिस आदमी ने रोशनी जलाई थी वह था मिस्त्री जो दिन में टेलिफोन के तार की मरम्मत करने आया था।

हरिनारायण ने पिस्तौल रखकर दरवाज़ा बन्द कर दिया। शिवचरण वर्मा ने उनकी ओर देखकर जँगले के टूटे हुए छड़ की ओर इशारा करते हुए कहा—"आततायी तो निकल गया।"

हरिनारायण ने जँगले के पास आकर कहा—"उस रास्ते सांकोपांजा हरगिज़ नहीं भाग सकता। यह असम्भव है।"

मिस्त्री ने गरदन हिलाकर कहा—"हरिनारायण बाबू, मेरी भी यही राय है।"

२५

"हरिनारायण बाबू, मेरी भी यही राय है।" सुनकर हरिनारायण ने चौंककर पूछा—"तुम कौन हो?"

उस आदमी ने छद्मवेष उतारते हुए हँसकर कहा—"तुम मुझे नहीं पहचानते? मैं रमाकान्त हूँ।"

हरिनारायण की ख़ुशी का अन्त न रहा। उन्होंने अपने मित्र को छाती से लगा लिया। इसी समय बैङ्कर-द्वय बोल उठे—"तू यहाँ क्या कर रहा है?

हरिनारायण ने इस बात को अनसुनी कर कहा—"रमाकान्त, तुम यहाँ कैसे आये?"

रमाकान्त—जानते ही हो, मैं—'कल्लू'—बुआ के दल में था। वहीं से मुझे पता लगा कि उक्त दल का कार-बार इस बैङ्क के साथ था। तुमको कल मैंने इस घर में घुसते तो देखा लेकिन निकलते नहीं देखा। तब मेरे जी में आया, कि तुम्हारे साथ-साथ रहना ज़रूरी है; शायद तुम्हें मेरी ज़रूरत पड़े। इसी से मैं मिस्त्री का भेस बदलकर यहाँ आया। चले जाने का बहाना करके भी मैं आज गया नहीं; इसी मकान में छिपा

हुआ था। तनिक पहले तुम्हारा चिल्लाना सुनकर मैं जितना जल्द हो सका, इस कमरे में आया।

शिवचरण वर्मा—हमने भी ऐसा ही किया।

टूटे हुए छड़ को दिखाते हुए मिस्टर रामचरण शर्मा ने कहा—"बदमाश सांकोपाञ्जा इस बार भी हम लोगों के हाथ में आकर निकल भागा। देखिए यह छड़ टूट गया है और उसके काले कपड़े जँगले में फँसे हुए लटक रहे हैं।"

हरिनारायण—मिस्टर शर्मा! मैं ज़ोर देकर कहता हूँ कि सांकोपाञ्जा इस रास्ते नहीं भागा। वह इस रास्ते क्यों भागने लगा? मैं आपको दिन में दिखा दूँगा कि बग़ीचे की ज़मीन पर पैरों का एक भी चिह्न नहीं है। भला एक बार में उछलकर कोई इतना बड़ा बग़ीचा पार कर सकता है?

शिवचरण ने खीझकर कहा—"तो सांकोपाञ्ज़ा गया किधर से?"

हरिनारायण ने स्पष्टता से कहा—"सांकोपाञ्ज़ा अब तक नहीं भागा है।"

"आप क्या कह रहे हैं! यह तो निश्चित है कि वह घर में नहीं है। तो फिर वह कहाँ छिप गया?"

हरिनारायण ने उसी तरह जवाब दिया—"मकान में कहीं भी वह छिपा नहीं है। हाथा-पाई के वक्त़ दम घुटते रहने पर भी मैंने ध्यान रक्खा है कि वह क्या करता है। मुझे ख़ूब याद है कि गोली चलाते समय दरवाज़ा मेरे पीछे की ओर था; इसी से वह रास्ता भी बन्द ही समझिए। वह किसी भी रास्ते से गया नहीं।"

रामचरण शर्मा—आख़िर उसके जाने का रास्ता भी आप बतलायेंगे?

हरिनारायण उठ खड़े हुए और जलती हुई रोशनी लेकर वे आईने के सामने गये। अपने गले को देख-भालकर उन्होंने कहा—"बड़े आश्चर्य की बात है। जिस आदमी ने मेरा गला दबाया था वही सांकोपाञ्ज़ा है! शायद उसकी अँगुलियों में ज़ख्म था या मेरे गले में ही

उसने घाव कर दिया था। जैसे भी हो, उसने मेरे कपड़ों पर अपनी अँगुलियों की रक्त-मिश्रित छाप लगा दी है। उसकी छाप क्या है—आपको ख़याल है?"

रमाकान्त और दोनों बैङ्कर हरिनारायण की ओर जल्दी से बढ़े। सफ़ेद कपड़ों पर चटकीली, रक्त से बनी हुई, छाप को वे पहचानते थे। फिर वही राधाकृष्ण की उँगलियों का निशान!

घर में गहरा सन्नाटा छा गया। शिवचरण वर्मा भयभीत स्वर से बोले—"हरिनारायण बाबू! साफ़ बतलाइए, इस घर में राधाकृष्ण आये थे?"

मिस्टर रामचरण शर्मा ने कहा—"देर करना ठीक नहीं। आइए, हम लोग इस मकान को राई-रत्ती खोज डालें।"

हरिनारायण ने हँसकर कहा—"मैं इसके लिए तैयार नहीं हूँ मिस्टर शर्मा। न जाने कितने दिनों से उस डकैत को मैं खोजता आ रहा हूँ जो बराबर मेरे हाथ में आकर निकल जाया करता है। इस वक्त, जब कि मुझे आँखों-देखा सबूत मिल गया है, झूठा आडम्बर करके मैं उस मौक़े को खोना नहीं चाहता।"

शिवचरण वर्मा—आप कहते क्या हैं?

हरिनारायण—पहले मैं इस घर में अकेला ही था। राधाकृष्ण यहाँ आये; क्योंकि उनकी अँगुलियों के निशान मेरे कपड़ों पर हैं। राधाकृष्ण ही सांकोपाङ्ज़ा है, यह बात हाथापाई से सिद्ध है। वह दरवाज़े या जँगले की राह से भाग नहीं सकता। इसके बाद दीख पड़े आप, मिस्टर शर्मा और रमाकान्त। इसके सिवा और कोई तो कमरे में आया नहीं। तो फिर आप लोगों में से ही कोई आदमी सांकोपाङ्ज़ा है। और वह इस वक्त भी घर में ही है।

रमाकान्त मुसकराया और बैङ्कर-द्वय ने एक स्वर से चिल्लाते हुए प्रतिवाद किया।

हरिनारायण ने कहा—"राधाकृष्ण घर में ही है। उसे गिरफ़्तार करने के लिए मिस्टर रीड को ख़बर देनी चाहिए। मैं उन्हें फोन करता हूँ।" अब उन्होंने फोन उठा लिया और सारी घटना उन्हें बतलाते हुए जल्दी आने के लिए कहा। यह भी कह दिया कि एक ताले के कारीगर के साथ आवें; क्योंकि जिस घर में हम लोग हैं उसका दरवाज़ा बलपूर्वक खोलना आसान नहीं है।"

कोई आध घण्टे में किसी के आने की आहट सुन पड़ी। हरिनारायण ने उधर कान लगाकर कहा—"जान पड़ता है, मिस्टर रीड ही हैं!" दोनों बैङ्कर जल्दी से दरवाज़े की ओर बढ़े तो रमाकान्त ने ऊँची आवाज़ से कहा—"कृपा कर कोई एक क़दम भी न हिले-डुले। जो जहाँ है वह वहीं खड़ा रहे।"

दोनों अपनी जगह लौट आये। तनिक देर में दरवाज़ा खोलकर मिस्टर रीड तेज़ी से कमरे में आये। बोले—"हरिनारायण बाबू! अरे! रमाकान्त भी हैं! बताइए क्या मामला है।"

रमाकान्त ने कहा—"हरिनारायण त्रिपाठी कहते हैं कि सांकोपाञ्ज़ा इसी कमरे में है। आपको भी यह निश्चित रूप से जान लेना चाहिए। मिस्टर शर्मा, कृपा कर आप निचली मंज़िल का एक नक़्शा खींच दे सकते हैं?"

मिस्टर शर्मा टेबल के पास बैठकर एक काग़ज़ पर कुछ लकीरों से कमरों का ख़ाका खींचने लगे। तैयार कर चुकने पर उन्होंने कहा—"लीजिए, क्या इससे काम चल सकेगा?"

शायद रमाकान्त का दिमाग़ ठीक नहीं था। जल्दी से वह टेबल के पास जाते-जाते ठोकर खाकर गिर पड़ा जिससे सारी रोशनाई टेबल पर फैल गई।

"सावधान!" कहकर मिस्टर शर्मा किसी तरह, रोशनाई बचाते हुए, दोनों हाथ ऊपर को उठाकर, कुर्सी पर बैठे रहे। पल भर में हरिनारायण ने उनके दोनों हाथों को रोशनाई में डुबाकर सफ़ेद ब्लाटिङ्ग काग़ज़

पर उनकी छाप ले ली। साफ़-सुथरे काग़ज़ पर जो उँगलियों का निशान बना उसकी ओर देखते ही हरिनारायण ख़ुशी के मारे चिल्ला उठे—"अरे, यह तो राधाकृष्ण की उँगलियों की छाप जैसी है। मिस्टर शर्मा का हाथ—जिसकी विशेषताओं से हमारे हस्तरेखा-परीक्षक तक परिचित हैं—राधाकृष्ण का हाथ है!"

मिस्टर रीड का मुँह सूख गया। वे बोले—"मैं कुछ भी नहीं समझ रहा हूँ।"

शिवचरण वर्मा उठ खड़े हुए। वे अपने साक्षी की ओर देखकर क्षोभ-भरे स्वर में बोले—"मुझे पहले ही यह सन्देह हुआ था। अच्छा, मैं बिदा होता हूँ।"

सब लोग डर के मारे चिल्ला उठे। वर्मा ने कपड़ों के भीतर से एक तेज़ छुरी निकाली और उस समूची को अपने कलेजे में भोंक लिया।

मिस्टर शर्मा ने, इतनी देर बाद, उत्तेजना के साथ कहा—"हाथ की छाप के लिए क्या मुझे गिरफ़्तार किया जाता है? यह सच नहीं है बल्कि हरिनारायणजी की हाथ की सफ़ाई भर है। फिर से मेरी उँगलियों की छाप ले ली जाय और देखा जाय कि उस छाप से इसका सचमुच मेल है या नहीं।" उन्होंने अपना हाथ फैला दिया।

रमाकान्त ने उनके पास आकर कहा—"आपकी यह कोशिश बेकार रही। मैंने आपकी चालाकी देख ली है।" अब रमाकान्त ने उनके कुर्ते की आस्तीन को खींचकर पतले चमड़े के दस्ताने जैसी एक चीज़ मि० रीड और हरिनारायण को दिखलाई।

रमाकान्त ने कहा—"यह आदमी के चमड़े से बनाई गई है। किसी वैज्ञानिक से, हाथ की सब रेखाओं को अक्षुण्ण रखते हुए, यह तैयार कराई गई है। जिसके चमड़े से बनाया गया है यह भी कहना पड़ेगा? राधाकृष्ण के। बदमाश ने एक के बाद दूसरा अत्याचार कर पुलिस की आँखों में धूल झोंकने के लिए ही इस रास्ते का

सहारा लिया है। तभी तो हर एक जगह हम लोगों को राधाकृष्ण की उँगलियों के निशान मिलते हैं।"

मिस्टर शर्मा ने हँसकर कहा—"उपन्यास शुरू किया क्या आपने?"

हरिनारायण ने गरजकर कहा—"शैतान कहीं का! अब और छिपाने की कोशिश क्यों करता है? उससे क्या फ़ायदा? इस बात का मुझे भी आज की रात से पहले सन्देह नहीं हुआ। सन्देह कभी न होता अगर मेरे कपड़ों पर तेरी उँगलियों के निशान न बनते। मिस्टर रीड, हमने ध्यान से देखा है, मि० शर्मा हर वक्त अपना हाथ पीछे की ओर रखते थे। इसके बाद तनिक आगे की घटना का सन्देह हमारे भीतर जम गया। इसी से, रमाकान्त मुझे आँखों से संकेत कर, जब गिर पड़ा और दावात उलट दी तब मौक़ा पाकर मैंने उनकी अँगुलियों के निशान ले लिये। फिर उन्होंने चटपट दस्ताने को मोड़कर अपने कुर्ते के भीतर रख लिया। मिस्टर रीड, न सिर्फ़ नक़ली राधाकृष्ण को वरन् दुर्दमनीय डकैत सांकोपाञ्ज़ा को मैं आपके हाथ सौंपता हूँ।"

आख़िरी वक्त था। शर्मा को दोनों हाथ ऊपर उठाये रहनेकी चेतावनी देकर उस की ओर बढ़ते हुए मिस्टर रीड ने कहा—"सांकोपांञ्ज़ा, मैं तुम्हें न्याय और क़ानून के नाम पर गिरफ्तार करता हूँ।"

मिस्टर रीड का कहना ख़तम होते न होते शर्मा एक छलाँग में कई पग पीछे हट गये। उनका हाथ लकड़ी के एक हैंडिल पर पड़ा। ठीक इसी समय मिस्टर रीड फ़र्श पर गिर पड़े। हरिनारायण और रमाकान्त उनकी मदद के लिए जाने लगे। हरिनारायण भी एकाएक वैसे ही गिर पड़े। रमाकान्त चिल्ला उठा—"हाय! हम लोग फन्दे में पड़ गये। सांकोपाञ्ज़ा भाग रहा है।"

लगातार कोशिश करने पर भी रमाकान्त फिर एक भी क़दम आगे नहीं बढ़ सका। जैसे किसी ने फ़र्श के साथ उसकी उँगलियों को कील से जड़ दिया हो। सांकोपाञ्ज़ा बिजली की तरह तेज़ी से एक छलाँग

में मिस्टर रीड के गिरे हुए शरीर को लाँघकर दरवाज़े के पास पहुँचा और उसे खोलकर बाहर निकल गया।

बाहर से व्यङ्ग-भरी ज़ोरों की हँसी सुन पड़ी—"सांकोपाञ्ज़ा भाग रहा है।"

रमाकान्त ने कहा—"जूते उतार दीजिए।" पिस्तौल हाथ में लिये नंगे पैर वह पागल की तरह घर से बाहर निकल गया।

कहाँ है सांकोपाञ्ज़ा! बाहर फाटक के समीप मिस्टर रीड द्वारा लाये गये दो पुलिस के सिपाही खड़े मज़े से गप लड़ा रहे थे।

रमाकान्त कह रहा था—"मिस्टर रीड, आपको उस तरह फ़र्श पर गिरते देखकर ही मैंने समझ लिया था कि सांकोपाञ्ज़ा ने हैंडिल को घुमाकर घर के फ़र्श पर बिजली की धारा प्रवाहित कर दी है। उस शैतान ने शायद पहले से ही अपने बचाव का प्रबन्ध कर लिया था। शायद उसके जूते के तले में कोई ऐसी चीज़ थी, जिससे बिजली की धारा स्पर्श न कर सके।"

मिस्टर रीड ने कुछ भी नहीं कहा। हरिनारायण ने उदास होकर कहा—"लेकिन इस बार हम लोगों का कुछ भी दोष नहीं था। ख़ैर, देखा जायगा। भविष्य में हम लोगों को फिर उससे लड़ना पड़ेगा।"

——